October 2015
Volume I
Issue 3
E-ISSN : 2454-2717

gacc journal

Covering Researches in all fields of Humanities, Languages, Social Services, Commerce and Management

'A' Grade

THE OFFICIAL PUBLICATION OF SHRI ATAL BIHARI VAJPAYEE GOVERNMENT ARTS AND COMMERCE COLLEGE, INDORE

EDITOR IN CHIEF :

Dr. Roshan Benjamin Khan
Head, Department of English
SABV GACC, Indore (M.P.)
email: roshanisuper@yahoo.co.in

EDITORIAL BOARD :

Dr. Anoop Vyas
Head, Department of Commerce
SABV GACC, Indore (M.P.)
email: anoopvyas29@gmail.com

Dr. Ashwini Sharma
Professor, Department of Political Science
SABV GACC, Indore (M.P.)
email: drsharmaashwini@gmail.com

Dr. Ashish Pathak
Professor, Department of Commerce
SABV GACC, Indore (M.P.)
email: ashishpathakgacc@gmail.com

Dr. Pramod Upadhyay
Professor, Department of Hindi
SABV GACC, Indore (M.P.)
email: pramodupadhyaya26@gmail.com

Dr. Pramila Shere
Professor, Department of History
SABV GACC, Indore (M.P.)
email: pramila_shere@rediffmail.com

MAILING ADDRESS :
Shri Atal Bihari Vajpayee Government Arts & Commerce College
A.B. Road, Near Bhanwarkuan Square, Indore (M.P.)
Postal Code: 452017
email: principalgaccindore@rediffmail.com
Website: www.gaccindore.org

gacc journal
October 2015, Volume-1, Number-3

TECHNICAL ASSISTANCE :

Bhupendra Verma

INDEX

1.	डॉ. मनीषा सिंह मरकाम	परम्परागत गुदना से आज तक	4-11
2.	डॉ. कमलेश मेहर	''अस्तित्ववाद एक दृष्टि''	12-19
3.	डॉ. गीता चौधरी	मालवा में प्रागैतिहासिक चित्रकला	20-22
4.	डॉ. भगवत राय	उच्च शिक्षा में महिलाओं की सहभागिता एवं सम्भावना	23-26
5.	डॉ. सरोज अजय	भारत में व्यापार प्रबंधन में ई–कामर्स की भूमिका	27-30
6.	डॉ. श्रद्धा मालवीया एवं श्री भरत कुमार मीणा	जनजातियों की सामाजिक, आर्थिक स्थिति एवं विकास कीचुनौतियों का समाजशस्त्रीय अध्ययन	31-39
7.	डॉ. त्रिपत कौर चावला	इंदिरा सागर बाँध परियोजना का समिक्षात्मक अध्ययन	40-50
8.	डॉ. माधुरी शेरे	सन् 1857 की क्रांति का मुखपत्र 'पयामे आजादी'	51-55
9.	डॉ. प्रमिला शेरे	भोपाल की नवाब सिकन्दरजहाँ बेगम	56-62
10.	डॉ. आशा अग्रवाल	हिन्दी विज्ञान पत्रकारिकता : वर्तमान परिदृश्य	63-66
11.	डॉ. (श्रीमती) सुदीप छाबड़ा	जनांकिकीय लाभांश के माध्यम से आर्थिक विकास	67-75
12.	डॉ. श्रीमती शिवा खण्डेलवाल	1857 के स्वतंत्रता संग्राम में रानी अवन्तीबाई लोधी का योगदान	76-80
13.	डॉ. विमला गोयल	युवावस्था में समाजीकरण की प्रक्रिया (सैद्धान्तिक बनाम व्यवहारिक परिप्रेक्ष्य)	81-86
14.	डॉ. सुलभा काकिर्डे	महिला सुरक्षा से जुड़े कानून और महिला सशक्तिकरण	87-90
15.	डॉ. नलिनी जोशी	वैदिक साहित्य में राजनीतिक व्यवस्था	91-94
16.	डॉ. एस. चक्रवर्ती	आवश्यकता है एक विश्व भाषा की	95-97
17.	Dr. S. S. Thakur	English Language Learning – An Experimental Approach	98-105
18.	Dr. Pankaja Acharya	Contemporary Poetry from Northeast India: Paradise of Ecology	106-113
19.	Dr. Rajendra Singh Waghela	Potentials of Employment and Economy through Tourism: A Study of Historical Place Mandu (M.P.)	114-121
20.	Mrs. Usha Yadav	Dr. Ambedkar's Perception on Caste System in India	122-126
21.	Dr. Sushma Shukla	Effectiveness of the Inquiry Approach in Learning History	127-133
22.	Dr. Renu Sinha	Archetypes in Panchtantra and in Aesop's Fables (A Comparative Study)	134-139
23.	Dr. Alka Tomar	Gender Issues in Mahesh Dattani's Tara	140-143
24.	Dr. Roshan Benjamin Khan	Anita Nair's *Ladies Coupe*	144-150
25	Dr. Rajendra Kumar Bhevandia	Amitav Ghosh- The Past master	151-155
26	डॉ. संध्या गोयल	बाल श्रमीको की समाजिक स्थिति का समिक्षात्मक अध्ययन	156-162
27	डॉ. रितेश महाड़िक	खेल – कुद और मानव सामाजिक विकास	163-166
28	संदीप टाँक	डिजिटल भारत कार्यक्रम – डिजिटल लॉकर एक सेवा	167-171
29	सोहन गुर्जर	डिजिटल इंडिया – एक सकारात्मक संकल्पना	172-176
30	राजेश दांगी	स्वच्छ भारत अभियान	177-180

परम्परागत गुदना से आज तक

डॉ. मनीषा सिंह मरकाम
सहायक प्राध्यापक – हिन्दी
श्री अटल बिहारी वाजपेयी
शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय
इन्दौर (म.प्र.)

शब्दकुंजी – गुदना – सुई से शरीर पर आकृति बनाना, अक्षय – जिसका नाश न हो, नीलकंठ – भगनवान शंकर, खाल – चमड़ी, अरण्यवासी – जंगल में रहने वाले लोग, टारई – बेटी, गोडूबा – गुदना, गोदई – गुदाना, ढुक्खो – दुख, पीड़ा।

प्राचीन संस्कृति के अभ्यास वेत्ताओं का मानना है कि गोदने की प्रथा अत्यंत प्राचीन है। भारत के सम्पूर्ण आदिवासी और ग्रामीण क्षेत्र में गोदना शारीरिक अलंकरण के रूप में प्रचलित है। भारत के पूर्व से पश्चिम तक और उत्तर से दक्षिण तक प्रायः सभी क्षेत्रों में गोदना अलंकरण विद्यमान है। मध्यप्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र में बसने वाली कृषक एवं दस्तकार जातियों में भी गोदने का प्रचलन व्यापक रूप से प्रचलित था। व्यावहारिक तौर पर आजकल गोदने की प्रथा बंद जैसी हो गई है। यद्यपि इसका प्रचलन आज भी आदिवासी समाज में चल रहा है। ग्रामीण तथा शहरी जनता अब इसे पसंद नहीं करती है। यद्यपि टैटू याने गोदना करवाने की आधुनिक तकनीक से अस्थायी रूप से गोदना करवाने की मेथड आने से आज फैशन के तौर पर युवा वर्ग इसका उपयोग कर रहा है। ‘‘भारतीय लोक–संस्कृति में तिल और गुदना, ये दोनों ही सौन्दर्य के प्रमुख उपादान माने गए हैं। इनसे सुंदरता में पर्याप्त अभिवृद्धि होती है तथा ये ही खूबसूरती के सागर में ऐसा अनोखा तूफान लाते हैं जिस से सौंदर्य–प्रेमियों के सरस मानस में कभी आसानी से बैचेनी उत्पन्न हो जाती है तो कभी सलोनी रमणीयता से इठलाने लगती है।’’

अंग–आलेखन (गोदने) की प्रथा अत्यंत पुरातन है। गोदने के पीछे का मुख्य उद्देश्य सौन्दर्य वृद्धि का रहा है। कुछ आदिम कबीलों में यह प्रथा नितांत भिन्न स्तर पर आनुष्ठानिक महत्व रखती है। किसी समय बिना गुदा अंग स्त्रियों के लिए लज्जा का विषय था। अर्द्ध सभ्य एवं आदिम जातियों में आज भी इस प्रथा का प्रचलन है। चित्रांकन की सहज प्रवृत्ति की भांति, शिक्षा और संस्कार के बाद भी गुदना ने मनुष्य की ललक और विश्वास को बांधा है। शरीर पर प्रिय और उपास्य वस्तुओं को अंकित करने के मोह से

मनुष्य की प्रवृत्ति कभी भी मुक्त नहीं हो पाई है। बीसवीं सदी के नृतत्व विदों का दृढ़ विश्वास है कि आदिम मानव वस्तुओं का प्रतीकांकन इसी आशय से करता होगा कि अंकित वस्तुओं की अभिवृद्धि हो। चित्रगत वस्तुएँ जीवन के क्षेत्र में उपादेय वस्तुओं का प्रतिनिधित्व करती है किन्तु ऐसा लगता है कि यह मुख्य रूप से पहचान के उद्‌देश्य से ही इनका प्रचलन हुआ है। गुदना चिन्हों के सामाजिक महत्व को भी कुछ जातियाँ स्वीकार करती है। चिन्हित आकृतियाँ जातीय प्रतीकों के रूप में पहचानी जाती है। मध्यप्रदेश और राजस्थान की भील स्त्रियाँ आँखों के दोनों किनारों पर 'चिरल्या' नामक दो आड़ी लकीरें गोदती हैं। ''सौन्दर्य–प्रसाधनों को कई दृष्टियों से चित्रित किया है लेकिन लोक–कवियों की रसीली अनुभूतियों से चर्चित ये दोनों सौन्दर्य–उपकरण अद्‌भुत रसिकता से अंकित हुए हैं। सच तो यह है कि रसास्वादन की बहुमुखी प्रतिभा जो लोक कवियों में जाग्रत है, वह अत्यंत दुर्लभ है। यही कारण है कि लोक–काव्य की व्यापक चिंतनधारा का प्रतिफलन सर्वत्र अनुकूल है। लोक–मानस का सहज अनुकरण लोक कवियों की वाणी में ही उपलब्ध है और इसलिए यह काव्य अनुतोष का प्रधान एवं उदात्त रूप है।'' ये लकीरें, अवश्य ही आँखों का पैना बनाती है और लम्बी आँखों के सौन्दर्य बोध को तृप्त करती हैं। पर इनका प्रचलन मात्र भील स्त्रियों में ही इसलिए है कि एक तरह से ये जातीय चिन्ह् को व्यक्त करती है। इन लकीरों को, जिन्हें 'आड़े' भी कहा जाता है, विवाह के पूर्व गोदवा लिया जाता है। विवाह के बाद गुदवाना अच्छा नहीं समझा जाता। आदिवासी और कृषि जीवी वर्गों में जातीय महत्व की रक्षा वैयक्तिक उपलब्धि मानी जाती है। गुदना के माध्यम से ऐसी जातियाँ वस्तुतः प्रतीकात्मक संतोष अनुभव करती है। हर व्यक्ति जाति से जुड़ा रहना चाहता है। ''भगवती पार्वती के पति भगवान् नीलकंठ आकर विराज गए हों – इस प्रकार चंद्रमुखी राधा के मुख पर तिल बड़ा ही सुहावन लगता है।'' गुदना इस माने में उसे सुरक्षा भाव से सम्पृक्त करता है। यही कारण है कि कुछ गुदना चिन्ह् शताब्दियों से अपने आदिम रूप में ही स्वीकृत चले आते हैं। जो चिन्ह् जाति विशेष के प्रिय होते हैं उन्हें दूसरी जातियों में नहीं देखा जाता है। भीलों के कतिपय गोदने उनके ही समाज में परम्परा से चले आ रहे हैं। उन चिन्हों में अरण्य जीवी जाति के सभी प्रभाव स्पष्ट हैं। घर की वस्तुएँ, जिसका जल, अन्न और पारिवारिक मूल्यों से संबंध है, प्रायः कृषि जीवी जातियों में गुदना का रूप ले लेता है। आभूषण, वृक्ष, कुंआ, बावड़ी, कुड़ी, अनाज, चांद–सूरज, जल–पात्र, नेत्र आदि मध्यमवर्ती भारत के ग्रामों की प्रमुख गोदना विषयक सामग्री है। ''लोक–कवि

मूलचंद (ग्राम छिकहरा, मोहवा के निवासी) की फागों में तिल का बहुरंगी चित्रण हुआ है। गोरी के गोरे गाल पर तिल इन्हें अधिक मनभावना लगता है। कुछ समय के लिए उसे जी भरकर देखने के लिए वे घूँघट के पट को मुख से अलग करने हेतु संकेत कर रहे हैं। मृदुल मुस्कान के साथ चितवन में यह काला तिल बड़ा मोहक लगता है जिसे देखकर मन भर जाता है। हिन्दी सूफी प्रेमाख्यानों में सौंदर्य – वर्णन के प्रसंग में तिल का चित्रण लौकिक और अलौकिक दोनों दृष्टियों से किया गया है। संस्कृत साहित्य में तिल का चित्रण संभवतः नहीं पाया जाता जबकि फारसी के अनेक सूफी काव्यों में कपोल पर तिल का चित्रण है। कई फारसी काव्यों में तिल का दार्शनिक पक्ष भी प्रस्तुत किया गया है। तिल के संबंध में लोक–प्रचलित यह विश्वास उल्लेख है।

तिल भौंरी लहसन मसा, होय दाहिने अंग।
चले जत्व वन खंड में, तऊ लच्छमी संग।।

मनुष्य के दाहिने अंग में तिल का होनालक्ष्मी देवी की प्रसन्नता का द्योतक है। इसी प्रकार नारी के बाएँ अंग में इसका अस्तित्व लाभदायक बताया गया है।''

पहले भी इस गोदने गुदवाने के पीछे सामान्यतया मनुष्य की विशेष तौर पर स्त्रियों की पहचान के लिए गोदनों के रूप में स्त्री का नाम उसके पति के नाम से अंकित कर दिया जाता था। ''एक ऐसी ही बुंदेली फाग उद्धृत की जा रही है जो तिल से संदर्भित है एवं तिल की श्यामता से कपोल के सुखद सौंदर्य से अनुप्राणित है। यहाँ न दार्शनिकता की गंभीरता है और न प्रबोधन की प्रबुद्धता केवल इस विभोरता की मादकता यहाँ पग–पग पर उल्लेखित है – बुंदेलखंड के प्रसिद्ध लोक–कवि ईसुरी अपनी प्रेमिका के बाएँ गाल पर स्थित तिल को देखकर कई सलौनी कल्पनाएँ करते हैं और उससे आहत स्वमन की पीड़ा पर गहरा अनुभव भी कर बैठे हैं।'' उस समय स्त्रियों की बौद्धिक स्थिति बहुत सामान्य स्तर की होती थी तथा उन्हें घरों पर ही रखा जाता था। अपनी इस स्थिति के कारण से महिलाएँ कतिपय बार घर के रास्ते भूल जाती। ''बाएँ गाल पर तिलों से भी हलकी तिल की झलक बड़ी प्यारी लगती है। ऐसा लगता है कि कमल पर भौंरा ही आकर बैठ गया हो अथवा चंद्रमा के ऊपर यमुना जल की एक बूंद गिर पड़ी हो उसे देखकर तो ऐसी पीड़ा होती है मानों दिलों पर संहारक आरी का किसी ने प्रहार ही कर दिया हो।'' ऐसे समय पर उनकेहाथ पर लिखा नाम उनकी पहचान का कार्य करता था। औरतों का संसार चार दिवारों तक ही सीमित था। वे अपने घर से गिनती के अवसरों पर ही निकलती थी।

''ईसुरी के पिता लोक–कवि गंगाधर तो राधा के गोरे गाल पर तिल को देखकर कहते हैं कि यह तो ऐसा लगता है कि मानों पूर्ण–चंद्र में काली रात का अंकुर अंकुरित हो गया हो, अथवा निर्मल दर्पण के ऊपर अलसी का फूल गिर गया हो, अथवा फारसी के कवियों के मानस में इस काले तिल के अनेक चमत्कार प्रदर्शित किए हैं। खाल (तिल) यदि रमणी की खाल (शरीर) को लावण्यमय बनाता है तो कभी इसे विरह से प्रपीड़ित कर जीवित तन को प्राणहीन खाल के रूप में भी परिणत कर सकता है।'' उर्दु का यह शे'र प्रेमियों की गोद में पला हुआ शेर सा ही दिखाई देता है –

तेरे रूखसार पर काला जो तिल है।
निशाने हुस्न आशिक का जला दिल है।।

गोदना (गुदना) सौंदर्यवृद्धि का तो एक विशिष्ट साधन माना ही गया है लेकिन इसके साथ कई पुरातन मान्यताएँ, लोक–विश्वास, मूढ़ाग्रह, कुल देवी–देवता प्रतीक आदि भी संबद्ध है। कुछ नृतत्वविशारदों का कथन है कि गुदना का प्रचलन अनुसूचित जातियों में ही है – पर ऐसी बात नहीं है। समस्त भारतीय प्राचीन एवं अर्वाचीन साहित्य में गोदना का यथावसर उल्लेख हुआ है। विदेशी भी इस अलंकरण की उपेक्षा नहीं कर सका। विधवा स्त्रियों के कपाल पर भी गोदना कर दिया जाता था ताकि यह पहचान में आ जाये कि यह स्त्री विधवा है।

गोदने के संबंध में डॉ. ठाकोरलाल भाणाभाई का कथन है। गोदना गुदवाने की प्रथा स्त्री वर्ग में बहुत अधिक प्रचलित है। पुरूष गोदना नहीं गुदवाते। स्त्रियाँ इसे स्थायी गहना समझती हैं और उनका विश्वास है कि मृत्यु के समय अन्य आभूषण तो हटा दिए जाते हैं परन्तु गोदना ही ऐसा आभूषण हैं जो मृत्यु के बाद भी साथ रहता है। इसे दो बार गुदवाया जाता है। पहली बार शादी के पहले छोटी अवस्था में लड़कियाँ गुदवाती हैं। इस समय केवल तीन बिन्दु लगाये जाते हैं। पहला ठड्डी में, दूसरा नाम के पास व तीसरा मस्तक पर। दूसरी बार शादी के बाद जब लड़की गौने से पहले अपने मायके में ही रहती हैं, अपने शरीर के अंगों में गोदना गुदवाती है। गोदने के लिए प्रत्येक वर्ष शरदकाल में गोधारिन या अगरनी गाँव में आती है जिसका काम गोदने लगाना ही होता है। गोदने में लगाने के लिए स्याही गोधारिन खुद बनाकर लाती है। वह एक सुई भी रखती है, जिससे छेद करने के बाद स्याही लगा देती है। गुदवाते समय काफी पीड़ा होती है, पर बाद में ठीक हो जाती है। स्त्रियाँ दोनों पाँवों में अँगूठे से लेकर छोटी अंगुली तक तीन स्थानों में

तीन–तीन बिंदुएँ लगवाती है। एड़ी से ऊपर चारों ओर तीन–तीन बिंदुएँ लगाए जाते हैं। दोनों हाथों में हथेली के पीछे तीन बिंदु वाले छः निशान व अँगूठे के नीचे बिच्छू का निशान बनवाया जाता है। कलाई के चारों ओर कोहनी के नीचे बाजू में थोड़ी–थोड़ी दूर पर त्रिभुज आकार में निशान लगवाए जाते हैं। बाजू के ऊपर एक चीतल या दो चीलों की आकृति बनवाई जाती है। उससे ऊपर ठीक कंधों के नीचे भुजा में फिर त्रिभुज आकार के पाँच या छः चिन्ह् अंकित किए जाते हैं। कभी–कभी स्त्रियाँ बाजार में गोदने गुदवाती हैं और पति का नाम तथा सीता–राम आदि लिखवाती हैं। यह गोदना मशीन द्वारा गोदा जाता है। प्राचीन संस्कृति के विद्वानों की मान्यता है कि गोदने की प्रथा अत्यंत प्राचीन है। वस्तुतः अंग को सुंदर बनाने की भावना ही गोदने में निहित है। निम्न जातियों में आज भी यह प्रथा चित्रांकन की प्रवृत्ति की भाँति विद्यमान है। पोलीनेसिया में तो यह प्रथा एक कला के रूप में अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँची है। इस के ठीक विपरीत ऑस्ट्रेलिया और अफ्रीका के मूल निवासियों में यह अपने मूल स्वरूप में अभी तक है। अरब की स्त्रियों में यह एक फैशन की तरह है। अफ्रीका में जिसके शरीर पर जितने अधिक चिन्ह् पाए जाते हैं, वह उतना ही अधिक युद्धप्रिय और साहसी माना जाता है। यह सब कथन कुछ सीमा तक भारतीय आदिवासी जीवन में भी उपयुक्त माना गया है। गोदने केवल स्त्रियों के शरीर पर ही किए जाते थे। पुरूष वर्ग के लिए इसकी आवश्यकता नहीं मानी जाती थी। पुरूष वर्ग में से किसी की इच्छा हो गई तो वह गोदने करवा लेता था किन्तु इस तरह गोदने करवाने वाले पुरूषों की संख्या नगण्य होती थी। ''भारतवर्ष की ग्राम–सभ्यता में गोदना, विशेषकर स्त्रियों के लिए, आज भी आकर्षण का विषय है। गोदना भी अन्य आंगिक अभिव्यक्तियों की भाँति सौभाग्यसूचक है।''

वास्तव में गोदने के चिन्ह्रों को वस्तुओं के प्रतीक रूप में चित्रित किया जाता रहा है। एक वृद्धा से इस विषय में पूछा गया तो उत्तर देते हुए उसने बताया – ''नाना, दुनियाँ में सब कई धरयौ जई जास, कँई साथे जाय।'' बेटा, दुनिया में सब कुछ धरा रह जाता है, कुछ साथ नहीं जाता। यही तो हैं जो तन के साथ जाते हैं। गोदने के लिए आजकल मशीनों का प्रयोग आरंभ हो गया है पर गाँवों में अभी भी तोरिए के पत्ते का रस या धतूरे का दूध तथा काजल अंग पर लगाकर सुई द्वारा निरंतर गोदने से उस स्थान पर चिन्ह् बन जाता है। इसके अतिरिक्त अन्य प्रकार के पत्तों का रस भी काम में लाया जाता है। अंग पर वे ही वस्तुएँ प्रायः अंकित की जाती है, जिन का जीवन से सीधा सम्पर्क है। भारत के

आदिवासियों में गोदने के संबंध में कई लोक–विश्वास तथा धारणाएँ प्रचलित हैं। गोंडो आदि की मान्यता है कि जो बालक चलने या दौड़ने में कमजोर होता है उसकी जाँघ या उसके आसपास गोदने से वह वह चलने–दौड़ने में पूर्ण सक्षम हो जाता है। यद्यपि यह सौंदर्यवर्धक अवश्य है, फिर भी कतिपय आदिवासी जंघा के ऊपर अश्व तथा जीन के चिन्हों को गुदवाते हैं और इस प्रकार कुलदेव कोड़ादेव के प्रति श्रद्धा प्रदर्शित करते हैं। गण चिन्हों को गुदवाकर अनेक जन–जातियाँ देवताओं के प्रति आस्था अभिव्यक्त करती रहती हैं। हल्वा वनवासी पुत्री के विवाह के पूर्व उसके शरीर को गुदवाना अनिवार्य समझते हैं। मध्यप्रदेश के अनेक वनवासियों का विश्वास है कि गुदवाने से कई शारीरिक रोग निर्मल होते हैं तथा गठिया की पीड़ा गुदवाने से शीघ्र नष्ट हो जाती है।

कभी–कभी किसी सीधे आदमी या बालक के साथ क्रूर मजाक भी कर दिया जाता था। ''अनेक ग्रामीणों की यह मान्यता है कि गुदवाने के बाद ही लड़की को भोजन बनाना चाहिए और जो कन्या बिना शरीर को गुदवाए हुए रवाना बनाती है, उसका भोजन त्याज्य समझा जाता है। अतः ऐसी लड़कियों के बाएँ हाथ में सीता–रसाई का चित्र अंकित किया जाता है।'' उनके हाथों पर 'कम अकल, या नंदून घासीराम', 'मूख राज' जैसे – उपहासात्मक शब्दों को अंकित करवा दिया जाता था। 'मुंडा, कुमार, परधान, उराँव, हो, खासी, हल्का आदि अरण्यवासी अपने–अपने जातिचिन्ह्', 'तारा' को स्त्रियों के ललाट के पास विशेषतः गुदवाते है।'

इस प्रकार गोदना गुदवाने की प्रथा अति प्राचीन है, जिसमें धार्मिक, सामाजिक एवं स्वास्थ्य विषयक अनेक मान्यताएँ चिरकाल से जीवित है। विशेषतः आदिवासी लोक–जीवन में यह परिपाटी उसी प्रकार व्याप्त है, जिस भाँति जल में शीतलता आग में उष्णता एवं दूध में नवीनत समाहित है। सौंदर्याभिवृद्धि का प्रमुख साधन यह गोदना इन अरण्यवासियों की उस विशिष्ट धार्मिक धारणा को परिपोषित कर रहा है, जिसमें अंकित बिन्दु उदाहरण सूर्य, चंद्रमा, झूला बाघ देवता, धरती माता आदि देवी–देवता के प्रति आस्था–निष्ठा साकार बनती है। गहन वनों में विचरण करने वाले इन आदिवासियों के जीवन रक्षा ये ही देवी–देवता करते रहते हैं, ऐसी इनकी अचल मान्यता है। इसलिए स्त्री तथा पुरूष दोनों ही अपने शरीर के विभिन्न अंगों पर उपर्युक्त चिन्हों को गुदवाते हैं और विपत्ति के क्षणों पर इन आराध्यों का विशेष रूप से स्मरण करते हैं। मूलतः गोदने का प्रचलन आदिवासियों में ही था। ''जाओ, तुम इसे बजाकर अपनी जीविका चलाना।'' वह राह में चलने वाला

ढोलिया बन गया। भगवान बड़का ने जिस इन्सान को ढोल दिया वह इन्सान प्रतिदिन ढोल बजाने का अभ्यास करने लगा और एक दिन वह ढोल बजाने में निपुण हो गया। सीमित उद्देश्य की दृष्टि से इसका उपयोग ग्रामीण समाज में भी प्रारम्भ हो गया। ''मुझे भूख लगी है, खाना दो। और हाँ, खाने में भात जरूर होना चाहिए।'' ''भात नहीं बनाया। जो बना है उसे ही खा लो।'' उसकी पत्नी ने कहा। ढोलिया को बहुत क्रोध आया और उसने पत्नी की बहुत पिटाई की। वह बोली – ''मैं बेकसूर हूँ। घर के कामों में समय न मिलने के कारण भात नहीं बना पाई। आज तुमने मुझे मारा इसलिए मैं अपने प्राण त्याग दूंगी।'' उस स्त्री ने अन्न–जल त्याग दिया। वह उपवास करने लगी। एक सप्ताह के बाद उसे काली माता ने दर्शन दिए। काली माता ने उस स्त्री के सारे शरीर पर सरई के काले गोंद से गोदने डाल दिए। वह स्त्री इससे स्वस्थ हो गई और घर लौट आई। ''मैं आज से सौगंध लेता हूँ कि अब कभी लड़ाई–झगड़ा नहीं करूँगा।'' उस दिन के बाद दोनों दम्पत्ति चैन से रहेंगे लगे। माना जाता है कि तब से इंसानों ने शरीर पर गोदना प्रारम्भ किया। दूसरी ओर आदिवासी लोकगीतों का अवलोकन करें तो हम वहाँ काफी लोकगीत गोदने विषय को लेकर हैं।

जैसे –

ए टारई, ए टारई।
गोडुबा ले गोदई, आम गोडुबा ले गोडई।।
इनी जेवर इनी लिजा,
इंगान ठाबडा टारई।
गोजेज बाडोन, डिजा साथोन,
सेनेबा गोडई टारई।
गोडई गोडुबा एपान,
आम ढुक्खो झेलाय टारई।
आले जीबोन हाजेबा ढुक्खो
आरीटेन झेलाय टराई।

हे बेटी, तुम गोदना, गुदवा लो।
ये गहने – वस्त्र तो यहीं रह जाएंगे।
मरने के बाद केवल गुदना ही तुम्हारे साथ जायेगा।

यदि गुदना गुदवाते समय तु गुदने की थोड़ी सा पीड़ा सहन कर और संघर्ष को बिना कठिनाई के सहन कर सकोगी इस प्रकार के कतिपय गीत आदिवासियों के विभिन्न समाजों में प्रचलित है। यह संस्कार उनमें 'गुदावणों' के नाम से जाना जाता है। सामान्य समाज में गोदने का बहुत गौण महत्व रहा है।

''गुदना संस्कार इस समाज की नारियों का श्रृंगार हैं। वृद्ध युवती को अत्यंत प्रिय होता है। गुदना को अक्षय आभूषण माना जाता है। युवक–युवती विवाह के पूर्व ही इसे सम्पन्न कर लेते हैं। समाज में ऐसी मान्यता है कि बिना गुदना के मृत आत्मा को भी शांति नहीं मिलती है। स्त्री और पुरूष दोनों में ही इसका समान रूप से प्रचलन हैं।

बीच के कुछ काल में गुदना प्रथा को सिर्फ आदिवासियों में प्रचलित प्रथा माना जाने लगा था किन्तु वर्तमान समय में यह गुदना प्रथा का मॉडर्न नाम टैटू हो गया है, जो आज हर युवा की ख्वाहिश है। नई पीढ़ी इस टैटू को विभिन्न आकर्षक चित्रों के माध्यम से अपने शरीर पर अंकित करती है और फैशन परस्त होने का दावा करती है। आजकल हीरो–हीरोइन और उभरते हुए कलाकार भी टैटू का प्रयोग बहुतायात में करते हैं। अब इस गुदना प्रथा ने नवीनता का रूप धारण कर सभी का मन मोह लिया है। अब इस गुदना से लोग अच्छी आय भी अर्जित कर रहे हैं। गुदना अच्छी आय का स्त्रोत माना जाने लगा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. चौमासा (चार मास में प्रकाशन होने वाला) : अंक 25 आदिवासी लोककला परिषद – फरवरी जून 1991, भोपाल, पृ. 55, 169, 170
2. आदिवासियों के बीच – श्री चंद्र जैन, प्रकाशक शिवानी बुक्स 4855/24, हरबंस स्ट्रीट, दरियागंज, नई दिल्ली – 110002, प्रथम संस्करण – 2007, पृ. 18, 19, 20, 21, 22, 23
3. आदिवासी लोक कथाएँ – शंकर सोनाने, अखिल भारतीय, 3014, चर्खेवालान, नई दिल्ली – 110006, प्रथम संस्करण, 2008, पृ. 112
4. भिलाला जनजाति के लोकगीतों का अनुशीलन, 2008 – गुलाबसिंह डावर, पृ. 42–43

''अस्तित्ववाद एक दृष्टि''

डॉ. कमलेश मेहर
अतिथि विद्वान, दर्शनशास्त्र
श्री अटल बिहारी वाजपेयी
शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय,
इन्दौर (म.प्र.)

'अस्तित्ववाद' अथवा अस्तित्ववादी विचार से परिचित होने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि 'अस्तित्ववाद' से साधारणतः किस प्रकार का विचार सूचित हो रहा है। इस प्रकार के निर्धारण सरल नहीं है, क्योंकि अस्तित्ववाद कोई 'वैचारिक सम्प्रदाय' 'School of Thought' नहीं है। 'अस्तित्ववाद' 'Existentialism' पूर्णतया निश्चित एवं सर्व सम्मत सिद्धांतो को प्रतिपादित करने की चेष्टा नहीं है। बल्कि इसका आविर्भाव तो इस प्रकार के प्रयत्नों के विरुद्ध उनके प्रतिवाद में ही होता है।

प्रत्येक अस्तित्ववादी विचारक एक प्रकार से पूर्णतः स्वतंत्र चिंतक है। हर ऐसे विचारक का विचार दूसरे विचारक के विचार से स्पष्टतः भिन्न है। अतः इन सभी विचारों में सामान्य बिन्दुओं की तलाश एक कठिन कार्य है।

दर्शन का इतिहास लिखने वालो ने भी अस्तित्ववाद की कई प्रकार से व्याख्याएँ की हैं, वो सभी व्याख्याएँ इसकी जटिलता को और बढ़ा देती हैं।

विद्वानो तथा आलोचकों ने अस्तित्ववाद को स्पष्ट करते हुए अनेकों प्रकार से उसकी व्याख्याएँ दी हैं। कुछ लोगों ने इसे 'अकर्मण्यता' 'Inactivism' का पोषक कहा है, तो कुछ इसे 'वैयक्तिक स्वतंत्रता का भयावह समर्थक' 'Dangerous Justification of Human Liberty' कहते हैं। कुछ लोगों ने इसे ''आपात स्थिति का चिंतन'' 'Philosophy of Crisis' कह कर इसकी सर्वकालिक उपायदेयता पर प्रश्नचिन्ह् लगाया है।

फ्रांसीसी साहित्यकार एवं दार्शनिक ज्याँ पाल सार्त्र 'Jean Paul Sartre' की प्रसिद्धि एवं उनके दर्शन के महत्व से, उसकी महत्ता से बौखलाए लोगों ने इसे ''चायखाने या कॉफी हाऊस का दर्शन'' 'Café-philosophy' कह कर टिप्पणी तक कर दी है।

सम्पूर्ण विश्व में अस्तित्ववाद को बड़ी सुगमता से विभिन्न उपाधियाँ प्रदान की गई हैं, जैसे शून्यवाद या नास्तिवाद Nihilism, निराशावाद Pessimism, मानववाद Humanism, 'उत्कट व्यक्तित्ववाद' 'Radical Individualism' आदि। कभी–कभी इसे 'अश्लील दर्शन'

'Vulgar Philosophy' कह कर लांक्षित करा गया। इन सब टिप्पणियों से, उपाधियों से एक बात पूर्णतः स्पष्ट हो जाती है कि अस्तित्ववाद विभिन्न आयामों एवं विचारों का दर्शन है।

ये कथन व टिप्पणियाँ अस्तित्ववाद के वास्तविक स्वरूप को स्पष्ट करने में सक्षम नहीं है। इनमें से कुछ तो अस्तित्ववाद के स्वरूप को पूर्णतः नहीं समझने के कारण या इसे विकृत करने के लिए और केवल कुछ आकस्मिक साहचर्यों को देखकर इस पर लगायी जाती है।

वस्तुतः अस्तित्ववाद कोई 'वाद' नहीं है यह एक दृष्टि है। अस्तित्ववाद विभिन्न प्रकार की मानवीय स्थितियों को देखने का एक नवीन प्रयास है। अस्तित्ववाद की इस मूल 'दृष्टि' की मौलिकता तथा नवीनता में ही इसका प्रभाव है, इसका सार है। अस्तित्ववादी दृष्टि की बातों में ही एक विचित्र प्रकार की आत्मीयता को बोध होता है। यह बातें सामान्य से विशेष सभी प्रकार के मनों को स्पर्श करती है। इसलिए हम यह कह सकते हैं कि यह अलग दृष्टि है।

यहाँ पर एक महत्वपूर्ण बात का उल्लेख करना आवश्यक है कि वाद एवं दृष्टि में अंतर है। 'वाद' यदि खण्डित हो जावे तो 'वाद' की सार्थकता समाप्त हो जाती है। लेकिन 'दृष्टि' खण्डित नहीं हो सकती है वह 'यथेष्ट' या 'अयथेष्ट' हो सकती है, इसका पूर्ण निरसन संभव नहीं है। 'दृष्टि' एक प्रकार से एक 'झरोखा' खोल देती है और जब कोई उस झरोखे से देखे तो उसे उसी प्रकार के दृश्य दिखाई देंगे, जो उस झरोखे के अनुरूप हैं। अतः अस्तित्ववाद को किसी वैचारिक सर्वसम्मत मत या किसी दार्शनिक सम्प्रदाय के रूप में समझने का प्रयत्न ही निर्धारक है इसको समझने का अर्थ अस्तित्ववादी दृष्टि को स्पष्ट करना है।

अस्तित्ववाद या कहें कि अस्तित्ववादी 'दृष्टि' की विलक्षणताओं के कारण ही दर्शन के क्षेत्र में इसका प्रवेश साहित्य के माध्यम से होता है। इस अस्तित्ववादी विचारधारा या अस्तित्ववादी दृष्टि का प्रतिरूपण साहित्यिक रचनाओं, कहानियों, नाटकों, उपन्यासों, कविताओं आदि में बड़े रोचक सार्थक एवं मार्मिक तरीके से करना संभव था और अस्तित्ववादी विचारकों ने ऐसा किया भी है। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से अपने पात्रों के मानव के अंतर्मन का स्पष्ट चित्रण किया। इसका परिणाम यह हुआ कि लोगों को इन साहित्यिक रचनाओं में अपनी छवि दिखाई दी, इस प्रकार के पात्रों की भूमिकाएँ

व्यक्तियों के लिए एक 'आइने' के समान हो गई। यह प्रभाव स्वाभाविक ही था, कि व्यक्ति को अपना प्रतिरूप जिसमें दिखाई देता है उसका उस पर प्रबल प्रभाव दिखता है।

यह अस्तित्ववाद की प्रथम झांकी थी। इसके फलस्वरूप लोगों में इसके प्रति अभिरूचि बढ़ी, लोगों ने देखा कि इन 'झाँकियों' के पीछे एक 'विशिष्ट' दृष्टि है। जिसे विचारकों ने बड़ी मेहनत एवं लगन से तराशकर प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न किया है। अब लोगों का ध्यान उन मूल विचारों की और केन्द्रित हुआ जिनमें मानव की मानवता, व्यक्ति के व्यक्तित्व संबंधी प्रश्नों को उठाया गया था। अब शीघ्र ही अस्तित्ववाद बीसवीं शताब्दी के एक प्रतिष्ठित दर्शन के रूप में अवतरित होता है।

इसके विभिन्न विचारकों की पुस्तकों का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद होने लगता है। इसी विषय पर स्वतंत्र रचनाएँ भी होने लगती हैं। इस प्रकार बीसवीं शताब्दी के तीसरे एवं चौथे दशक में अस्तित्ववाद विश्व के एक नवीन दर्शन के रूप में प्रतिष्ठित एवं स्थापित हो गया।

प्राचीन काल से आज तक दर्शन शास्त्र में प्रत्येक स्थान पर अस्तित्व की समस्याओं पर अस्तित्व संबंधी प्रश्नो पर विचार किया जाता है। भारतीय उपनिषदों की मूल समस्या भी यही है कि मनुष्य में वह तत्व क्या है जिससे मनुष्य का सच्चा अस्तित्व माना जा सकता है। पूर्व तथा पश्चिम में प्रत्येक दर्शन विधा विभिन्न पध्दतियों से मनुष्य के अस्तित्व संबंधी प्रश्नों पर विचार कर रही है।

अस्तित्ववादी दर्शन अथवा अस्तित्ववादी दार्शनिक सम्प्रदाय की विशिष्टता इसे समकालीन दर्शन में सबसे महत्वपूर्ण स्थान दिलवाती है। क्योकि अस्तित्ववादी दर्शन की अपनी विशिष्ट विशेषताएॅ है। अस्तित्ववाद दार्शनिक समस्याएॅ में सत् ... से अधिक सम्भूति . . पर सामान्य ...से अधिक विशेष ... पर और ... सारतत्व से अधिक .... पर बल देता है।

कीर्केगार्ड के शब्दो में मै इसाई किस प्रकार बनूॅगा यह अस्तित्ववाद की मुख्य समस्या है । नास्तिकता वादी यहॉ इसाईयत के स्थान पर प्रामाणिक सत् ... Authentic Being शब्द का प्रयोग कर सकता है। इस प्रकार अस्तित्वाद ज्ञान Knowledge और व्याख्या Explanation के स्थान पर क्रिया .... और चुनाव ... पर जोर देता है। क्या..... के स्थान पर कैसे ... को महत्वपूर्ण मानता है।

डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार ''अस्तित्ववाद एक प्राचीन प्रणाली के लिए नया नाम है''।

इसी बात को ब्लैकहेम अन्य शब्दो में कहते है कि ''यह प्रोटेंस्टेंट प्रकार के व्यक्तिवाद की आधुनिक शब्दो में पुनः स्थापना प्रतीत होता है। जो कि पुर्नजागरण युग के अनुभवी व्यक्तिवाद अथवा आधुनिक उदारतावाद अथवा एपीक्यूरस के व्यक्तिवाद और रोम या मास्को तथा प्लेटो की सार्वभौम व्यवस्था के विरुध्द लडता हुआ प्रतीत है। यह आदर्शो के संघर्ष में मानव अनुभव के आवश्यक सोपानों मे से एक समकालीन पुनर्जागृति है, जिसे इतिहास ने अभी समाप्त नही किया है।

अस्तित्ववाद क्या है? अस्तित्ववाद बीसवीं शताब्दी का वह दार्शनिक सिध्दांत या दृष्टिकोण है जिसमें मनुष्य के व्यक्तित्व के महत्व एवं और उसकी स्वतंत्रता को स्वीकार किया गया है। अस्तित्ववाद में दर्शन के मूल सिद्धांतों की अपेक्षा मानव मूल्यों के नये अर्थ बताये गये हैं। अर्थात् मनुष्य अपने व्यक्तित्व का निर्माण अपने ही प्रयत्नों से करता है। यह मानव की व्यवहारिक समस्याओं को महत्व प्रदान करता है। यह क्रिया का दर्शन Philosophy of action or practical philosophy है।

अपरिभाषित अस्तित्ववाद को यदि परिभाषित करने का प्रयास किया जाये तो एच.एच. टाइटस के शब्दों मे कहा जा सकता है। कि अस्तित्ववाद एक मनोवृत्ति और दृष्टिकोण है, जो मनुष्य के अस्तित्व को महत्व देता है। अर्थात् अस्तित्ववाद सामान्य रुप से विश्व और प्रकृति अथवा सामान्य की अपेक्षा व्यक्ति के रुप में मनुष्य के विशिष्ट गुणों पर जोर देता है। Existentialism is an attitude and outlook that emphasizes human existence that is the distinctive qualities of individual person-rather than man in abstract or nature and the world in general.

इसी प्रकार अन्य आलोचक आर एन बैंक ने भी अस्तित्ववाद की परिभाषा को आबध्द करने का प्रयास करते हुए कहा है कि अस्तित्ववाद एक प्रकार के चिंतन की और संकेत करता है जो प्रकृति अथवा भौतिक संसार की अपेक्षा मनुष्य के अस्तित्व एवं उसके विशिष्ट गुणों पर जोर देता है – This term refers to a type of thiking that emphasizes human existence and the qualities to peculiar to it rather than to nature or physical world.

दोनो पूर्व एवं लगभग सभी परिभाषाओं में मूलरूप से एक ही ओर ध्यान केन्द्रित किया गया है जिससे कि अस्तित्ववाद का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। मूल रुप से अस्तित्ववाद को विशिष्ट प्रकार का चिंतन या दृष्टिकोण Out look कहा गया है। और दूसरी बात

जिसको इस चिंतन का मनुष्य विषय माना गया है। वह यह है कि अस्तित्ववाद का मूल केन्द्र मनुष्य है।

अस्तित्ववाद किसी प्रकार का सम्प्रदाय का या स्कूल नहीं है, जिसमें सिद्धांतों का निरूपण किया जाता है। यह सम्प्रदाय न होकर एक दृष्टिकोण है। यह एक विशेष प्रकार की मनोवृत्ति से विषय–विशेष को समझने का प्रयास है। अर्थात् अस्तित्ववाद 'मानव' और उसकी परिस्थितियों को देखने की दृष्टि है। दूसरे शब्दों में अस्तित्ववादी दृष्टि मानव पर केन्द्रित है। मानव पर केन्द्रित होने के कारण यह व्यक्ति का अध्ययन करता है और मानवीय परिस्थितियों के अंधकारमय कोनों में झाँकता है। फिर भी इसका जोर 'मानव अस्तित्व' पर है।

अतीत में भी दार्शनिकों ने मानव के जीवन, उसकी दशाओं तथा धर्म आदि पर चिंतन किया है, परन्तु 'अस्तित्ववाद' का ध्यान ही आधुनिक मानव एवं उसकी परिस्थितियों की ओर गया जिसका चित्रण उसने अनोखी सूझ–बूझ से किया है।

'अस्तित्ववादी दृष्टि' उस 'मानव' को अपना केन्द्र बिन्दु मानती है जो द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् जटिल परिस्थितियों में छटपटाने लगता है। यह उस मानव की परिस्थितियों पर ध्यान देती है जो औद्योगिक विकास के कारण अपना महत्व खोने लगा। ''मानव व्यक्तित्व के महत्व का भीड़ मे अधिक मात्रा में क्षय हो चुका है।'' ऐसी परिस्थिति में अस्तित्ववाद यह बताता है कि ''मानव के लिए यह उचित है कि वह अपने पुराने व्यक्तित्व को पुनः स्थापित करे। मानव की स्वतंत्रता ही उसका ऐश्वर्य है। वह अपने कार्यों के लिए उत्तरदायी इसलिए है क्योंकि वह स्वतंत्र है।''

संक्षिप्त रुप में कहा जा सकता है कि अस्तित्ववाद में मानव और उसके व्यक्तित्व तथा उसकी परिस्थितिओं के विषय में विवेचना की जाती है।

'अस्तित्ववादी' दर्शन का अध्ययन करते समय यह प्रश्न सामने आता है कि अस्तित्ववादी दार्शनिक दृष्टि या विचारधारा को 'अस्तित्ववाद' क्यों कहा जाता है। सामान्यतः यह आक्षेप लगाया जाता है यह 'अस्तित्ववाद' नाम सार्थक नहीं है क्योंकि अस्तित्व के अंतर्गत सामान्यतः 'केवलमानव' को नहीं रखा जाता है। विश्व के प्रत्येक पदार्थ को अस्तित्ववाद कहा जाता है। तो इस मानव केन्द्रित विचार को ही अस्तित्ववाद क्यों कहा जा रहा है?

इसका विशेष कारण यह है कि 'अस्तित्व' 'Existence' शब्द का जो प्रचलित अर्थ है इससे **'किसी वस्तु का किसी स्थान में होना'** सूचित होता है। इस अर्थ में अस्तित्व शब्द से बोध होता है कि **'कुछ वहाँ है'**। किंतु यदि ध्यान से देखा जावे तो यह 'अस्तित्व' शब्द का एक 'स्थिरार्थक' 'Constant' बोध है। अस्तित्ववाद 'अस्तित्व' 'Exist' शब्द के इस प्रचलित अर्थ पर ध्यान नहीं देता।

'अस्तित्ववाद का ध्यान' 'Exist' शब्द के मूलार्थ पर केन्द्रित है। जिसका अर्थ होता है 'आविर्भाव द्या उद्‌गमन' 'Emerging' अथवा 'उभरना' 'उठ खड़ा होना' 'Standing Out' यह 'Exist' शब्द का मूल शब्दार्थ है।

इससे यह तो स्पष्ट होता है कि इस शब्द के मूल बोध मे ही 'गत्यात्मकता' 'Motion' है, यह 'बाहर निकलने की 'उभरने' की प्रक्रिया हैं अतः जी अस्तित्ववान है, वह अपने मे अपने से उभरता रहता है। सदा ही आविर्भावित होता रहता है। किंतु तब तो इस प्रकिया में 'उभरने' की 'उद्‌गम' की अनुभूति का होना भी अनिवार्य है, क्योंकि 'उभरने' की प्रक्रिया यदि अनुभूत न हुई तो यह पता नहीं चलेगा कि उभरने की प्रक्रिया चल रही है।

इस प्रकार इस अर्थ में 'अस्तित्व' का अर्थ है ''अस्तित्व की अनुभूति के साथ उभरते रहना'' ''सतत् आविर्भावित होते रहना''। इस तरह से स्पष्ट है कि इस अर्थ मे 'मानव' और 'मात्र मानव' ही अस्तित्ववान हो सकता हैं। इसका कारण यह है कि केवल मानव को ही सतत् अनुभूति होती रह सकती है कि वह स्वयं मे उद्‌भूत हो रहा है।

'अस्तित्व' 'Exist' शब्द के मूलार्थ में केवल मानव 'अस्तित्ववान' 'Exist' है। अतः अस्तित्ववाद 'मानव केन्द्रित' विचार है। इसे 'मानव–केन्द्रित' विचार तो होना ही है। अस्तित्ववादी विचारधारा का भूल प्रत्यय भी 'मानव के अस्तित्व' संबंधी प्रश्नों का निराकरण है। इस तरह से 'अस्तित्व' शब्द का अस्तित्ववादी अर्थ हो गया 'अस्तित्व की अनुभूति के साथ अस्तित्ववान रहना' तथा इस अर्थ में केवल मानव 'अस्तित्ववान' हैं। अब यह प्रश्न स्वतः उठ खड़ा होता है कि मानव के इस अस्तित्व का प्रारंभ कहाँ से होता है ? उत्तर यह है कि 'जब उसे अपने अस्तित्व की प्रथम अनुभूति होती है' यह अनुभूति कब होती है? इसका पूर्णतया निश्चित उत्तर तो नहीं दिया जा सकता है लेकिन इतना तो कहा ही जा सकता है कि जब बच्चा पैदा होता है तो वह इस 'अनुभूति के साथ पैदा नहीं होता है।

अस्तित्ववाद इसे स्वीकारता है, तथा इसी कारण वह कहता है कि नवजात शिशु अस्तित्ववाद के 'अस्तित्व' के अर्थ में अस्तित्ववान नहीं होता है। एक प्रकार से वह मानव

भी नहीं होता है। वह भी एक वस्तु जैसी प्रक्रियाओं का समूह मात्र हैं। उसके अस्तित्व की कहानी, मनुष्य की कहानी का प्रारंभ अस्तित्व की प्रथम 'अनुभूति के साथ है, वह चाहे कभी भी हो। इन बातों को समझकर हम यह कह सकते हैं कि 'अस्तित्ववाद' मानव की आंतरिकता 'Subjectivity or Inwardness' की कहानी कहता है। जो जन्म से प्रारंभ न होकर अस्तित्व की प्रथम अनुभूति से प्रारंभ होती है और यह मृत्युपर्यंत अस्तित्व के सतत् उभरने की कहानी है।

यह बात स्पष्ट है कि मनुष्य की आंतरिकता के विकास इस कहानी को सभी विचारक वस्तुतः सभी अस्तित्ववादी विचारक अपने–अपने तरीकों से बतलाते हैं। किन्तु मूल प्रश्न पर विचार करने से कुछ ऐसी समस्याएँ प्रकाश में आती हैं। अस्तित्ववादी विचारक जिन समस्याओं के हल खोजने का प्रयास करते हैं। वे अस्तित्ववादी भी इसीलिए कहे जाते हैं कि उनकी समस्याएँ एक हैं, कुछ ऐसे विचार विषय Themes हैं जो इन सभी विचारकों के विचार में सम्मिलित हैं। सबसे रोचक तथ्य है कि उस प्रकार के प्रायः ससी विषय 'अस्तित्व' शब्द के वर्णित मूलार्थ में ही निहित हैं। सामान्यतः उसी में सारी विषय वस्तु उपलब्ध हो जाती है।

यदि मानव अस्तित्व का अर्थ है 'अस्तित्व की अनुभूति के साथ जीना' तो इसका एक अर्थ यह हो जाता है कि इस प्रकार के विचार का ध्यान व्यक्ति पर केन्द्रित हो जाता है, क्योंकि इस प्रकार की सामान्य अनुभूति संभव नहीं है।

इसी से एक और तथ्य सामने आता है कि यदि मानव अस्तित्व की कहानी का प्रारंभ मानव अस्तित्व की ऐसी प्राथमिक अनुभूति में है तो इसका अर्थ है कि 'अस्तित्ववाद' मानव की आंतरिकता के विकास की कहानी कह रहा है। यही कारण है कि अस्तित्ववादी विचारक ''अस्तित्ववान व्यक्ति'' को तो अपने ध्यान का केन्द्र बनाते ही हैं। उन विचार एवं विवेचन का केन्द्र आंतरिकता 'Subjectivity' हो जाती है। यह आंतरिकता व्यक्ति की, मानव की वस्तुतः 'अस्तित्ववान मानव' की आंतरिकता है।

REFERENCES

1. How am I to become a Christian.
   Soren Kierkegaard,
   Concluding Unscientific postscript
2. Existentialism is a new name for an ancient method.

Dr. Radhakrishnan

History of philosophy, Estern & Western.

3. "It appears to be reffirming in a modem idiom the protestant or the stoic of individualism of the renaissance or of modern libralism or of Epicurus or as well as over against the universal system of Rome or Moscow or of Plato. It is a contemporary renewal of one of the necessary phases of human experiences in a conflict ideal which history has not yet resolved.

   Blackham HJ. Six Existentialist Thinkers.

   Routledge & Kegan Paul Ltd.

   London (1952) P.P.V.V.I.
4. Living Issues in philosophhy – P. 396.
5. Hard Book in social philosophy- P.137.
6. A.K. Sinha - Contemporary philosophy.

   Hariyana Hindi Granth Academy – Chundeegarh, Page 210.
7. B.K. Lal.

   Contemporary Western philosophy, Page 484.

   Motilal Banarsidas. 1990 Delhi.
8. Knowing is a kind of being which belongs to being in the world.
9. Knowledge has its passionate and striving characteristies.

मालवा में प्रागैतिहासिक चित्रकला

डॉ. गीता चौधरी
प्राध्यापक
भेरूलाल पाटीदार भाासकीय
स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू

चित्रकला का इतिहास लगभग उतना ही पुराना है जितना मानव का धरा पर अवतरण। आज के समान कृशि, यातायात और औजार आदि उन्नतशील नहीं थे। केवल मनुश्य के सामने सबसे आव यक और महत्वपूर्ण समस्या थी कि वह किस प्रकार अपनी उदरपूर्ति करे और समकालीन विकराल पशुओं से अपनी रक्षा करे। किंतु कहा जाता है कि आव यकता आविश्कार की जननी है। अतः आदिमानव ने दोनों समस्याओं का हल निकाल लिया। मनुष्य ने अपने इर्द गिर्द पड़े पत्थरों के टुकड़ों को हथियारों के रूप में काम में लिया तथा उन विकराल पशुओं को मारकर अपने प्राणों की रक्षा तो की ही, साथ ही उन्हें अपने भोजन में भी इस्तेमाल किया।[1]

मानव के उक्त कार्यकलापों के युग को इतिहासकारों ने प्रागैतिहासिक काल की संज्ञा दी। प्रागैतिहासिक भाब्द संस्कृत के प्राक् इतिहास से मिलकर बना है। प्राक् का अर्थ होता है पहले का और इतिहास का अर्थ होता है भूतकाल की घटना का लिखित एवं क्रमबद्ध ज्ञान।[2]

मालवा के प्रागैतिहासिक युग की चित्रकला गुफाओं में जन्मी। भीमबैठका, मोडी, रामपुरा, मानपुरा, नरसिंहगढ़ और धरमपुरी की गुफाओं में चित्र मिलते हैं। इसी प्रकार के प्राचीन चित्रों का ज्ञान हमें विदेशों में प्राप्त प्रागैतिहासिक चित्रों से भी होता है। 19 वीं भाताब्दी में स्पेन और फ्रांस में इस प्रकार के भौल चित्रों को ढूंढ निकाला गया तो उनसे प्रेरणा लेकर श्री कारलाइल, आर्चीवाल्ड ने भारतवर्श में स्थित भौल चित्रों की खोज की और अपने भाोध का वैज्ञानिक सचित्र विवरण प्रस्तुत किया। यहीं से भौल चित्रों की खोज का सूत्रपात हुआ।

मालवा का क्षेत्र भी इससे अछूता न रहा और यहां भी भौल चित्रों की खोज का काम जारी रहा और डी.एच. गार्डन महोदय ने पचमढ़ी क्षेत्र के भौल चित्रों की जानकारी दी। 1935 ई. में उन्होंने विदेशी पत्रों में लिखना प्रारंभ किया और उनके खोज की विज्ञप्ति सात पत्रकों पर मुद्रित 14 छाया चित्रों के साथ आइपेक में प्रकाशित हुई।

शैलाश्रयों में डॉ. वी. श्रीवाकणकर ने प्रागैतिहासिक असंख्य शैलचित्र ढूंढ निकाले। भोपाल के पास ओबेदुल्लागंज जिला रायसेन पास भीम बैठका नामक स्थान पर खोज निकाले गये चित्रों ने तो विश्व के इतिहास में मालवा का कीर्तिमान स्थापित किया, भीम बैठका की खोज का श्रेय डॉ वी.श्रीवाकणकर को है।

मालवा में विश्व की प्राचीनतम गुफा चित्रावलियों का समृद्ध रूप मिला है।[1] आदि मानव की निर्मित इन गुफाओं की भित्तियों पर विविध चित्र हैं, जिनका काल निर्धारण पुरातत्वेत्ताओं ने इस प्रकार किया है कि ये विश्व की प्राचीनता चित्रकला को प्रकट करते हैं। मालवा में मोडी, मानपुरा, रामपुरा, नरसिंहगढ़, धरमपुरी, भोपाल, भाहदकराड़, होशंगाबाद में सर्वाधिक संख्या में भीमबैठका समूह में ये चित्र मिले हैं।

डॉ. वी. श्रीवाकणकर ने इन चित्र समूहों को कालक्रमानुसार चार भागों में बांटा है।[2]

1. मध्याश्म युग (12 से 5 हजार वर्श पूर्व)
2. ताम्राश्म युग (4200 वर्श पूर्व से प्रारंभ)
3. आधैतिहासिक युग (1300 से 1000 वर्श पूर्व)
4. मध्येतिहासिक युग (1455 से 500 वर्श पूर्व तक)

भीमबैठका में प्रागैतिहासिक मानव द्वारा चित्रित चित्रों का विशय शिकार एवं दैनिक जीवन की गतिविधियों से संबंधित रहा है। चित्रों के विषयों में बालक, गर्भवती मां, माता और शिशु, मुखटधारी पुरूश, सामूहिक नृत्य के दृश्य, आखेट एवं अग्निपुजन धनुर्धारी मुख्य हैं।[3] ये चित्र उसी स्थान की माटी से तैयार किये गये रंगों से बने हुए हैं जिनमें लाल, सफेद हरे तथा पीले रंग प्रमुख रूप से उपयोग में आये हैं। बुलराक नामक गुफा में एक विशाल बैल दिखाया गया है। उसका चेहरा आयताकार है तथा मुंह हाथी की भांति है, यह बैल एक पशु एवं केकड़े का पीछा कर रहा है और उसके आगे केकड़ा भाग रहा है। डॉ. माकणकर के मतानुसार यह दृश्य तीन जनजातियों पारस्परिक संघर्श का द्योतक है।[1] भीमबैठका शैलाश्रय में अंकित चित्रों में भोर 9 फीट लम्बा, आवचन्द का एक विचित्र प्राणी 4 फीट लम्बा तथा केवला का बैल 6 फीट लम्बा है।[2] कई शैलाश्रयों में मनुष्य की विजय की घटनाओं के साथ–साथ विजय से प्राप्त आनंद और हर्षोन्माद को भी चित्रित किया गया है जिसमें विभिन्न नर–नारी एक दूसरे के साथ नृत्य कर रहे हैं।

एक और दृश्य में आदिमानव युद्ध करने जा रहा है, दर्शित है। सजा हुआ घोड़ा जिसके साथ घुड़सवार अपने हाथ में धनुश बाण लिये है एक सजीव कृति है। धार्मिक विशयों पर गणपति, दुर्गा एवं शिव के चित्र भी मिलते हैं जो मध्येतिहासिक युग के हैं।[3]

नरसिंहगढ़, रामपुरा, मानपुरा, मोड़ी, कवला, धरमपुरी, सरवई के शैल चित्र ये सभी स्थान मन्दसौर जिले की मानपुर तहसील में स्थित हैं। इन स्थानों पर मध्याम एवं

ताम्राश्ययुग के भौलचित्र बड़ी मात्रा में अंकित हैं। [4] इन भौलचित्रों की खोज श्री वी. श्रीवाकणकर, उज्जैन ने सन् 1953 में की।

मोड़ी के एक भौलाश्रय की खुदाई का कार्य 1956 में किया गया जिससे भारत में पहली बार ऐसा प्रमाण उपलब्ध हुआ कि जिससे सिद्ध हो गया कि प्राचीनतम चित्र मध्याश्म युग में चित्रित किये गये हैं। मोड़ी में ताम्राश्ययुगीन नृत्यकारों तथा कृशकों के चित्र एवं आधैतिहासिक युग के चित्र भी हैं। केवला के विशालकाय बैलों के चित्र हैं। मानपुरा के सीता खरडी तथा इन्दरगढ़ नामक स्थान पर अनेक भौलाश्रय मिलते हैं जिनमें गुप्त तथा गुप्तोत्तरकाल के अनेक चित्र उपलब्ध हैं। इन सभी स्थानों के चित्र में लाल रंग का प्रचुर मात्रा में उपयोग हुआ है जो गेरू के समान समकालीन क्षेत्र की माटी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. डॉ. आर.आर. बुक्स – मालविका, पृ. 44
2. डॉ. रविकांत वर्मा, भारतीय प्रागैतिहासिक, पृ. 7
3. डॉ. वी. श्रीवाकणकर – जर्नल ऑफ इंडियन हिस्ट्री, फरवरी 1973, पृ. 24, 29
4. डॉ. वी. श्रीवाकणकर – जर्नल ऑफ इंडियन हिस्ट्री, फरवरी 1973, पृ. 25
5. डॉ. वी. श्रीवाकणकर, भीमबैठका, नवनीत, पृ. 55
6. धर्मयुग 30 सितम्बर 1973, पृ. 133
7. डॉ. राबर्ट आर.आर बुक्स, मालवा के प्रागैतिहासिक भौल चित्रों का मूल्यांकन मालविका पृ. 44
8. डॉ. वी. श्रीवाकणकर, भीमबैठका, नवनीत 1974, पृ. 58
9. पेन्टेड रॉकशेल्टर ऑफ इंडिया, आल इंडिया ओरियेन्ट कान्फ्रेंस अन्नमलई प्रोसीडिंग 1955

उच्च शिक्षा में महिलाओं की सहभागिता एवं सम्भावना

डॉ. भगवत राय
सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र
श्री अटल बिहारी वाजपेयी शास.
कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय
इन्दौर

शोद्ध सारंश :–

इतिहास में महिलाओं ने जीवन के हर क्षेत्र में बडे हिम्मत और लगन से भाग लिया । भारतीय उच्च शिक्षा एक अपवाद नहीं है। हमारे पूराणों में भारतीय महिलाओं की भागीदारी उच्च शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न पूराण कक्षाओं में पढ़ने को मिलती है। शिक्षा का प्रारम्भ ही मॉ सरस्वती के पूजन से होती है। वैदिक युग में महिलाओं को शिक्षा ग्रहण करने एवं वैद्या का अध्ययन करने का पूर्ण अधिकार था, इसका उल्लेख उस समय के अपाला, गार्गी, मैत्रेयी तथा विश्वम्भरा जैसी विद्रुषी महिलाओं के रूप में मिलता है। सह शिक्षा को बुरा नहीं माना जाता था । रायडन का कहना है कि '' महिलाओं ने पहले सभ्यता का नीव रखी और मानव को इधर–उधर भटकने से बचाया है। धीरे–धीरे महिलाओं की स्थिति निम्न होती गई । अन्य अधिकारों को साथ शिक्षा के अधिकार से भी उन्हें वंचित कर दिया गया जिससे भारतीय समाज पतन की ओर चला गया। शिक्षा के अभाव के कारण वे अपने अधिकारों के प्रति अजागरूक रहीं और समाज में पक्षपात पूर्ण नियमों का विरोध भी नहीं कर सकी । बोद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार के समय पॉचवी से तैरहवी शताब्दी तक नालंदा,तक्षशिला एवं विक्रम शिला स्थापित हुई, जिसमें महिलों की सहभागीता रहीं ।

उच्च शिक्षा में महिलाओं की सहभागिता एवं सम्भावना विषय पर समाज के विभिन्न वर्गों की राय जानने के लिये 13 प्रश्नों की प्रश्नावली तैयार की गई और शिक्षक, शिक्षिका समाज सेवी पुलिस, वकील एवं उच्च शिक्षा के विभिन्न कर्मचारी, राजनीतिज्ञों से प्रश्नावली भरवाकर उनकी राय जानी गई इस हेतु विभिन्न वर्गों के 50 लोगों का चयन किया गया जिनके मत एवं सुझावों के आधार पर जो निष्कर्ष प्राप्त हुए । निर्ष्कष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि महिला की उच्च शिक्षा में भागीदारी अनिवार्य है।

शब्दावली :–

1. **शिक्षा** –व्यक्ति में ज्ञान रूपी प्रकाश का उदगम ही शिक्षा है।
2. **सहभागीता** –मानव समाज में सभी के साथ मिल–जूल कर रहना सहभागीता है।

इतिहास में महिलाओं ने जीवन के हर क्षेत्र में बडे हिम्मत और लगन से भाग लिया । भारतीय उच्च शिक्षा एक अपवाद नहीं है। हमारे पूराणों में भारतीय महिलाओं की भागीदारी उच्च शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न पूराण कक्षाओं में पढ़ने को मिलती है। शिक्षा का प्रारम्भ ही मॉ सरस्वती के

पूजन से होती है। वैदिक युग में महिलाओं को शिक्षा ग्रहण करने एवं वैद्या का अध्ययन करने का पूर्ण अधिकार था, इसका उल्लेख उस समय के अपाला, गार्गी, मैत्रेयी तथा विश्वम्भरा जैसी विद्वुषी महिलाओं के रूप में मिलता है। सह शिक्षा को बुरा नहीं माना जाता था । रायडन का कहना है कि '' महिलाओं ने पहले सभ्यता का नीव रखी और मानव को इधर–उधर भटकने से बचाया है। धीरे–धीरे महिलाओं की स्थिति निम्न होती गई । अन्य अधिकारों को साथ शिक्षा के अधिकार से भी उन्हें वंचित कर दिया गया जिससे भारतीय समाज पतन की ओर चला गया। शिक्षा के अभाव के कारण वे अपने अधिकारों के प्रति अजागरूक रहीं और समाज में पक्षपात पूर्ण नियमों का विरोध भी नहीं कर सकी । बोद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार के समय पॉचवी से तैरहवी शताब्दी तक नालंदा,तक्षशिला एवं विक्रम शिला स्थापित हुई, जिसमें महिलों की सहभागीता रहीं । ग्यारवीं शताब्दी में मुस्लिम शासक ने भी दिल्ली, लखनव, इल्हाबाद में विश्वविद्यालय की स्थापना की जिसमें महिलाओं ने धर्म, दर्शनशास्त्र, कला, नक्षत्र विज्ञान, थियोलॉजी आदि क्षेत्र में सराहनी कार्य किया । 19वीं 20वीं शताब्दी की सुरआत में कई समाज सुधारकों प्रयासों से महिला शिक्षा को प्रारंभ किया गया । आज विभिन्न आयु समूहों में पॉच करोड़ से भी अधिक लड़कियॉ स्कूल एवं कॉलेजों में शिक्षा प्राप्त कर रहीं है। जिससे उच्च शिक्षित महिलाओं ने सामाजिक चेतना का विकास हुआ है। पणिक्कर ने कहा है कि महिला शिक्षा ने विद्रोह की उस कुल्हाडी की धार तेज कर दी है। जिससे भारतीय समाजिक जीवन की जंगली जाडियों को साफ करना संभव हो गया है। [1]

1906 में कलकत्ता के भारतीय समाजिक कॉफ्रेन्स के भाषण में सरोजनीय नायडू ने कहा की महिलाओं को उनके सारे प्राचिन समय के अधिकार वापस दे दिये जावें । क्योंकि वे हीं राष्ट्र के निर्माता है । उनकी भागीदारी के बिना राष्ट्र का विकास नहीं हो सकता 1890 में उच्च शिक्षित महिलाओं की सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में भागीदारी स्पष्ट दिखाई देने लगी । जैसे की सरोजनी नायडू, ऐनीबिसेण्ट, राजकुमारी अमृत कौर इत्यादि । महिलों की स्थिति व शिक्षा के बीच सीधा संबंध है। उच्च शिक्षा के कारण ही उनमें अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बडी है। ''नेहरू ही का कहना था कि राष्ट्र की परिस्थिति महिलों की स्थिति से पहचानी जाती है। उन्हें यह ज्ञात था कि महिलाओं की उच्च शिक्षा में कितना महत्व है।'' पिछले कई वर्षों से महिलाओं ने उच्च शिक्षा प्राप्त करने प्रशासन, चिकित्सा व अन्य क्षेत्रों में देश–विदेशों में अपनी प्रतिभा का परिचय दे रही है।[1,2]

उच्च शिक्षा में महिलाओं की सहभागिता एवं सम्भावना विषय पर समाज के विभिन्न वर्गों की राय जानने के लिये 13 प्रश्नों की प्रश्नावली तैयार की गई और शिक्षक, शिक्षिका समाज सेवी पुलिस, वकील एवं उच्च शिक्षा के विभिन्न कर्मचारी, राजनीतिज्ञों से प्रश्नावली भरवाकर उनकी राय जानी गई इस हेतु विभिन्न वर्गों के 50 लोगों का चयन किया गया जिनके मत एवं सुझावों के आधार पर जो निष्कर्ष प्राप्त हुए वे निम्नानुसार है –

उपरोक्त प्रश्नावली तैयार करते समय विभिन्न विद्वानों, प्राध्यापकों, प्राचार्य से महिला उच्च शिक्षा को निम्न रूप में परिभाषित किया गया।

सामान्यतः महाविद्यालयीन स्तर (बी.ए., बी.कॉम., बी.ई., एम.बी.बी.एस.) आदि को ही उच्च शिक्षा या उच्च शिक्षित माना गया है, लेकिन उपरोक्त विषय पर विचार करते समय उच्च शिक्षा के वर्तमान विचार के अतिरिक्त महिलाओं में उच्च स्तरीय सोच, व्यवहार रचनात्मक सोच, शक्ति विभिन्न सामाजिक पहलुओं (राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक सामाजिक पहलुओं का ज्ञान) और उनकी पकड़ को भी शामिल किया गया, केवल स्नातक या स्नातकोत्तर उपाधियों तक ही सीमित नहीं रखा गया है। क्यों विभिन्न अवसरों या मंचों पर यह देखा गया है कि उपाधि धारक महिलाऐं छोटी–छोटी सामाजिक समस्याऐं या विषय पर उतनी सोच नहीं रख पाती जितनी की एक गैर स्नातक महिला की सोच होती है।

रायसुमारी के अंतर्गत समाज के विकास में महिलाओं के योगदान के अंतर्गत समाज के विकास में महिलाओं के योगदान के प्रथम प्रश्न पर 90 प्रतिशत सूचनादाताओं की सहमति भी अर्थात् समाज का विकास करना है, तो महिलाओं को उच्च शिक्षित होना आवश्यक है। समाज के विकास हेतु महिलाओं की उच्च शिक्षा की अनिवार्यता पर 100 प्रतिशत सूचनादाताओं ने अपनी सहमति जताई है।

98 प्रतिशत सूचनादाता समाज में प्रचलित कुरीतियों को समाप्त करने में महिलाओं का उच्च शिक्षित होना अनिवार्य मानते है। देश की आर्थिक उन्नति में महिलाओं की उच्च शिक्षा 90 प्रतिशत सूचनादाताओं ने आवश्यक माना है।समाज में महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों पर नियंत्रण करने हेतु 98 प्रतिशत सूचनादाता महिलाओं की उच्च शिक्षा में सहभागिता को आवश्यक मानते है। राजनैतिक परिदृश्य में बदलाव हेतु 80 प्रतिशत सूचनादाता उच्च शिक्षित महिलाओं की भागीदारी आवश्यक समझते है। बढ़ती हुई महँगाई मे परिवार के आर्थिक नियोजन के लिए 60 प्रतिशत सूचनादाता उच्च शिक्षित महिला की भूमिका को आवश्यक मानते है। महिला आरक्षण का सही लाभ लेने के लिए 70 प्रतिशत सूचनादाता इस बात से सहमत है कि महिलाओं को उच्च शिक्षित होना जरूरी है।

वर्तमान में तीव्रता से फैलते हुए तकनीकी विकास का सही लाभ लेने के लिए भी महिलाओं की उच्च शिक्षा को 70 प्रतिशत लोगों ने अपना समर्थन दिया। सांस्कृतिक मूल्यों में हो रहे निरंतर ह्रास को रोकते हुए उच्च सांस्कृतिक मूल्यों की स्थापना, उच्च शिक्षित महिलाओं से ही संभव है, ऐसा 75 प्रतिशत सूचनादाता मानते है। स्वरोजगार आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है ऐसे में महिलाओं को भी उद्यमी होना चाहिए इसके लिए उन्हें उच्च शिक्षित होना होगा, ऐसा मानने वाले लोग 80 प्रतिशत है।

भ्रष्टाचार निरंतर एक जटिल समस्या बनता जा रहा है जो कि किसी देश के आर्थिक विकास के लिए अत्यन्त सोचनीय प्रश्न है क्या उच्च शिक्षित महिलाऐं इस समस्या को हल करने में किस सीमा तक सहयोगी हो सकती है, इस प्रश्न के उत्तर में 70 प्रतिशत लोगों ने अपना समर्थन दिया है।

शिक्षा का गिरता स्तर भी देश के सर्वांगिण विकास में एक बहुत बड़ी बांधा है। ऐसे में उच्च शिक्षित महिलाऐं शिक्षा के सुधार में अपना कितना योगदान दे सकती है यह जानने का भी इस शोध में प्रयास किया है। जिसमें 90 प्रतिशत सूचनादाताओं ने यह माना है कि शिक्षा के सुधार हेतु महिलाओं को उच्च शिक्षित होना आवश्यक है।

उच्च शिक्षा में महिलाओं की सहभागिता एवं संभावना विषय पर शोधार्थियों द्वारा एक प्रश्नावली के माध्यम से धार शहर के विभिन्न वर्गों के 50 व्यक्तियों के विचार जाने गये तथा प्रत्येक प्रश्न के आधार पर उनके विचारों से अवगत होने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया कि समाज में व्याप्त गंभीर समस्याओं जैसे महिला अत्याचार, बढ़ती महँगाई, महिला रोजगार, भ्रष्टाचार दहेजप्रथा एवं बालविवाह आदि से मुकाबला कर उन्हें पराजित करना है तो महिलाओं को उच्च शिक्षित करना अत्यन्त आवश्यक है। साथ ही संस्कृति की रक्षा, गिरता शिक्षा का स्तर, योग्य युवा पीढ़ी का निर्माण, महिला आरक्षण का लाभ आदि के लिए भी जहां तक सम्भव हो महिलाओं को उच्च शिक्षित करने के लिए व्यापक और निरंतर प्रयास होना चाहिए।

संदर्भ सूची :–

1. श्री जी.के अग्रवाल (समाजशास्त्र), औमेगा प्रकाशन नई दिल्ली 1999 पृष्ठ क्र. 151—154

2. श्री एम.एल. गुप्ता, साहित्य भवन प्रकाशन, नई दिल्ली 1993 पृष्ठ क्र. 139–144
3. अनुसन्धान विधियाँ, डॉ. डी. एन. श्रीवास्तव, साहित्य प्रकाशन, आगरा 2001

भारत में व्यापार प्रबंधन में ई–कामर्स की भूमिका

डॉ. सरोज अजय
प्राध्यापक
श्री अटल बिहारी वाजपेयी
शा. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय,
इंदौर म.प्र.
E-mail : dr.sarojajay@yahoo.com

ई–कामर्स आधुनिक जीवन का एक अभिन्न अंग बन चुका है भारत में प्रतिदिन लाखों व्यक्ति इंटरनेट का उपयोग कर ई–कामर्स व्यवस्था द्वारा दैनिक उपयोग की वस्तुएं खरीद रहें हैं। वर्तमान में हमारे देश में 60 प्रतिशत महिलाएँ 10 प्रतिशत पुरूष और 30 प्रतिशत यंगस्टर्स ऑनलाइन शापिंग करते है। वर्ष 2012 में अमेरिका में 226 अरब डालर और चीन में 210 अरब डॉलर की ऑनलाइन बिक्री हुई थी व भारत के ई–कामर्स ने 9.5 अरब डालर का कारोबार किया था। **भारत में इंटरनेट उपभोक्ता की संख्या अक्टूबर 2014 तक 20.5 करोड़ थी** इंटरनेट उपभोक्ताओं की बढ़ती संख्या ने भारत में वेब आधारित बिजनेस को आकर्षित करने में सफलता प्राप्त की है। वर्तमान में देश में 2.50 करोड़ लोग ऑनलाईन शापिंग कर रहे है। **भारत में ई-कॉमर्स इण्डस्ट्री वर्तमान में 12 अरब डालर की है।** हमारे देश में शिक्षा के विकास व व्यापार के विस्तार के साथ ही ई–कॉमर्स का उपयोग निरंतर बढ़ रहा है।

शब्द कुंजी – ई–कामर्स – इन्टरनेट के माध्यम से व्यापार करना, C2C – उपभोक्ता से उपभोक्ता, B2B – व्यापार से व्यापार, B2C – व्यापारी से उपभोक्ता।

ई–कामर्स आधुनिक जीवन का एक अभिन्न अंग बन चुका है। आज विश्व के कुल व्यापार का एक बहुत बड़ा भाग इंटरनेट के द्वारा संचालित किया जा रहा है इंटरनेट के द्वारा जो व्यापार संचालित किया जाता है उसे ही ई–कामर्स नाम दिया गया है इंटरनेट ने अनके व्यापारिक गतिविधियों के तरीके बदल दिए है। और ई–कामर्स का दायरा काफी विस्तृत हो गया है आज इंटरनेट के द्वारा सामान खरीदना बेचना या फिर सेवाएँ प्रदान करना ही ई–कामर्स नहीं है इससे अंतर्गत विज्ञापन, केटलॉग की उपलब्धता, ट्रांजेक्शन प्रोसेसिंग भुगतान आदि सेवाएं भी सम्मिलित है यहाँ तक की सूचनाओं को इंटरनेट के द्वारा खरीदना–बेचना भी ई–कामर्स के अंतर्गत आता है। जब ई–कामर्स दो व्यापारिक फर्मो के बीच हो रहा है तब यह बिजनिस टू बिजनिस अर्थात् B2B ई–कामर्स होता है। लेकिन यदि उपभोक्ता व किसी फर्म के बीच व्यापार हो रहा है तब उसे B2C ई–कामर्स कहा जाता है यदि कोई उपभोक्ता किसी पोर्टल (वेब साईट) से शर्ट खरीदता है तब वह B2C कामर्स के अंतर्गत आता है और यदि रिलायंस इन्फोकॉम, ऑपटेल कम्पनी से फायबर आप्टिक केबल खरीदती है तब वह B2B कामर्स होगा। इसी तरह C2C (कन्स्यूमर टू कन्स्यूमर) जैसे OLX, क्वीकर, स्नेल डील आदि भी ई–कामर्स के अनेक मॉडल है इस प्रकार ई–कामर्स से व्यापार के नये–नये मॉडल रोज खोजे जा रहे हैं ई–कामर्स का क्षैत्र (दायरा) प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है कल्पना शीलता तथा सूचना प्रौद्योगिकी के क्षैत्र में हो रही

उन्नति ई–कामर्स के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। 1990 में इंटरनेट पर WWW अर्थात् वर्ल्ड वाइड वेब के विकास ने सूचनाओं के प्रकाशन व वितरण की एक सस्ती व सुलभ तकनीक व्यापारिक जगत को उपलब्ध कराई है वेब के विकास ने छोटी, मझोली,बड़ी आदि सभी प्रकार की कम्पनियों को एक समान प्लेटफार्म प्रदान किया है। ई–कामर्स के तहत व्यापार करने के लिए किसी बड़े शोरूम की आवश्यकता नहीं होती है मात्र एक कम्प्यूटर, टेलीफोन, मॉडेम, इंटरनेट कनेक्शन तथा एक वेबसाइट, होने पर ई–कामर्स संभव हो सकता है।

व्यापार की बढ़ती जटिलताओं व तकनीकी प्रगति ने व्यापारियों को नये ढ़ंग से व्यापार करने के लिए प्रेरित किया है ई–कामर्स में व्यापार से व्यापार अर्थात् B2B व्यवस्था में दो व्यापारिक संस्थानों के मध्य व्यापार किया जाता है आज लगभग सभी बड़े व्यापारिक संस्थान इस प्रणाली का उपयोग कर रहे हैं। कच्चे माल की प्राप्ति व निर्मित वस्तुओं की सप्लाई के लिए इसका उपयोग सबसे ज्यादा दिया जाता है। यहाँ तक कि अब सेनाएं भी हथियार खरीदने के लिए B2B व्यापार व्यवस्था का उपयोग करने लगी है आज विश्व मे आटो व इंजीनियरिंग उद्योग, धातु एवं रसायन उद्योग, चमड़ा एवं कपड़ा उद्योग, रत्न एवं आभूषण उद्योग, निर्यात संबंधित उद्योगों आदि में B2B ई–कामर्स का हिस्सा 50 प्रतिशत से भी अधिक है ई–कामर्स व्यवस्था द्वारा व्यापारिक गतिविधियाँ संचालित करने वाले संस्थान व्यापारिक व तकनीति दोनों दृष्टि से पारम्परिक पद्धति से व्यापार करने वाले संस्थानों की तुलना में फायदें में रहते हैं इसमें विकल्पों की खोज आसान हो जाती है समय व धन की बचत होती है उत्पादो की जानकारी पूरे विश्व तक न्यूनतम कीमतों में पहुंचायी जा सकती है तथा प्रतियोगी संस्थानों की जानकारी व उत्पादों की विशेषताएँ जानी जा सकती है तथा नये ग्राहक सरलता से खोजे जा सकते है। ई–कामर्स व्यवस्था के अंतर्गत जब ग्राहक या उपभोक्ता सीधे ही व्यापारिक संस्थान से सम्पर्क कर वस्तु खरीदता या सेवा प्राप्त करता है तब वह व्यवस्था, व्यापार से उपभोक्ता (B2C) व्यवस्था कहलाती है इस ई–कामर्स व्यवस्था में उपभोक्ता को मनचाहा सामान घर बैठे मिल जाता है सामान्य व्यापार व्यवस्था के उपभोक्ता व निर्माणकर्ता संस्थान के मध्य, वितरक, थोक व्यापारी खुदरा व्यापारी आदि बिचोलियो की भांति कार्य करते है जबकि व्यापार से उपभोक्ता ई–कामर्स (B2C) के अंतर्गत निर्माणकर्ता संस्थान सीधे ही अपनी वेब साईट के माध्यम से उपभोक्ता को वस्तुओं का विक्रय करते है ऐसा करने से उपभोक्ताओं को अपेक्षाकृत कम कीमत पर सामान मिल जाता है।

सामान्य जन–जीवन में बढ़ते सूचना प्रौद्योगिकी उपयोगों, व्यापारिक वर्ग के लिए उपलब्ध सूचना प्रौद्योगिकी संसाधनों, विश्व को एक सूत्र में जोड़ने वाले संचार माध्यमों विशेषकर इंटरनेट की उपलब्धता ने ई–कामर्स को बढ़ावा दिया है। कल्पना शीलता व कुछ नये ढ़ंग से व्यापार करने व व्यापार को बढ़ाने के उद्देश्य से समय–समय पर नये ई–कामर्स मॉडल निर्मित किए जा रहे है जैसे ई–ट्रेवलिंग (यात्रा/पर्यटन) से संबंधित अनेक वेब साईट ऐसी है जो पर्यटकों को पर्यटक स्थलों, टूर पैकेजो, आन लाईन आरक्षण सुविधाएँ उपलब्ध करवाती है रेल बस व वायुयान आदि के लिए इंटरनेट आधारित यात्रा

एवं पर्यटन सुविधाएं इंटरनेट पर उपलब्ध हो जाने से पर्यटन उद्योग को सबसे अधिक बढ़ावा मिला है भारत में भी इंडियन एयर लाइन्स तथा भारतीय रेल अपनी वेब साईट के माध्यम से अपनी सेवाओं की समय सारणी उपलब्ध कराते है, इसमें यात्रियों को आरक्षण करवाने के साथ ही यात्रा के विकल्पों की जानकारी भी प्राप्त होने लगी है।

इसी प्रकार ई–बैकिंग द्वारा बैकें अपने उपभोक्ताओं को बेहतर सुविधाएँ उपलब्ध कराने व नये ग्राहकों को लुभाने के लिए सूचना–प्रौद्योगिकी का उपयोग कर रही है। नेट बैकिंग या इंटरनेट के उपयोग द्वारा उपभोक्ताओं को बैकिंग सुविधा उपलब्ध कराने में विकसित देशों के बैंक बहुत आगे है। वे लगभग, समस्त प्रकार की बैकिंग सुविधाएँ वेबसाईट के माध्यम से ग्राहकों को उपलब्ध कराते है भारत में भी बैकों ने इंटरनेट के माध्यम से ग्राहकों को अनेक प्रकार की सूचनाएं तथा सुविधाएँ प्रदान करना प्रारंभ कर दी है इससे बैंको की गुणवत्ता में भी सुधार आया है। तथा प्रति कर्मचारी उत्पादकता में वृद्धि हुई है वहीं ग्राहक किसी भी समय बैंक से सम्पर्क व व्यवहार कर अपना समय व श्रम बचा सकता है।

ई–कामर्स की ई–रिटेलिंग व्यवस्था के अंतर्गत वस्तु भौतिक रूप में उपभोक्ता तक पहुंचती है तथा वस्तु खरीदने के लिए मूल्य का भुगतान उपभोक्ता द्वारा वेबसाईट मालिक को किया जाता है इस प्रकार की वेब साईट वर्चुवल शोरूम, वर्चुवल स्टोर, वेब स्टोर आदि नामों से भी जाने जाते है। इसी प्रकार ई–कामर्स की ई–मीडिया प्रणाली का उपयोग अपना देश छोड़कर दूसरे देशों में बसे लोग ज्यादा करते है जैसे भारत में सोनी टी.वी. या सब टी.वी. जो प्रोग्राम प्रसारित करते है उन्हें अमेरिका में बसे भारतीय नहीं देख पाते है उन लोगो तक अपने प्रोग्राम पहुँचाने के लिए ये चैनल भारत की पेंटा मीडिया ग्राफिक्स द्वारा विकसित व संचालित किये जा रहे Numtv.com का उपयोग करते है इसका सदस्य बनकर आवश्यक भुगतान कर व्यक्ति उस पर उपलब्ध चैनलों को दुनिया कि किसी भी कोने में अपनी सुविधा के समय पर देख सकता है विश्व के अनेक रेडियों ब्राडकास्टिंग नेटवर्क जिनमें आल इंडिया रेडियों तथा बीबीसी सम्मिलित है अपने प्रोग्राम वेबसाइट के माध्यम से सुनने की सुविधा दे रहे है। इस प्रकार ई–कामर्स आधुनिक जीवन का एक अभिन्न अंग बन चुका है भारत में प्रतिदिन लाखों व्यक्ति इंटरनेट का उपयोग कर ई–कामर्स व्यवस्था द्वारा दैनिक उपयोग की वस्तुएं जैसे – कपड़े, उपहार, किताबें, इलेक्ट्रानिक सामान, खाने का सामान आदि खरीद रहें हैं व सेवाएं प्राप्त करते है। (स्नेप डील डॉट काम, Yepme.com आदि) यहाँ तक की OLX जैसी वेब साईट पर दो उपभोक्ता पुराना सामाना भी खरीद व बेच सकते है ई–कामर्स वेब साईट द्वारा विभिन्न प्रोडक्ट पर दिए जा रहे ऑफर्स भी यंगस्टर्स और महिलाओं को आकर्षित कर रहे हैं। इसलिए भी भारत में ऑनलाइन शॉपिंग का ट्रेंड बढ़ा है वर्तमान में हमारे देश में 60 प्रतिशत महिलाएँ 10 प्रतिशत पुरूष और 30 प्रतिशत यंगस्टर्स ऑनलाइन शापिंग करते है जिन संस्थानों ने ई–कॉमर्स को अपनाया है उनके व्यापार में 30 प्रतिशत से लेकर 100 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई है। वर्ष 2012 में अमेरिका में 226 अरब डालर और चीन में 210 अरब डॉलर की ऑनलाइन बिक्री हुई थी व भारत के ई–कामर्स ने 9.5 अरब डालर का

कारोबार किया था जिसका तीन चौथाई ऑनलाईन यात्रा बुकिंग के माध्यम से आया था। **भारत में इंटरनेट उपभोक्ता की संख्या अक्टूबर 2014 तक 20.5 करोड़ थी** इंटरनेट उपभोक्ताओं की बढ़ती संख्या ने भारत में वेब आधारित बिजनेस को आकर्षित करने में सफलता प्राप्त की है। वर्तमान में देश में सालाना 700 मिलियन डालर का ऑनलाईन बाजार है और 2.50 करोड़ लोग ऑनलाईन शापिंग कर रहे है। **भारत में ई–कॉमर्स इण्डस्ट्री वर्तमान में 12 अरब डालर की है। भारतीय अर्थव्यवस्था में ई–कामर्स की भागीदारी वर्तमान में 1 प्रतिशत है।** नेस्काम की एक रिपोर्ट के अनुसार 2020 तक देश की GDP में इसकी हिस्सेदारी बढ़कर लगभग 4 प्रतिशत होने की संभावना है। हमारे देश में शिक्षा के विकास व व्यापार के विस्तार के साथ ही ई–कॉमर्स का उपयोग निरंतर बढ़ रहा है।

वर्तमान में दुनिया के कुल व्यापार का एक बहुत बड़ा भाग ई–कामर्स व्यवस्था के अंतर्गत किया जा रहा है तथा इसमें निरंतर बढ़ोत्तरी हो रही है। ई–कामर्स ने व्यापार को क्षेत्रीय व्यापार से बढ़ाकर उसे ग्लोबल (वैश्विक) व्यापार में परिवर्तित कर दिया है ई–कामर्स सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुए तकनीकी विकास की देन है इंटरनेट के क्षेत्र में हुए विकास ने ई–कामर्स के क्षेत्र में नई–नई संभावनाओं को जन्म दिया है फलस्वरूप आज इंटरनेट और ई–कामर्स का व्यापार व अर्थव्यवस्था पर प्रभाव काफी अधिक बढ़ गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. डॉ. निरंजन श्रीवास्तव, प्रो. निर्मल जैन – फंडामेंटल्स ऑफ ई–कॉमर्स, नाकोड़ा शिक्षा साहित्य पब्लिकेशन, इन्दौर, पृ. 51–64, 115–136
2. शशि शुक्ला – ई–कॉमर्स, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
3. नई दुनिया, दैनिक अखबार, 19.04.2015
4. दैनिक भास्कर, दैनिक अखबार, 17.04.2015
5. नई दुनिया, दैनिक अखबार, 15.04.2015
6. www.amul.com
7. www.bababazar.com
8. www.amazon.com
9. www.indiamart.com
10. www.alibaba.com

जनजातियों की सामाजिक, आर्थिक स्थिति एवं विकास की चुनौतियों का समाजशस्त्रीय अध्ययन
(मध्य प्रदेश की मवासी जनजाती के विशेष संदर्भ में)

डॉ. श्रद्धा मालवीया
सहायक प्राध्यापक
श्री अटल बिहारी वाजपेयी
शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय
इन्दौर म.प्र.

श्री भरत कुमार मीणा
शोधार्थी पी.एच.डी.
श्री अटल बिहारी वाजपेयी
शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय
इन्दौर म.प्र.

प्रस्तावना –

म.प्र. को जनजातियों का गढ़ कहा जाता है। यहाँ देश की सबसे अधिक जनजाति संख्या निवास करती है, जिनकी संख्या लगभग 48 है म.प्र. की कुल जनसंख्या 6,03,48,023 है जिसमें अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या 1,22,33,474 है जो कि संपूर्ण म. प्र. की जनसंख्या का 20.3 प्रतिशत है।

म.प्र. के जनजातीय क्षेत्रों में गरीबी का स्तर अधिक है। यहाँ तक की कुल 15 हिस्सों को तो अति गरीब क्षेत्रों की सूची में शामिल किया गया है, (शाह 2007)। म.प्र. में जनजातियों में गरीबी का स्तर लगभग 47.2 प्रतिशत है, (एन. एस. एस. ओ. 2005)। जो स्पष्ट करता है कि आज भी जनजातीय समुदायों की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक स्थिति पिछडी हुई है, अतः इन्हे विकास की अत्याधिक आवश्यकता है, जनजातीय समुदायों के वांछित विकास न होने के कारण ही म.प्र. सबसें कम विकासशील राज्यों में गिना जाता है। जनजातीय विकास की धीमी गति, निर्धनता की बढती हुई दर तथा साधनों की असुलभता ने जनजातियों में पलायन की प्रकृति को बढाया है। जिससे उनके जीवन में अस्थिरता बढ गई है। यह प्रकृति म.प्र. में सबसे अधिक है, म.प्र. के जनजातीय समूह के सदस्य अधिकाशतः महाराष्ट्र तथा गुजरात की ओर पलायन करते है (मौसे 1997)। पलायित आदिवासियों में तकनीकी ज्ञान एवं विशिष्ठ दक्षता के अभाव के कारण पलायित क्षेत्र में भी उनका शोषण किया जाता है। जनजातिय समूहों में कुछ जनजातियाँ तो तुलनात्मक रुप से अन्य जनजातियों से भी अत्याधिक पिछडी हुई है। मवासी भी ऐसी ही जनजाति है। यह

भारत में केवल म.प्र. में पाई जाती, तथा म.प्र. के भी चार जिलों सतना, पन्ना, छिंदवाड़ा और होशंगाबाद में पाई जाती है। यह जनजाति सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक रुप से अत्याधिक पिछडी हुई है, तथा इनकी जनसंख्या भी बहुत कम है। अतः इनका वांछित विकास कर इनके अस्तित्व को बचाना आवश्यक है।

भारत में जनजातीय जीवन की स्थिति अत्याधिक दयनीय है, आदिवासी जन अपनी दैनिक दिनचर्या को ठीक तरह से निर्वाहित करने के लिए भी संघर्षरत् है, इसका प्रमुख कारण उनमें आधुनिक तकनीक का ज्ञान न होना तथा शहरों से दूरस्थ कटे हुए स्थान पर रहना है, जिसका परिणाम है कि भारत में आदिवासियों में गरीबी का स्तर अन्य वर्गों की तुलना में दो गुना अधिक है (थोराट व महामलिक 2005), वर्तमान में भारत में आदिवासियों की जनसंख्या 84.33 मिलियन है (2001 की जनगणना के अनुसार)। अतः इतने बडे वर्ग का पिछड़ा होना देश की कमजोर स्थिति का द्योतक है,वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 84,63,02,688 थी, तथा कुल आदिवासी जनसंख्या 6,77,88,380 थी जो कि कुल जनसंख्या का 8.09 प्रतिशत थी।2001 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 1,02,87,37,436 है तथा कुल अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या 84,32,62,409 है जो कि जनसंख्या का 8.2 प्रतिशत है। अतः जिस दर से जनसंख्या वृद्धि हो रही है, अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या में वृद्धि नही हो रही है।जनजातीय विकास हेतु शासकीय स्तर पर विभिन्न प्रयास किए जा रहे है तथापि इस वर्ग के विकास में गति दृष्टिगोचर नही होती है।

मवासी (मुवासी) जनजाति छिंदवाड़ा के दुर्गम क्षेत्रों में निवास करती है। मवासी शब्द ''मेवास'' शब्द से बना है जिसका अर्थ दुर्गम स्थलों अर्थात् पर्वतों व जंगलों में निवास करने वाले है। अतः मवासी जनजाति का निवास स्थान सतपुड़ा पर्वत के जंगलों में है। यह जनजाति आज भी संचार साधनों से कटी हुई है। यहॉ तक की आज भी अधिकतर गॉवों तक पहुॅचमार्ग बहुत ही पथरीला तथा कष्टदायक है। अनुसूचित जाति संवर्ग में मवासी जनजाति अत्याधिक पिछडी, आर्थिक रुप से विपन्न एवं स्वतंत्र भारत के 64 वर्षिय विकास पथ से बहुत दूर समाज से ओझल प्रतीत होती है। म.प्र. की अन्य विशेष पिछडी जनजातियों कोल, भील, बैगा, उडिया, हल्वा एवं हल्बी से भी अधिक पिछड़ा मवासी जनजाति को कहा जाये तो अतिश्योक्ति न होगी।

मवासी जनजाति छिंदवाड़ा के बिछुआ ब्लॉक व जुनारदेव ब्लॉक में बहुल्ता में है। मवासी जनजाति अत्यंत सरल, सहज एवं आभावों में जिन्दगी जीने वाली है, तथा आज भी विकास की यात्रा में अचल प्रतीत होते है। के. एस. सिंह (1998) तथा सच्चिदानंद आर. आर. प्रसाद ने मवासी जनजाति को कोरकू की उपजाति माना है जबकि एच. एल.शुक्ला (1998) तथा शिवकुमार तिवारी (2002) का मानना है कि कोल जनजाति के योद्धा भाग ही मवासी जनजाति है। इन्हे राजकोरकू कहा जाता है। ऐसी मान्यता है कि जिस प्रकार ब्राम्हण हिन्दुओं में श्रेष्ठ है, उसी प्रकार कोरकू की विभिन्न उपजातियों में राजकोरकू अतः मवासी श्रेष्ठ है। मवासियों के सामाजिक संस्तरण में तो ऊपर आ गए है परंतु इनकी आर्थिक स्थिति, रहन सहन, शैक्षणिक स्थिति आदि बहुत पिछडे हुए है।जो कि विकास में बाधक सिद्ध हो रही है। मवासी जनजाति के रीति रिवाजों में हिन्दुओं के रीति रिवाजों का प्रतिबिंब स्पष्ट दिखाई देता है। इनका सामाजिक स्तर तो ऊँचा है परन्तु अन्य सभी स्तर बहुत निम्न है।

1. मवासी जनजाति की सामाजिक, आर्थिक व शैक्षणिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. मवासी जनजाति की विकास की चुनौतियों का अध्ययन करना।
3. मवासी जनजाति के विकास हेतु शासकीय व गैरशासकीय संगठन द्वारा चलाई जा रही योजनाओं के प्रभाव का अध्ययन करना।

अध्ययन का समग्र :–शोध कार्य हेतु अध्ययन का समग्र छिंदवाड़ा जिला में निवासरत समस्त मवासी जनजाति है।

अध्ययन की इकाई :–शोध कार्य हेतु अध्ययन की इकाई के रुप छिंदवाड़ा जिला में निवासरत मवासी जनजाति का परिवार है।

निदर्शन पद्धति :–छिंदवाडा जिला कें बिछुआ ब्लॉक के छः मवासी जनजाति बाहुल्य गॉवों का चयन किया गया है प्रत्येक गॉव से दैव निर्दशन की लॉटरी विधि द्वारा 10–10 परिवारों का चयन कर कुल 60 मवासी जनजाति परिवारों का चयन किया गया है।

तथ्यों संकलन के स्त्रोत :–शोधकर्ता द्वारा तथ्यों के संकलन हेतु प्राथमिक व द्वितीयक स्त्रोत का चयन किया गया है।

प्राथमिक स्त्रोत :–शोधकर्ता ने प्राथमिक सूचना अवलोकन, साक्षात्कार अनुसूची व साक्षात्कार प्रविधियों का प्रयोग कर एकत्र की है।

द्वितीयक स्त्रोत :– द्वितीयक स्त्रोत अथवा सामग्री वह सूचना है जो पहले से ही उसी प्रकार के अनुसंधान अथवा किसी सामान्य उद्देश्य के लिए सरकारी या अर्द्धसरकारी संस्था, व्यापारिक एवं निजि संस्थाओं आदि द्वारा एकत्र की जाती है। शोधकर्ता ने अध्ययन के लिए पुराने रिपोर्ट, लेख, पुस्तकें, जनरल, अखबार तथा दस्तावेज आदि द्वितीयक स्त्रोत का प्रयोग किया है।

1. अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक 45.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पास 1 एकड से कम आकार का खेत है जो स्पष्ट करता है कि मवासी जनजाति के व्यक्तियों के पास बहुत ही कम कृषि भूमि है तथा 86 प्रतिशत उत्तरदाताओं की कृषि भूमि असिंचित है अतः मवासी जनजाति का निवास स्थान सतपुड़ा की पहाडियों पर होने के कारण यहॉ की जमीन अधिक पथरीली है व पानी का भी अभाव है ।
2. अध्ययन क्षेत्र में 55 प्रतिशत उत्तरदाता आज भी कृषि कार्यो व विवाह आदि के लिये साहूकार से ऋण लेते है। उन्हें सरकार द्वारा ऋण हेतु चलांई जा रही योजनाओं से ऋण नही मिलता है। फलस्वरूप वे साहूकार से 3 रूपये ये 10 रूपये सैकड़ा तक की ब्याजदर पर ऋण लेते है तथा 81.8 प्रतिशत उत्तरदाता ऋण को साहूकार के खेंतों पर खेतिहर मजदूर के रूप में काम करके व अन्य कार्य करके चुकाते है तथा इस प्रकार कार्य करने पर इन्हें मजदूरी भी कम दी जाती है ।
3. अध्ययन क्षेत्र में 51.6 प्रतिशत उत्तरदाताओं के बच्चें भी रोजगार में सलंग्न है जो बालश्रम की अधिकता को दर्शाता है। इन बच्चों से श्रम अधिक कराया जाता है व उन्हें मजदूरी भी कम दी जाती है व बच्चों के काम करने के कारण वे शिक्षा की ओर ध्यान नही देते है व शैक्षणिक रूप से अत्याधिक पिछड जातें है ।
4. अध्ययन क्षेत्र में 81.6 प्रतिशत उत्तरदाताओं के घरों में मनोरंजन हेतु कोई साधन उपलब्ध नही है संचार के वर्तमान दौर में भी इस क्षेत्र मे उत्तरदाताओं के पास साधन न होना यह स्पष्ट करता है कि इनकी आर्थिक स्थिति कितनी दयनीय है व ये समुदाय मुख्य धारा से कितना अधिक कटा हुआ है ।
5. आध्ययन क्षेत्र में 57.5 प्रतिशत उत्तरदाता वनोंपज व कृषिउपज को हाट बाजार में बेचते है । अतः स्पश्ट होता है कि आज भी सरकार द्वारा मवासियो की कृशिउपज व वनोंपज की ब्रिकी हेतु वांछित व्यवस्था नही कराई गई है। दुर्गम मार्ग होने के

कारण हाट बाजार में वनोपज व कृषिउपज बेचने के लिये इन्हें 10–15 किलोमीटर पैदल चलकर हाट आना पडता है जिससे इन्हें अत्याधिक कठिनाइयों का सामना करना पडता है ।

6. अध्ययन क्षेत्र में 81.6 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मत है कि आधुनिकीकरण ने अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया है। व 46.9 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मत है कि आधुनिकीकरण के परिणामस्वरूप आय में तों बहुत कम वृद्धि हुई है जबकि खर्चो में बहुत अधिक वृद्धि हुई है । अतः स्पष्ट होता है कि मंवासी जनजातीय क्षेत्रों में भी आधुनिकीकरण के नकारात्मक प्रभाव दृष्टिगोचर होते है ।
7. मवासी जनजाति में सर्वाधिक 55 प्रतिशत लोगो द्वारा रोगो के निवारण हेतु सर्वप्रथम जडी बूटी व तंत्र–मंत्र का प्रयोग किया जाता है तत्पश्चात रोग ठीक न होने की स्थिति में ही चिकित्सालय द्वारा चिकित्सा की जाती है, अध्ययन क्षेत्र में प्रत्येक गॉव में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र न होने के कारण भी यह असुविधा व आवागमन से बचने के लिये पहले तंत्र–मंत्र व जडी–बूटियों द्वारा ईलाज कराते थें।
8. अध्ययन के क्षेत्र में 60 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा आपसी झगड़ों का निपटारा जाति पंचायत द्वारा किया जाता है ।जो स्पष्ट करता है कि आज भी मवासी जनजाति में जाति पंचायत का विशिष्ट स्थान है ।
9. अध्ययन क्षेत्र में 67.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं को कृषि उपज व वनोंपज का उचित मूल्य प्राप्त नही होता है । जिसके कारण उन्हे अपनी मेहनत व श्रम का भी लाभ नही होता है व वे आर्थिक रूप से विपन्न ही बनें रहते है ।
10. अध्ययन क्षेत्र में 54.5 प्रतिशत उत्तरदाता रोजगार की तलाश में पलायन करते है अतः स्पष्ट होता है कि मवासी जनजाति जिन गॉवों में निवास करती है वहॉ पर रोजगार के पर्याप्त साधन नही है, अपितु यह जनजाति अपने क्षेत्रों को छोडकर अन्य स्थानों पर बहुत ही कम पलायन करती है तथापि इनमें पलायन की दर बढ रही है जो कि इनकी आर्थिक विपन्नता व रोजगार की अनापूर्ति को दर्शाता है।
11. अध्ययन क्षेत्र में 58.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं के बच्चे शाला नही जाते, जो स्पष्ट करता है कि मवासी जनजाति में आज भी ‘शालायीन शिक्षा की प्राप्ति नही हो रही

है। केवल 41.6 प्रतिशत विद्यार्थी ही शाला जाते है। वे भी केवल शासकीय योजनाओं के लाभार्थ विद्यालय जाते है।

12. अध्ययन क्षेत्र में 31.4 प्रतिशत उत्तरदाताओं के बच्चों के शाला न जाने का कारण आर्थिक विपन्नता है, तथा 22.8 प्रतिशत उत्तरदाताओं के बच्चों के शाला न जाने का कारण भाषा संबंधी कठिनाई का होना है जो स्पष्ट करता है कि मवासी जनजाति के बच्चों के शाला न जाने का मुख्य कारण लोगों की आर्थिक स्थिति कमजोर होना है। पालकों की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण वे बच्चों के लिए वांछित संसाधन उपलब्ध नही करा पाते है, व बच्चों के काम पर जाने के कारण भी वे शाला नही जा पाते है। अध्ययन में मवासी भाषा के उपयोग न होने के कारण भी बच्चों को शिक्षार्जन में कठिनाई आती है।
13. अध्ययन क्षेत्र में 82.8 प्रतिशत उत्तरदाताओ के बच्चे हिन्दी माध्यम के विघालयों में शिक्षा अर्जित करते हैं तथा 17.1 प्रतिशत विद्यार्थी मवासी माध्यम में शिक्षा अर्जित करते है। एवं कोई भी विद्यार्थी अंग्रेजी माध्यम में शिक्षा अर्जित नही करता।
14. अध्ययन क्षेत्र में 43.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं को सरकार द्वारा चलाई जा रही कल्याणकारी योजनाओं की बहुत कम जानकारी है जो स्पष्ट करता है मंवासी जनजाति क्षेत्र में सरकारी योजनायों की पर्याप्त जानकारी का अत्याधिक अभाव है।
15. अध्ययन क्षेत्र में 48.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं को सरकार द्वारा चलाई जा रही कल्याणकारी योजनाओं का लाभ नही मिल रहा है व सबसे कम 21.6 प्रतिशत उत्तरदाताओं को ही सरकार द्वारा चलाई जा रही कल्याणकारी योजनाओं का लाभ मिल रहा है। अतः उपरोक्त विवरण द्वारा स्पष्ट होता है कि मंवासी जनजाति क्षेत्र में सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन की स्थिति अत्याधिक दयनीय है।
16. अध्ययन क्षेत्र में 38.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मत है कि सरकारी कर्मचारीयों के लाभ प्राप्ती में सहायक भूमिका नही निभाने के कारण उन्हें कल्याणकारी योजनाओं का लाभ नही मिल पाता है। क्योकि कर्मचारीयों सहयोग न मिल पाने के कारण न उन्हें योजना की जानकारी मिलती है और न पर्याप्त मार्गदशन प्राप्त होता है।
17. अध्ययन क्षेत्र में कोई भी गैर सरकारी संगठन कार्यरत नही है। जिसका कारण इन क्षेत्रों का दुर्गम स्थान पर स्थित होना व गैर सरकारी संगठनों को इन क्षेत्रों में कार्य करने से लाभ करने से लाभ की प्राप्ती कम होना है।

18. अध्ययन क्षेत्र में 33.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं के घरो में विद्युत की सुविधा उपलब्ध नही है जो मंवासी जनजातिय क्षेत्रों की पिछड़ेपन की स्थिति को स्पष्ट करता है। तथा विद्युत किसी भी गांव में दिन में छः घण्टो से ज्यादा नही रहती है अतः विद्युत के अभाव के कारण मंवासी जनजाति को कृषि कार्यो में बाधा उत्पन्न होती है। साथ ही बच्चों की शिक्षा को प्रभावित करती है। जो कि विकास में बाधक तत्व है।
19. अध्ययन क्षेत्र में 50 प्रतिशत उत्तरदाताओं के गांव तक का पहुँच मार्ग कच्चा है। अतः स्पश्ट होता है कि मंवासी जनजाति के निवासित कई गांवो में आज भी पहुँच मार्ग कच्चा है जिससे विकास की गति में अवरोध उत्पन्न होता है।
20. अध्ययन क्षेत्र में 35 प्रतिशत उत्तरदाताओं की कृषि की मुख्य समस्या सिंचाई के लिये पर्याप्त संसाधनों का आभाव होता है जो स्पष्ट करता है कि मंवासी जनजाति के पास कृषि हेतु सिंचाई के भी उपयुक्त संसाधन नही है जिसके कारण इनका कृषि उत्पादन बहुत कम होता है व ये आर्थिक विपन्न ही बने रहते है।
21. अध्ययन क्षेत्र में 45 प्रतिशत उत्तरदाताओं को कृषि उपज व वनोपज की बिक्री में मुख्य समस्या सहकारी समिति के सदस्यों का बिक्री में सहायक नही होना है क्योकि सहकारी समिति उत्पाद को हाट या अन्य व्यापारीयों को बेचना पड़ता है। जिससे उन्हें उचित मुल्य प्राप्त नही होता है
22. अध्ययन क्षेत्र में बच्चो के शैक्षणिक स्तर में कमी का मुख्य कारण 25 प्रतिशत लोग हाईस्कूल गांव से अधिक दूरी पर स्थित होना व मार्ग दुर्गम होना मानते है। व 21.6 प्रतिशत उत्तरदाता शैक्षणिक स्तर में कमी का मुख्या कारण आर्थिक स्थिति का कमजोर होना मानते है।
23. अध्ययन क्षेत्र में 45 प्रतिशत उत्तरदाता मूलभूत आवश्यकताओं की अनापूर्ति का मुख्य कारण पर्याप्त रोजगार न होने के कारण आर्थिक अभाव को मानते है। अतः स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में रोजगार की कमी के कारण व्यक्ति रोटी, कपड़ा व मकान भी प्राप्त नही कर पाते है।
24. अध्ययन क्षेत्र में 35 प्रतिशत उत्तरदाता स्वंय के विकास हेतु मुख्य सुझाव रोजगार के पर्याप्त साधन मुहैया कराये जाये ऐसा कहते है। अतः स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में रोजगार के अभाव के कारण जनजातिय लोगों का आर्थिक व अन्य विकास अवरूध्द होते है।

25. अध्ययन क्षेत्र में 100 प्रतिशत उत्तरदाता हिन्दू धर्म को मानते है। अंतः इससे स्पष्ट होता है कि मवासी जनजाति में धर्मांतरण नही हुआ है अतः सभी 100 प्रतिशत उत्तरदाता हिन्दु धर्म को मानने वाले है अतः इस क्षेत्र में क्रिश्चन मिश्नरीयों द्वारा धर्मांतरण कराया जाने की समस्या नही है ।
26. अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक 78 प्रतिशत उत्तरदाता संयुक्त परिवार में निवास करने वाले है अतः ज्ञात होता है कि मवासी जनजाति में अन्य जनजातियों की भांति विवाह उपरांत पुत्र को परिवार को पृथक करने की प्रथा नही है।सामान्यतः जब तक पिता जीवित रहते है तब तक परिवार के सभी सदस्य साथ रहतें है, परंतु कुछ परिवारो में लड़ाई झगडे के कारण परिवार पहले भी पृथक हो जातें है ।
27. मवासी जनजाति में 62.7 प्रतिशत विवाह चिथौरा विवाह प्रथा द्वारा होते है जो कि स्पष्ट करता है कि इस जनजाति मे स्वेच्छा से जीवनसाथी चुनने की स्वतंत्रता बहुत कम है जो भी सभ्य हिन्दु समाज के प्रभाव स्वरूप है ।
28. अध्ययन क्षेत्र में 56.6 प्रतिशत उत्तरदाता अन्य जातियों के साथ कम संपर्क रखते है जो कि इस जाति की पृथक्कता की प्रवृत्ति को दर्शाता है अतः इस जनजाति के लोग अन्य जाति के लोगों के साथ कम ही संपर्क रखतें है इन्हे अन्य लोगो के साथ अधिक घुलना मिलना पसंद नही होता है ।
29. अध्ययन क्षेत्र में 65 प्रतिशत उत्तरदाता परिवार में संतान के रूप में लडका व लडकी दोनो को बराबर महत्व देते है अतः स्पश्ट होता है कि मवासी जनजाति में लडका व लडकी में भेद नही किया जाता है ।
30. मवासी जनजाति के उत्तरदाताओं में सर्वाधिक 85 प्रतिशत उत्तरदाताओं के घर कच्चे है जो स्पष्ट करता है इस क्षेत्र के उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति अत्यंत कमजोर है । इनके घर लकडी से बने है तथा इनके घरों का आकार भी सिर्फ एक कमरे का होता है जो स्पष्ट करता है कि ये बहुत ही दयनीय स्थिति मे जीवन यापन करते है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अग्निहोत्री सीमी (2010): **"अवेयरनेस अमॉग रुरल वूमन एण्ड देयर डेवलपमेंट"** द इण्डियन जनरल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, वाल्यूम 56 नं0 4

2. चन्दा गोविन्द (2006) **''ट्राइबल डेवलपमेंट इन इण्डिया''** सेज पब्लिकेशन : न्यू देहली
3. चक्रवर्ती मानस व लामा मारसा(2009) **''पॉलीटिकल इम्पावरमेंट ऑफ भिड्यूल ट्राइब्स इन इण्डिया ''** इण्डियन जनरल ऑफ पॉलीटिक्स वाल्यूम 43 नं 3 पेज नं 67
4. देवगोनकर एस.जी. एण्ड देवगोनकर एस.एस. (1990) **''द कोरकू ट्राइब्लस''**कान्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनीः न्यू देहली
5. दीपक कुमार आडक (2003) **:–''डेमोग्राफी एण्ड हेल्थ प्रोफाइल ऑफ द ट्राइबल्स :** ए स्टडी ऑफ म.प्र.'' अनमोल पब्लिकेशन दिल्ली
6. डी एस बघेल (2005) **''जनजातिय समाज का समाजशास्त्र''** कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल
7. मलिक अय्युब (2010) **''डेवलपमेंट प्रोग्राम एण्ड द पार्टीसिपेशन ऑफ द ट्राइबल''** इण्डियन जनरल ऑफ रिजनल साईंस वाल्यूम 42 नं 2 पेज नं 127
8. मोहंती मुक्तीकंदा (2009) **''डेवलपमेंट एण्ड ट्राइबल डिसप्लेसमेंट''** इण्डियन जनरल ऑफ पॉलीटिकल साईंस वाल्यूम 52 नं 2 पेज नं 345
9. सच्चिदानंद आर. आर. प्रसाद (1996) **:–''इन्साइक्लोपीडिया : प्रोफाइल ऑफ इंडियन ट्राइब''** डिस्कवरी पब्लि िंग हाउस, नई दिल्ली
10. साह डी. सी. व सिसोदिया यतिन्द्र सिंह (2004) **''ट्राइबल इसूज इन इण्डिया''** रावत पब्लिकेशन, न्यू देहली
11. शर्मा आर. के एण्ड तिवारी एस. के. (2002)**''ट्राइबल हिस्ट्री ऑफ सेंट्रल इंडिया''** आर्यनस् बुक्स इंटरनेशनल, नई दिल्ली।
12. शर्मा ब्रम्हदेव (2001) **''आदिवासी विकास ''** म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
13. सुधांशु भंड़ारी (2010)**''ट्राइबल इंडियास ट्राइस्ट विथ डेवलपमेंट''** मेंन इन इंडिया वाल्यूम 90, नं 3–4, सीरियल्स पब्लिकेशन, नई दिल्ली
14. सिंह के. एस. (1998)**''इंडियास कम्यूनिटी''** वाल्यूम 5, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटीज प्रेस, दिल्ली

इंदिरा सागर बाँध परियोजना का समिक्षात्मक अध्ययन विस्थापितों के विषेश संदर्भ में

डॉ. त्रिपत कौर चावला
प्राध्यापक समाजशास्त्र
माता जीजा बाई शा.
कन्या महाविद्यालय,
इन्दौर म.प्र.

प्रस्तावना

नर्मदा नदी कछार क्षेत्र भारत का पांचवा सबसे बड़ा जल–प्रपाह क्षेत्र है। नर्मदा नदी के बहाव की कुल लम्बाई 1312 किलोमीटर है। यह मध्यप्रदेश के शहड़ोल जिले में अमरकंटक से निकलती है। यह पश्चिम वाहिनी है जो कि मध्यप्रदेश, गुजरात एवं महाराष्ट्र से गुजरते हुए खमबात की खाड़ी के निकट अरब सागर में समाहित होती है। अतर्राज्यीय कछार होने के कारण भारत सरकार ने 1969 में नर्मदा जल विवाद प्राधिकरण को गठन किया, जिसके द्वारा 28 मिलियन एकड़ फीट पानी में से 18.25 मिलियन एकड़ फीट पानी मध्यप्रदेश को उपयोग हेतु आवंटित किया गया। अभी तक इसकी जल विद्युत क्षमता का 36.66 प्रतिशत दोहन किया जा चुका है।

नर्मदा जल विवाद प्राधिकरण की अनुशंसा के अनुसार नर्मदा नदी पर कुल 29 वृहद, 158 मध्यम तथा 3000 लघु स्तर की परियोजनाओं का निर्माण प्रस्तावित है। इन परियोजनाओं के निर्माण से 3000 मेगावाट विद्युत का उत्पादन होगा और 27.55 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई संभव होगी। इंदिरा सागर परियोजना (1000 मेगावाट) मध्यप्रदेश की सबसे बड़ी जल विद्युत परियोजना है तथा इसकी कुल जल भंड़ार क्षमता 12.22 बिलियन क्यूबिक मीटर है जो भारत वर्ष में अधिकत्म होगी। इसके अतिरिक्त यह परियोजना निम्न प्रवाह की तीन अन्य परियोजनाओं मध्यप्रदेश में ओंकारेश्वर परियोजना तथा महेश्वर परियोजना एवं गुजरात में सरदार परियोजना को निरंतर जल आपूर्ति प्रदान करेगी।

इन्दिरा सागर बाँध परियोजना खण्डवा जिले में पुनासा गाँव से 12 किलो मीटर दूरी पर निमार्ण किया गया है। यह परियोजना सन् 1992 में शुरू हुई थी, इसे सन् 2005 में पूर्ण किया गया।

इस परियोजना से 250 गाँव और 1,75000 लोग विस्थापित हुए। इस परियोजना से 91348 हेक्टेअर जमीन एवं 41,444 हेक्टेयर वन भूमि डूब गया। इस परियोजना का मूल उद्‌देश्य 123000 हेक्टेयर भूमि की सिंचाई के लिये जल उपलब्ध कराना है। इससे 1000 मेगावाट बिजली उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है।

यह परियोजना नमर्दा घाटी प्राधीकरण मध्यप्रदेश शासन और नेशनल हाईड्रो कॉर्पोरेशन की सहायता से चलाया जा रहा है। इस परियोजना की लागत 5000 करोड़ रूपये है। इस बाँध की ऊँचाई समुद्र सतह से 236 मीटर है।

इस परियोजना से 69 गाँव पूर्ण रूप से विस्थापित हुए है। 180–186 गाँव जो खण्डवा, हरदा, देवास और होशंगाबाद जिले के गाँव हैं आंशिक रूप से डूब में आये है।

डूब क्षेत्र में सबसे बड़ा कस्बा और तहसील मुख्यालय हरसूद है, जिसकी जनसंख्या 25000 एवं 5000 परिवार थे, को 30 जून 2004 को पूर्णरूप से विस्थापिता किया गया। अतः 30 जून 2004 को हरसूद शहर इतिहास बन गया है। 30 जून 2004 को विस्थापित की गई ऐतिहासिक हरसूद शहर को 1815 में राजा हर्षवर्द्धन ने बसाया था। आधुनिक समय का हरसूद दर – बदर होने से पहले तहसील का दर्जा पाने वाला शहर था, जो कि अनेक गाँवों से घिरा था। वहाँ के लोगों का पुश्तैनी कारोबार था। किसानों के लिये खेती थी, मजदूरों के लिये मजदूरी, कुल मिलाकर सबके लिये कुछ न कुछ था।

विस्थापितों का विकास तभी सम्भव है, जब समाज की मुख्यधारा में इन्हें सम्मिलित कर उनकी उपयोगिता समाज के विकास कार्यों में लगाया जाए। इसके लिए विभिन्न नीतियों तथा स्थानों पर पुनर्वासित लोगों का प्रभावी ढंग से पुनर्वास किया जाए।

इंदिरा सागर बाँध परियोजना की जानकारी :–

बाँध	:	पुनासा गाँव जिला खण्डवा, म.प्र.
लागत	:	4355.57 करोड़ रू. (सितम्बर 2000)
कृषि योग्य क्षेत्र	:	1.75 लाख हेक्टेयर
वार्षिक सिंचाई	:	2.70 लाख हेक्टेयर
लाभावान्वित ग्राम की संख्या	:	564

प्रतिवर्ष खाद्यान्न उत्पादन : 4.00 लाख टन प्रतिवर्ष अतिरिक्त
फसलों का उत्पादन : 10. 35 लाख
बाँध की लम्बाई : 653 मीटर
बाँध की ऊचाई : 92 मीटर
कंक्रीटिंग : 14.00 लाख घनमीटर
बाँध की चौड़ाई : 20 मीटर
संस्थापित विद्युत क्षमता : 1000 मेगावाट
प्रथम चरण विद्युत उत्पादन : 2698 मिलियन युनिट प्रतिवर्ष
जलाशय की क्षमता : 12.2 अरब घनमीटर
जल नियंत्रण के लिए : 20 मी. चौड़े 17 मी. ऊँचे 20 रेडियल गेट

पुनर्वास की अवधारणा एवं संबंधित नीतियॉ :–

पुनर्वास का सामान्य अर्थ, पुनः वास अर्थात पुनः बसना ही पुनर्वास हैं, समाज विज्ञान के संदर्भ में किसी व्यक्ति या समाज द्वारा एक भोगोलीक क्षेत्र को छोड कर दूसरे भोगोलीक क्षेत्र में जा कर बसना ही पुनर्वास हैं।''

पुनर्वास साधारण तहः विस्थापीत लोगों का पुनः स्थिापीकरण तथा उनको समाज की सामान्य सुख सुविधा उपलब्ध कराना है तथा उक्त समुदाय को भोतीक पर्यावरण में स्थापीत करना है। जबकि नुनर्वास भोतीक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परीवेश के गठन के साथ साथ परंपरागत आजीवीका का पुनः स्थापना कहलाता है।

''पुनर्वास का एक विशिष्ट अर्थ एक उपचार है जिसमें मद्यसेवक, मानसिक रूप से विक्षित, विचलीत बच्चे तथा समाज के अर्ध विचलीत लोगो के उपचार को पुनर्वास कहा जाता है।'' साथ ही पुनर्वास में पुनर्वासीत लोगों को जीवन जीने की सारी सुख सुविधाए उपलब्ध कराना होती है जोकी उनके पास विस्थापन से पुर्व उपलब्ध थी।

बड़े बाँधों में स्वभावीक रूप से अनेक गॉव डूब छेत्र में आजाते है। डूब से प्रभावीत परिवारो के पुनर्वास एवं पुर्नस्थापन का मुददा मात्र तकनीकी ही नहीं बल्की मानविय सवेदनाओं से भी जुडा होता है। इंदरा सागर बाँध परियोजना के

अंतर्गत पुर्णतः डूब में आने वाले गॉव की संख्या 69 है, जबकि आंशिक रूप से डूब में आने वाले गॉव 180 है। इस प्रकार परियोजना से खण्डवा, हरदा एवं देवास जिले के 249 गॉव प्रभावित होंगे वर्ष 2003 के आकलन के आधार पर प्रभावित होने वाले व्यक्तियों की संख्या लगभग 1,26,000 है। परियोजना के विस्थापीतों को अन्य स्थान पर बसाने के लिए सतवास, छनेरा, सालिया, पुनासा, रजुर, गोएडा, मालगॉव, कालापाठा आदि गॉवों में पुनर्वास स्थल विकसीत किए गए हैं। पुनर्वास नीति में विभिन्न प्रकार से प्रभावित परिवार भूमिहीनों आदि के लिए विकसित प्लाट, कृषि योग्य भूमि, नगद अनुदान, मुआवजा, घरेलू सामान ढोने हेतू परिवहन सुविधा, ऋण सुविधा आदि अनेक प्रकार के प्रावधान दिए गए। इसी के साथ विद्युत, पानी, सड़क, स्कूल, दुकान, चिकित्सा के पूजा स्थल, औद्योगिक विकास केन्द्र, सामुदायिक केन्द्र आदि सहित पुनर्वास क्षेत्र विकसित किए गए है। इस परियोजना का एक और पहलू यह हैं कि यह परियोजना में डूब क्षेत्र में आने वाले गॉव के लोगों तक हि सिमित नहीं बल्कि खिरकीया से तलवडीयां गॉव तक 23 कि.मी. लम्बा रेल मार्ग भी डूब में आया जिसके लिए 343 करोड़ की लागत से 57 कि. मी. लम्बा रेल मार्ग भी बनाया हैं। पुनर्वास स्थल का चयन म.प्र. शासन द्वारा गठित टास्क–फोर्स द्वारा किया गया हैं। जिसमें 8 लोगों की कमेटी द्वारा निर्णय लिया जाता है अब तक 10 पुनर्वास स्थल पूर्ण रूप से एवं 17 पुनर्वास आंशिक रूप से एवं हरसूद शहर हेतू पूनर्वास स्थल छनेरा का विकास किया गया है।

इसमें से हरसूद शहर को छोड़कर पुनर्वास हो चुके 25,695 परिवारों में से 780 परिवार ने ही इन पुनर्वास स्थलों पर रहना पसंद किया हैं एवं शेष ने पुनर्वास नीति के तहत् इसके एवज में 20 हजार रूपये लेने स्वीकार किया हैं।

वर्गवार डूब में आ रही भूमि का विवरण

कृषि भुमि	44376 हेक्टेयर
वन भुमि	40332 हेक्टेयर
अन्य भुमि	6653 हेक्टेयर
कुल	**91361 हेक्टेयर**

डूब में आने वाले गॉव (जिलानुसार एवं तहसीलानुसार)

क्र.	जिला	तहसील	प्रभावित गॉव संख्या
1.	खण्डवा	खण्डवा	20 गॉव
2.	हरसूद	हरसूद	142 गॉव
3.	देवास	कन्नौद	20 गॉव
4.	देवास	खातेगॉव	19 गॉव
5.	हरदा	हरदा	39 गॉव
6.	हरदा	खिरकीया	9 गॉव
		कुल गॉव	**249**

आंशिक प्रभवित होने वाले 174 गॉव में से 38 गॉव ऐसे है जिसमें मात्र शासकिय भूमि ही प्रभावित होती हैं।

हरसूद में पुनर्वास एवं पुर्नस्थापन के कार्यो की गंभीरता से देखते हुए प्रमुख सचिव स्तर के अधिकारियों के अन्तर्गत नर्मदा घटी विकास विभाग का गठन किया गया था। वर्ष 2002 तक कार्य कर लिया गया था। पूर्ण जलाशय स्तर पर प्रभावित होने वाले भाग का सर्वे कर उनके किनारो पर पत्थरों को लगा कर चिन्हित किया गया था। इसके अलावा भी पूर्ण जलाश्य स्तर के बाड़ से प्रभावित होने वाले भाग का भी निर्धारण किया गया। प्रभावित परिवार का उनके मकानों, जमीनों एवं अन्य सम्पत्तियों का 64 कालम के कार्य में सर्वे, गांवों में केम्प लगा कर एवं घर–घर जाकर किया गया इसमें प्रभावित परिवारों एवं उनकी जमीन–जायदाद, सामाजिक परिवेश एवं आर्थिक स्थिति आदि सभी जानकारीया शामिल की गई। पुनर्वास स्थलों का विकास प्रांरभ किया जिसमें छनेरा पुनर्वास स्थल भी शामिल था जो विशेष तौर पर हरसूद को ध्यान में रखकर विकसित किया गया।

इन्दिरा सागर परियोजना में मुख्य बांध का निमार्ण कार्य वर्ष 1992 से प्रांरभ हुआ था इसके पूर्व काफर डेग व्यपवर्तन सुरंग आदि का निमार्ण कार्य भी प्रारंभ किया जा चुका है था इसमें प्रभावित होने वाले गॉव धरी कोटला को पूर्ण रूप से वर्ष 1993 में खाली कराया गया।

पुनबसाहट एवं पुनर्वास नीति :–

सरदार सरोवर परियोजना अकेला एसा उदाहरण नहीं है जिसमें की पुर्नव्यवस्थापन और पुनर्वास की समस्या उत्पन हुई हो। दूनिया के हर शहर में पुनर्बसाहट और विस्थापन की समस्या है। प्रत्यैक देश विकास परियोजनाओं के लिए भूमि अधिग्रहित कर उनके अधिकार का उपयोग नीतिगत कार्य योजना तैयार कर पुर्नव्यवस्थापन की समस्या का सामना करता है। सभी देश भूमि अधिग्रहण करते है। भूमि और सम्पत्ती के मुआवजे का भुगतान न करके विस्थपीत परिवारो के लिए अतिरिक्त पैकेज उनके पुनर्वास के लिए अपनाते है।वर्तमान अंतर्राज्जय परिदृश्य में चिन एसा देश है, जो अपने निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार विस्थापन की समस्या और विकास परियोजनाओं का हल अपने निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार सफलता पुर्वक कर रहा है।

विश्व बैंक की पुनर्वास नीति :–

दुनिया के क्षेत्र अनुभवों और उनके परिणामों तथा विकास को गतिशीलता प्रदान करने के आधार पर दुनिया भर में विश्व बैंक ने सन् 1980 से विभिन्न चर्णो में अपनी पुर्नव्यवस्थापन नीति विकसीत की जिसमें 1996, 1988, और 1990 में नीतिगत सुधार किए। विश्व बैंक के पुर्नवीस्थापन नीति के प्रमुख तथ्य इस प्रकार है यहॉ विस्थापन को ठुकराना असम्भव है वहॉ बैंक का उद्देश्य की प्रतिव्यक्ति के लिए विकास कार्यक्रम की भांती पुर्नव्यवस्थापन योजना के कारण उधार आदी की व्यवस्था करना यह सब पुर्नव्यवस्थापन योजना के साथ प्रोजेक्ट ड़िजाइन का एकीक्रत भाग है विस्थापीत व्यक्ति 1. उसकी क्षतिपुर्ति के लिए मूआवजा पुर्नस्थापन मूल्य से कर सकता है। 2. परियोंजना लाभांश में अपने भागीदारी के अवसर देकर घुपन्तू लोग समुह में एक जगह रह कर अपने छोड़े गये स्थान और पुर्नस्थापन स्थान के बिच कम से कम दूरी बना कर नये सामाजिक, सांस्कृतिक और प्राकृतिक वातावरण (पर्यावरण) को विस्थापीतो को अनूकूल बनाने की सुविधाए उपलब्ध करा सकता है। उनका कार्य स्थल और आर्थिक अवसरो के बिच की दूरी सावधानी पूर्वक संतूलित होना चाहिए। पूर्नवासित और वहॉ की बसाहट के लोगों की सक्रिय भागीदारी से पुर्नवास की योजना को प्रोत्साहीत किया जा सकता है। पूनर्वासीत और स्थानिय लोगों की सामाजिक और सांस्कृतिक संस्थाओं का विस्तार पुर्नव्यवस्थापन, प्रक्रिया के साथ साथ स्थानान्तरीत होना चाहिए।

पुर्नस्थापीत नय समुदाय का परीर्वतनीय स्थान तंत्र आधारभूत संरचना और सेवाओं से पुर्ण होना चाहिए जो क्षेत्रीय सामाजिक, आर्थिक दृष्टीकोण से संग्रहित होने लायक हो।स्थानिय समुदायों को चाहिए की वे पुर्नविस्थापीत लोगों के सामाजिक और पर्यावर्णीय प्रभाव में होने वाले परीवर्तन से जनसंख्या में वृधि से उन पर पड़ने वाले प्रभावों को संभव बनाऐं और उनके बिच तालमेल बनाऐं। विशेष समुदाय के लोगों अल्पसंख्यक और अन्य समुदाय के लोगों का भी भूमि और संसाधनों पर जो कि परियोजना के लिए अधिग्रहित किए गए हो। उनके बदले उन्हे सही भूमि अधोसंरचना और अन्य मुआवजे मुहैया कराने चाहिए। भूमि का कानूनी हक न होने की स्थिति में कुछ समुदाय को मुआवजा और पुनर्वास की सुविधा उपलब्ध होनी चाहिए।

राष्ट्रीय नीति :–

भारत सरकार रोजगार एवं क्षेत्र मंत्रालय ग्रामीण विकास विभाग वर्ष 1997 तक परियोजना से विस्थापित या प्रभावित होने वाले परिवारों के पुर्नव्यवस्थापन और पुनर्वास के लिऐं कोई राष्ट्रीय नीति निर्धारित नहीं थी। कुछ राज्यों और केन्द्रीय सरकार की पुनर्व्यवस्थापन और पुनर्वास संबधी अपनी स्वयं की नीतियॉ और मार्गदर्शिकाऐं थी। इस तरह के दृष्टिकोण में भिन्नता के कारण परियोजना का कार्य लम्बित पडा रहता था जिससे परियोजना की लागत भी बढती थी। असंतोष के कारण पुनर्व्यवस्थापन और पुनर्वास की समस्याऐं भी थी। इन्ही सब बातों को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने एक ''यूनिफार्म पॉलिसी'' तैयार की। इस नीति में पुनर्व्यवस्थापन और पुनर्वास के लिये न्यून्तम आधारभूत मार्गदर्शिका वहॉ के निवासियों और परिवारों के लिए लाभ आदि को ध्यान में रखकर एक पैकेज तैयार किया। इस नीति का प्रारम्भिक उद्देश्य विस्थापन के दुख को कम करना था और पुनर्व्यवस्थापन और पुनर्वास की प्रक्रिया को तैयार कर प्रभावित परिवारों का जीवन स्तर अपने पहले के स्तर के समतुल्य करना है। उसके अतिरिक्त विस्थापित परिवारों के पुनर्व्यवस्थापन के लिए गांवों और कालोंतियों की आधारभूत संरचना और न्यूनतम सुविधाऐं मौहया करना है। पुनर्व्यवस्थापन और पुनर्वास परियोजना की कीमत प्रोजेक्ट में शामिल की जायेगी।

यदि विस्थापित परिवार पहले से स्थापित समुदायों के बिच स्थापित होते है तो उन्हे भी उसी समुदाय में समानता के साथ रहने का अधिकार होगा। उन्हें भी अपनी पहचान और संस्कृति अपनाने का पूरा – पूरा अधिकार होगा। पुनर्वास ताथा पुर्नबसाहट के लिए तैयार किये जाने वाला सुनियोजित कार्यक्रम एक समय में ही पूरा कर लिया ताएगा। इस कार्यक्रम में प्रभावित समुदाय के प्रतिनिधि जिसमें महिलाऐं भी शामिल होगी।सह खातेदार बडे पुत्र और अविवाहित वयस्क पुत्रियां उन्हे अलग से दावेदार के रूप में मुआवजा और नगद सहयोग राशि पुनर्वास एवं पुनर्व्यवस्थापन के लिए दी जाए। कृषि आधारित प्रभावित परिवारों को उपजाऊ जमीन और रोजगार मूलक जैसे समेकित ग्रामीण विकास परियोजना ट्रायसेम आदि तथा निर्माण कार्य जरूरत मन्द परिवारो को उपलब्ध कराने का प्रावधान है। इस नीति का उद्देश्य जीवन जीने के लिए एक अच्छा वातावरण जिसमें रोटी, कपड़ा और छत की ग्यारन्टी हो।

इंदिरा सागर बाँध परियोजना से लाभ और हानि :–

परियोजना से होने वाले लाभ :–

विद्युत :–

- ✓ विद्युत स्थापित क्षमतर 1000 मेगावाट।
- ✓ प्रारंभिक अवस्था में कुल 26908 करोड़ यूनिट विद्युत का उत्पादन प्रतिवर्ष।
- ✓ मध्यम अवस्था में वर्षा की सेकण्डरी विद्युत को मिलाकर कुल 185 करोड युनिट का उत्पादन प्रतिवर्ष।

सिचांई :–

- ✓ परियोजना के अधिन कुल क्षेत्र 2.10 लाख हेक्टेयर।
- ✓ कृषि योग्य क्षेत्र 1.75 लाख हेक्टेयर।
- ✓ सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराया जाने वाला कुल क्षेत्र 1.23 लाख हेक्टेयर
- ✓ वार्षिक सिंचाई का लक्ष्य 1.69 लाख हेक्टेयर।
- ✓ पुनासा उद्वहन योजना द्वारा अतिरिक्त सिंचाई सुविधा कराया जाना लगभग 26,000 हेक्टेयर क्षेत्र में प्रस्तावित।
- ✓ परियोजना में कुल 564 गॉवों को सिचाई की सुविधा का लाभ।

- ✓ परियोजना से प्रतिवर्ष 4.00 लाख खाद्यान्न एवं अन्य फसलों का अतिरिक्त उत्पादन संभव।

मछली पालन :–

- ✓ परियोजना के जलाशय क्षेत्र में मछली पालन एवं उसको उद्योग के रूप में विकासित किया ताना प्रस्तावित।
- ✓ परियोजना से प्रतिवर्ष लगभग 1500 टन मछली उत्पादन का लक्ष्य।

उद्योग :–

- ✓ जल एवं विद्युत की उपलब्धता बढने तथा फसलो के उत्पादन में बढोत्तरी होने से निमाड़ एवं मालवा क्षेत्र में नये उद्योगों की स्थापना को बढावा।
- ✓ क्षेत्र में खुशहाली एवं समृद्धि के नये आयाम के अवसर।
- ✓ नगर पालिकाओं एवं औद्योगिक इकाईयों को 0.06 एम.ए.एफ. जल प्रदान किया जाना प्रस्तावित।

प्रशिक्षण :–

नर्मदा नगर में स्थापित आई.टी.आई. द्वारा डूब क्षेत्र के व्यक्तियों को विभिन्न व्यवसायों का प्रशिक्षण दिया जा रहा हैं।

शिक्षा :–

परियोजना तथा आसपास के क्षेत्र के बच्चों की उच्च शिक्षा हेतू नर्मदा नगर में एक केन्द्रीय विद्यालय की स्थापना सन् 2001 में कर दी गई हैं।

ताप विद्युत ग्रह को जल प्रदाय :–

ग्राम बीड़ के समीप प्रस्तावित 2000 मेगावाट के ताप विद्युत ग्रह को इस परियोजना सेजल प्रदाय।

पर्यटन :–

931 वर्ग किलोमीटर में फैला भारत का सबसे विशाल जलाशय पर्यटन की अभुतपूर्व सुविधाएँ मुहैया करायेगा जिससे अनुमानतः एक लाख पर्यटक प्रतिवर्ष लाभान्वित हो सकेगे।

बाँध से हानियाँ :–

जिस प्रकार एक और हम विकास चाहते है। तो दूसरी और हमें नुकसानों का भी सामना करना पड़ता है तथा बाँध से भी अनेक प्रकार की हानियाँ होती है।

1. कृषि भूमि डूब में जायेगी।
2. बाँध बनाने से उस क्षेत्र भू – गर्भिक संरचना का भय भूकम्प की संभावना गढ़ जाती है।
3. बाँध बनने से प्राकृतिक सम्पत्ति नष्ट हो जाती है।
4. बाँध बनने से आसपास की भूमि दल – दली हो जाती है। जिसे वह भूमि किसी उपयोग में नही आ पाती है।
5. बाँध बनाने से नदी के तटीय क्षेत्र में रहने वाले जनसंख्या परिवार प्रभावित होते है।

इंदिरा सागर बाँध से विस्थापन से लाभ एवं हानियां :–

विस्थापन से लाभ :–

1. विस्थापन से पुराने मकान को नयी जगह बनाने पर मकान में मजबूती बना रहता है।
2. विस्थापन होने से शासन द्वारा पेयजल की सुविधा दी जाती है।
3. विस्थापन होने से नयी जगह पर पंचायत घर या सामुदायिक हाल बनाया जाता है।
4. विस्थापन होने से नयी जगह पर जाने के प्राथमिक शाला बिजली सड़क मार्ग नालियों का निर्माण किया जाता है।
5. विस्थापन से गौशाला पूजा घर खेल का मैदान या शिशु पार्क शासन द्वारा सुविधाऍ प्रदान की जाती है।

विस्थापन से हानियॉ :–

1. पड़ोसियों से बिछड़ जायेगें एवं परिवार टूट जाते है।
2. विस्थापन से किसी परिवार की स्थिति पहले से बिगड़ जाती है।
3. विस्थापन से लोगों को नयी जगह पर रहने की समस्या होती है।
4. विस्थापन से जल सुविधा व्यवसाय सुविधा आवास शिक्षा आदि समस्यॉ होती है।
5. विस्थापन से कृषि भूमि दूर हो जाती है जिसे आने जाने की भी समस्यॉ बनी रहती है।

6. विस्थापन से नयी जगह पर वातावरण सड़क मार्ग अनेक प्रकार की समस्यॉ का जन्म होता है।

संदर्भ ग्रथ सूची

1. नायक जे. पी. विस्थापन एवं पुर्नवास 1990
2. मुखर्जी रविन्द्रनाथ सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी
3. एम. एल. गुप्ता डी.डी. शर्मा सामाजिक अन्वोषण की पद्धतियॉ 1991
4. टिहरी हाइड्रो डेवलोपमेंट कारपोरेशन लिमिटेड प्रारूप 1993
5. गाबा ओमप्रकाश समाजविज्ञान 1994
6. एस परशुरामन कृष्ण नदी पर बने बांध से विस्थापित लोगों की स्थिति का अध्ययन 1994
7. परशुराम एस. मेन इन इण्डिया 1995
8. जैन शोभिता विस्थापन एवं विकास 1995
9. वाल्टर फर्नाडिस विस्थापन में सामाजिक कार्यकर्ता की भूमिका 1995
10. शर्मा के.के.एनं शोध प्रबंध अध्ययन 1996
11. शाह रविन्द्र दो शबद 1998

सन् 1857 की क्रांति का मुखपत्र 'पयामे आजादी'

डॉ. माधुरी शेरे
अतिथि विद्वान (इतिहास)
श्री अटल बिहारी वाजपेयी
शास. कला एवं वाणिज्य
महाविद्यालय, इन्दौर
Email :
madhurishere@gmail.com

शोध सार :

सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के समय उर्दू भाषा के अनेक समाचार–पत्र प्रकाशित हुए थे। उनमें **'देहली उर्दू अखबार', 'सादिकुल अखबार', 'तिलिस्म लखनऊ', 'पयामे आजादी', 'सिहरे सामरी'** प्रमुख है। इन उर्दू पत्रों ने सन् 1857 की क्रांति की घटनाओं को प्रमुखता से प्रकाशित किया था जिससे सन् 1857 के विद्रोह की प्रामाणिक जानकारी मिलती है। उर्दू समाचार पत्रों के कुछ अंश तथा सन् 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में उनके प्रसार ने संग्राम के पहले, उसके दौरान और उसके बाद उनकी भूमिका से संबंधित कुछ भ्रांतियों को स्पष्ट किया। जनवरी से सितम्बर 1857 के समाचार पत्रों की समग्र दृष्टि स्पष्ट रुप से यह इंगित करती है कि स्वतंत्रता संग्राम अचानक ही शुरु नहीं हुआ था जबकि इसकी शुरुआत के संकेत बहुत पहले ही पता चल गये थे, जिसके बारें में उर्दू प्रेस अच्छी तरह इससे परिचित थे और यह बात उन क्षेत्रों के उर्दू समाचार पत्रों में अच्छी तरह उध्दृत होती थी, जिन क्षेत्रों में स्वतंत्रता संग्राम की शुरुआत हुई थी। यद्यपि इन उर्दू समाचार पत्रों की संख्या सीमित थी फिर भी आम जनता में अंग्रेजों के विरुध्द विद्रोह के बीज बोना और उनको अमली जामा पहनाने जैसे कार्य का श्रेय इन्हें जाता है।
शब्दकुंजी : फरजन्दो, नेस्तनाबूद, मोअतबर रहनुमा, मुतमईन, अता, कामिल, मुल्क फरोशी, कुफ्फारा, क्रांतिदूत, जरखेज, मुअज्जिन, नईम।

प्रस्तावना :

स्वाधीनता संघर्ष में उर्दू पत्रकारिता का शानदार इतिहास 'पयामे आजादी' से प्रारंभ होता हैं। यह देवनागरी और उर्दू में छपता था और इसीलिए यह हिंदी उर्दू पत्रकारिता की साझा विरासत हैं। लेकिन दुर्भाग्य से अब इसके अंक कही भी प्राप्त नहीं है, इसलिए इस पत्र का मूल्यांकन करने के लिए अंग्रेज लेखकों, पत्रकारों के लेखों, उध्दरणों, को ही मुख्यतः आधार बनाया गया है। यह पत्र स्वाधीनता संग्राम का पत्र था। फरवरी सन् **1857** में **दिल्ली** से **'पयामे आजादी'** का प्रकाशन हुआ। इस पत्र का संपादन प्रसिध्द क्रांतिकारी **अजीमुल्ला खां** करते थे और प्रकाशक थे बहादुरशाह जफर के पौत्र **बेदार**

बख्त। **'पयामे आजादी'** में ही पहला **राष्ट्रगीत** (कौमी गीत) प्रकाशित हुआ था, जिसकी पंक्तियाँ इस प्रकार है–

"हम है इसके मालिक, हिंदुस्तान हमारा,
पाक वतन है कौम का, जन्नत से भी प्यारा।
ये है हमारी मिल्कियत, हिन्दुस्तान हमारा,
इसकी रुहानियत से रोशन हैं, जग सारा।
कितना कदीम कितना नईम सब दुनिया से प्यारा,
करती है जिसे जरखेज गंग–जमुन की धारा।
ऊपर बर्फीला पर्वत पहरेदार हमारा,
नीचे साहिल पे बजता सागर का नक्कारा।
इसकी खानें उगर रही है, सोना, हीरा, पारा,
इसकी शानो शौकत का दुनिया में जयकारा।
आया फिरंगी दूर से ऐसा जंतर मारा,
लूटा दोनों हाथों से प्यारा वतन हमारा।
आज शहीदों ने तुमको अहले वतन ललकारा,
तोड़ो गुलामी की जंजीरें बरसाओ अंगारा।
हिन्दू–मुस्लिम, सिख हमारा भाई–भाई प्यारा,
ये है आजादी का झंडा इसे सलाम हमारा।"

इस कौमी गीत को गाते हुए ही सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के सैनिक अंग्रेजों पर हमला करने जाते थे। 'पयामे आजादी' कोई नियतकालिक पत्र नहीं था। वह कभी रोज, कभी हफ्ते में दो बार और कभी एक ही बार निकलता था। पहले वह उर्दू में निकला, फिर हिंदी भी उसके साथ जुड़ गयी। हिंदी–उर्दू के इस पत्र ने यद्यपि ज्यादा लंबी उम्र नहीं पायी, तथापि वह जितने दिन जिया, दहकते शोले की तरह जिया। उसने दिल्ली की जनता में स्वातंत्र्य प्रेम की आग फूँक दी। उसके लेखों में रक्त को खौला देने वाली गर्मी थी और मुर्दो में जान डाल देने वाली शक्ति थी। "यह एक ऐसा शोला था जिसने अपनी प्रखर एवं तेजस्वी वाणी से जनता में स्वतंत्रता का प्रदीप्त स्वर फूँका। अल्प समय तक निकलने वाले उस पत्र ने तत्कालीन वातावरण में ऐसी जलन पैदा कर दी जिससे ब्रिटिश सरकार घबरा उठी तथा उसने पत्र को बंद कराने के लिए कोई कोर कसर नहीं छोड़ी। जिस व्यक्ति के पास भी इस पत्र की कोई प्रति मिल जाती तो उसे अनेक यातनाएँ दी जाती। इसकी सारी प्रतियों को जब्त करने का विशेष अभियान तत्कालीन सरकार ने चलाया, फिर भी इस पत्र ने जन–जागृति के क्षेत्र में सराहनीय योगदान दिया।"

'पयामे आजादी' हिंदी का पहला पत्र था जिसने क्रांति का बिगुल बजाया। इसकी भाषा आग उगलती थी, इसके विचारों में तूफान था। यही कारण था कि यदि इसकी प्रति हिंदुओं के पास मिलती तो बिना अदालत में लाए उसे जबर्दस्ती गोमांस खिलाया जाता, उसे सीधे गोली से उड़ा दिया जाता था। मुसलमान के पास बरामद होने

पर उसे सुअर का गोश्त खिलाया जाता, गोली से भून दिया जाता था। अंग्रेज, पत्र की एक चिंदी भी नहीं देखना चाहते थे।

सन् 1857 की क्रांति के समय मुगल सम्राट **बहादुरशाह जफर** ने देश की जनता के नाम **घोषणा–पत्र** जारी किया था। **घोषणा–पत्र** इस प्रकार था–ऐ हिन्दोस्तान के फरजन्दो, अगर हम इरादा कर लें तो बात की बात में दुश्मन का खात्मा कर सकते है। हम दुश्मन को नेस्तनाबूद कर डालेंगे और अपने मजहब और अपने वतन को जो हमें जान से भी ज्यादा प्यारे है खतरें से बचा लेंगे।

तमाम हिंदुओं और मुसलमानों के नाम हम महज अपना फर्ज समझ कर अवाम के साथ शामिल हुये हैं। इस मौके पर जो कोई बुजदिली दिखायेगा या दगाबाज फिरंगियों के वादों पर एतबार करेगा वह जल्द ही शर्मिंदा होगा और इंगलिस्तान के साथ अपनी वफादारी का उसे वैसा ही इनाम मिलेगा जैसा लखनऊ के नवाबों को मिला। इस बात की जरुरत है के इस जंग में तमाम हिंदू और मुसलमान मिलकर काम करें और किसी मोअतबर रहनुमा की हिदायतों पर अमल कर इस तरह का बर्ताव करें के अमनों अमान कायम रहे और नादार लोग भी मुतमईन रहें। जहाँ तक मुमकिन हो सबको चाहिये के इस एलान की नकल करके आम जगह पर चस्पा कर दें। हिन्दोस्तान के हिन्दुओं और मुसलमानों उठो भाईयों उठो खुदा ने जितनी बरकतें इनसान को अता की है उनमें सबसे कीमती बरकत आजादी की है। क्या वह जालिम नाकस जिसने धोखा दे दे के यह बरकत हमसे छीन ली है हमेशा के लिये हमें उससे महरुम रख सकेगा। क्या खुदा की मरजी के खिलाफ इस तरह का काम हमेशा जारी रह सकता है। नहीं। नहीं। फिरंगियों ने इतने जुल्म किये है कि उनके गुनाहों का प्याला लबरेज हो चुका हैं। यहाँ तक के अब हमारे पाक मजहब को बरबाद करने की नापाक ख्वाहिश भी उनमें पैदा हो गई हैं। क्या तुम अब भी खामोश बैठे रहोगे। खुदा अब यह नहीं चाहता के तुम खामोश रहो क्योंके उसने हिंदू और मुसलमानों के दिलों में अंग्रेजों को अपने मुल्क से बाहर निकालने की ख्वाहिश पैदा कर दी है और खुदा के फजल और तुम लोगों की बहादुरी के जोर से जल्दी ही अंग्रेजों को इतनी कामिल शिकस्त मिलेगी के हमारे इस मुल्क हिन्दोस्तान में उनका जरा भी निशान न रह जायगा। हमारी इस फौज में छोटे और बड़े की तमीज भुला दी जायगी और सबके साथ बराबरी का बरताव किया जाएगा क्योंके इस पाक जंग में अपने मजहब की हिफाजत के लिये जितने लोग तलवार खींचेगे वे सब यकसी इज्जत के हकदार होंगे वे सब भाई–भाई है उनमें छोटे बड़े का कोई भेद नहीं। मैं फिर अपने तमाम हिन्दी भाइयों से कहता हूँ उठो और परमात्मा के बताये हुये इस अजीम फर्ज को पूरा करने के लिए मैदान जंग में कूद पड़ो।

इस **घोषणा–पत्र** पर टिप्पणी देते हुए **'पयामे आजादी'** ने लिखा था–

''हिंद के बाशिंदों, अरसे से जिसका इंतजार था, आजादी की वह पाक घड़ी आज आ पहुँची है। हिंदुस्तानी अब तक धोखे में आते रहे और अपनी ही तलवार से अपनी

गर्दने काटते रहे अब हमें मुल्कफरोशी के इस गुनाह का कुफ्फारा (प्रायश्चित) करना चाहिए। अंग्रेज अब भी अपनी पुरानी दगाबाजी से काम लेगे। वे हिंदुओं को मुसलमानों के खिलाफ और मुसलमानों को हिंदुओं के खिलाफ भड़काएगे।''हिंदू–मुस्लिम एकता ही 'गदर' का आधार थी। **जी.बी. मालेसन** की पुस्तक **'द रेड पेम्फलेट'** में प्रकाशित इसी अखबार की संपादकीय टिप्पणी भी इसी एकता पर बल देती है–'हिंदू और मुसलमान भाईयों, अपने छोटे–छोटे तफरकों को भूल जाओ और मैदाने–जंग में एक झण्डे के नीचे खड़े हो जाओ।'

1858 में लंदन से प्रकाशित **'द नैरेटिव ऑफ इंडियन रिवॉल्ट'** में 'पयामे आजादी' में छपी एक अपील का एक अंश प्रस्तुत किया गया हैं। रुहेलखण्ड की पलटनों से स्वातंत्र्य युध्द में शामिल होने की इस अपील में कहा गया है,'भाईयों दिल्ली में फिरंगियों के साथ आजादी की जंग हो रही हैं। अल्लाह की दुआ से हमने उन्हें जो पहली शिकस्त दी है, उससे वे इतने घबरा गए है, जितना दूसरे वक्त वे दस शिकस्त से नहीं घबराते। बेशुमार हिंदुस्तानी बहादुर दिल्ली में आ–आकर जमा हो रहे हैं। ऐसे मौके पर आप वहाँ खाना खा रहे हैं तो हाथ यहाँ आकर धोइए। हमारे कान आपकी ओर ही लगे है, जिस तरह रोजेदारों के कान मुअज्जिन की अजान की तरफ लगे रहते हैं। हम आपकी तोपों की आवाज सुनने को बैचेन हैं। हमारी आँखे आपके दीदार की प्यासी सड़क पर लगी हुई है। आपका फर्ज है कि फौरन आइए।'

सारांशतः इस क्रांतिदूत पत्र से अंग्रेज इतने आतंकित थे कि जब उन्होंने 'गदर' को कुचल दिया तब, सर हेनरी कॉटन की पुस्तक 'इंडियन एण्ड होम मेमायर्स' में दिए गए विवरण के अनुसार घर–घर की तलाशी ली गई और जिन घरों से इस अखबार के अंक बरामद हुए, उन घरों में रहने वालों को फांसी के फंदे पर लटका दिया गया और सर विलियम हॉवर्ड की डायरी के अनुसार 'पयामे आजादी' के संपादक बेदारबख्त के शरीर पर सुअर की चर्बी मलकर उन्हें फांसी दे दी गई। **पं० अंबिकाप्रसाद वाजपेयी** के अनुसार–''पयामे आजादी' के प्रवर्तक 1857 के स्वातंत्र्य आन्दोलन के नेता अजीमुल्ला खाँ थे। ये नाना साहब के परामर्शदाताओं में थे। इसलिये इनकी इच्छा थी कि इस 'पयामे आजादी' व स्वाधीनता सन्देश का भारत की मुख्य–मुख्य भाषाओं द्वारा प्रचार करें। उनका विचार झाँसी से इसका मराठी संस्करण निकालने का भी था। परन्तु वह समय नहीं आया और स्वातंत्र्य युध्द विफल हो गया।'' अजीमुल्लाह खां ने यूरोप में इस अखबार के प्रकाशन की योजना बनाई थी। आजादी का शंखनाद करने वाला, यह भारत का पहला अखबार था और इसके संपादकों–पाठकों ने शहादत स्वीकार कर राष्ट्रीय पत्रकारिता के परचम को फहराया। हिंदी–उर्दू के इस पत्र ने यद्यपि ज्यादा लंबी उम्र नहीं पाई, तथापि वह जितने दिन जिया दहकते शोले की तरह जिया। उसने दिल्ली की जनता में स्वतंत्रता की चेतना जगा दी।

संदर्भ

अनुजा मंगला (संपादक) (2007) *अखबारों में 1857, भोपाल* : जनसंपर्क संचालनालय, पृ. 13, 14.

भदौरिया संतोष (2001), *अंग्रेजी राज और प्रतिबंधित हिन्दी पत्रिकाएँ*, भोपाल : स्वराज संस्थान संचालनालय, संस्कृति विभाग, पृ. 21.

वाजपेयी अम्बिका प्रसाद (2010), *समाचार पत्रों का इतिहास,* वाराणासी : ज्ञानमण्डल लिमिटेड, पृ. 119.

गुप्ता आर. के (2008), *हिन्दी पत्रकारिता इतिहास एवं विकास,* दिल्ली : ओमेगा पब्लिकेशन्स, पृ. 22.

माहौर भगवानदास (1976), *1857 के स्वाधीनता संग्राम का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव,* अजमेर : कृष्णा ब्रदर्स, पृ. 8.

सनत कुमार (1993), *हिन्दी पत्रकारिता की भूमिका,* इन्दौर : लोक संवाद प्रकाशन पृ. 42, 43, 44.

श्रीधर विजयदत्त (2001), *समग्र भारतीय पत्रकारिता, प्रथम–खण्ड (1780–1900),* इन्दौर : लाभचंद प्रकाशन, पृ. 240, 241.

तिवारी अर्जुन (1997), *हिन्दी पत्रकारिता का वृहद इतिहास*, नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन, पृ. 96, 97.

भोपाल की नवाब सिकन्दरजहाँ बेगम

डॉ. प्रमिला शेरे
सहायक प्राध्यापक (इतिहास)
शासकीय महाविद्यालय,
टोंकखुर्द (देवास)
Email : pramila_shere@rediffmail.com

शोध सार :

सन् 1857 में भोपाल के समीप विद्रोह प्रारंभ हुआ। सिकंदर बेगम अंग्रेजी शासकों के प्रति वफादार रही और उन्होंने अपने राज्य में शांति बहाली की कोशिश की। जैसा कि सन् 1778 के अंग्रेज–भोपाल संबंध का आशय था वास्तविक रुप से सहयोग और दोस्ती। इस प्रकार सिकंदर बेगम की ब्रिटिश सरकार के साथ वफादारी का भोपाल के सभी राजनैतिक दलों ने समर्थन नहीं किया। कुछ मौलवियों ने अंग्रेजों के विरुध्द जेहाद छेड़ने का ऐलान किया। साथ ही राजकीय परिवार के कुछ सदस्य भी मुल्ला मौलवियों के साथ अंग्रेजों के विरुध्द खड़े हो गये। इनमें सिकंदर बेगम की माता कुदसिया बेगम भी थी। सिकन्दर बेगम गदर के दौरान भोपाल की असलियत में शासक थी और अंग्रेज सरकार की प्रबल समर्थक थी। उनके दौर में भोपाल के वतन परस्त फौजियों ने 6 अगस्त 1857 ई. को सीहोर में अंग्रेजी राज के विरुध्द सिपाही बहादुर सरकार स्थापित की थी जिसका मूल्य तीन सौ छप्पन से अधिक जाबाँज वतनपरस्तों ने सामूहिक रुप से सजा–ए–मौत पाकर चुकाया।

शब्द कुंजी : सिकन्दर बेगम, रीजेन्ट, कन्टिनजेंट, पॉलिटिकल एजेन्ट, कानूनी हुकमरा, मदाखलत, बागियाना पोस्टर, ब्रितानी हुकूमत, खिलअत, सनद, मदरसा सुलेमानिया।

नवाब सिकन्दर जहाँ बेगम साहिबा 1818 ई. में पैदा हुई। उनके पति नवाब जहाँगीर मोहम्मद खान साहब की मृत्यु उपरांत रियासत की बागडोर संभालने सिकन्दर जहाँ बेगम अपनी पुत्री शाहजहाँ बेगम एवं माताजी कुदसिया बेगम साहिबा के साथ इस्लाम नगर से भोपाल आ गई। चूँकि पूरे हिदुस्तान पर अंग्रेजी शासन था इसलिए रियासतों के फेरबदल भी उन्हीं की मर्जी से हुआ करते थे। सन् 1845 ई. में अंग्रेजी सरकार ने नवाब

गौस मोहम्मद खान साहब के छोटे पुत्र मियां फौजदार मोहम्मद खान साहब को जो कि नवाब सिकन्दर जहाँ बेगम के रिश्ते में सगे मामू थे रियासत का मुखतार बनाया और नवाब जहाँगीर मोहम्मद खान साहब की पुत्री शाहजहाँ बेगम को रियासत भोपाल का वारिस घोषित किया। सन् 1857 के दौर में रियासत भोपाल की कानूनी हुक्मरा (सत्तासीन) शाहजहाँ बेगम (1839–1901 ई.) थी परन्तु उनके कम उम्र होने के कारण एक समझौते के अंतर्गत, जिसको भारत सरकार की स्वीकृति प्राप्त थी, उनकी माँ सिकन्दर बेगम (1818–1868 ई.) मुख्तारे रियासत नियुक्त कर दी गयी थी और इस प्रकार सिकन्दर बेगम ही इस दौर में वास्तविक रुप से इस रियासत की शासक थी। सन् 1857 में भारत में भयंकर विद्रोहाग्नि की ज्वाला चमकी। इसकी चिनगारियाँ देखते देखते सारे भारत वर्ष में फैल गई। इस समय भोपाल की रिजेन्ट सिकन्दर बेगम ने ब्रिटिश सरकार की तन, मन धन से सहायता की। सिकंदर बेगम के बारें में समाचार पत्र **उर्दू गाइड** के **तीन दिसम्बर 1868 ई.** के अंक में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के सम्बन्ध में यह खबर मिलती है :

"सन् 1857 में जब हिन्दुस्तान में बलवा हुआ तो इसकी इब्तेदा वहाँ इस तरह हुई के माह अप्रैल में चंद इश्तेहार जेहाद तख्त देहली की तरफ से मुल्क भोपाल में तक्सीम हुए और नवाब सिकन्दर जहाँ बेगम साहिबा ने इस रपट को पाते ही साहब अजन्ट को तलब फरमाकर दर पे तदारुक हुई और जून के महीने में बेगम साहिबा ने सुराग लगा कर पता पाया क एक शक्स जमादार फौज की जमीअत कर रहा है, इस खबर को पाते ही उसको गिरफ्तार कर लिया और शहर बदर करने का हुक्म दिया, जुलाई के महीने में जब होल्कर ने बलवा किया और साहब लोग भागकर भोपाल आये तो बेगम साहिबा ने बहिफाजत तमाम होशंगाबाद तक पहुँचा दिया बावजूद के उनके कराबतदार और बुजराअ का एक तबका खिलाफ था, ताहम बेगम साहिबा ने इस्तिकबाल नहीं छोड़ा और बिलाखिर अपने कराबतदारों और फौज कंटिन्जेंट के असलहदारों में 149 आदमियों को जो बानी–ए–फसाद थे सजाएँ संगीन दी।"

1 मई 1857 ई. को भोपाल में एक बागियाना पोस्टर की पाँच सौ कापियाँ भोपाल सेना में वितरित की गई। इस पोस्टर में लिखा गया था–बरतानवी हुकुमत हिंदुस्तानियों के धार्मिक मामलों में मदाखलत कर रही है उसे पढ़कर फौजियों में बागियाना जजबात पैदा हो गये थे। सिकन्दर बेगम को जब इस पोस्टर के वितरण की जानकारी मिली तो उन्होंने इसके विरुध्द एक जवाबी पोस्टर 4 जून 1857 ई. को सिकन्दर प्रेस में

छपवाकर फौज के सिपाहियों में वितरित किए गये। इन उत्तर पोस्टर में लिखा था कि जनता व सभी फौजी गलत उकसाने में न आए वर्तमान सरकार व अंग्रेजों के साथ रहे। सिकन्दर बेगम ने बागियों के पोस्टर को भोपाल ले जाने और वितरित करने वालों के विरुध्द जाँच के भी आदेश दिये। इन पोस्टर ने भोपाल सेना में बगावत फैलाने का बहुत काम किया। म. प्र. में नीमच, ग्वालियर, महिदपुर, मंदसौर, महू, इन्दौर में बगावत फैल गई। इन्दौर की बगावत प्रारंभ होने के पहले भोपाल के एक बागी वारिस मुहम्मद खाँ इन्दौर मे मौजूद था, उसकी बागी कार्यवाहियों के आरोप में भोपाल रियासत की रीजेन्ट बेगम ने राज्य से निष्कासित कर लिया था। इन्दौर में अपना निर्वासित जीवन गत सात वर्षो से यापन कर रहा था। वह भोपाल रियासत का उत्तराधिकारी अपने को मानता था और यही झगड़ा था उसका रीजेन्ट बेगम सिकंदर बेगम से। इन्दौर क्रांति के बाद क्रान्तिकारी दल इन्दौर से दिल्ली की ओर जा रहे थे। नवाब वारिस मोहम्मद खाँ भी इसी दल में था। परिस्थितियाँ ऐसी बन रही थी–इन्दौर दिल्ली मार्ग पर भोपाल से गुजरा तब कहीं नवाब वारिस मोहम्मद खाँ रीजेन्ट बेगम पर धावा बोल सकता हैं।

होल्कर की बागी फौज ने वारिस मुहम्मद खाँ और सआदत मोहम्मद खाँ के नेतृत्व में 1 जुलाई 1857 ई. को इन्दौर की छावनी में रेसीडेन्सी की इमारतों पर हमला कर दिया। हमले में 50 अंग्रेज मारे गए, उन्हें हथियार डालने पड़े। उस समय सेन्ट्रल इण्डिया के कार्यवाहक एजेन्ट गवर्नर जनरल कर्नल मैरियन डयूरेन्ड रेजीडेन्सी भवन में मौजूद थे। उन्होंने भवन से फरार होकर तलवर जिला इन्दौर में जाकर पनाह ली और अपने कुछ भरोसेमन्द आदमियों को भेजकर सिकन्दर बेगम से मदद माँगी। बेगम साहिबा ने उनके इस निवेदन पर उनको अपने अंग्रेज साथियों के साथ इन्दौर से सुरक्षित सीहोर तक लाने की व्यवस्था कर दी और भोपाल कन्टिनजेन्ट के कुछ वफादार सिपाहियों ने इस अंग्रेज फरार पार्टी को अपनी सुरक्षा में लेकर 4 जुलाई को सीहोर छावनी पहुँचा दिया। उनके यहाँ पहुँचने के बाद बेगम साहिबा ने उन्हें सुरक्षित होशंगाबाद पहुँचा दिया, जो उस समय अंग्रेजों के लिए सुरक्षित क्षेत्र माना जाता था। सिकन्दर बेगम की ये अंग्रेज परस्ती भोपाल की फौज के बागी सिपाहियों को पसंद नहीं थी और उन्होंने बेगम साहिबा के इस अमल पर काफी रोष व्यक्त किया। इस प्रकार भोपाल कन्टिनजेन्ट में और अधिक बागियाना विचार पैदा होने लगे।

अंबापानी के दो जागीरदार–फादिल मुहम्मद खाँ एवं आदिल मुहम्मद खाँ ने विद्रोह कर दिया। सिकन्दर बेगम ने जनता को उकसाने वाले फादिल और आदिल मोहम्मद खाँ की सम्पत्ति को जब्त कर लिया और वहाँ पर एक नायब बक्शी को नियुक्त कर दिया। अंग्रेज अफसरों को सुरक्षित होशंगाबाद पहुँचा देने से भोपाल के फौजियों में यह प्रतिक्रिया हुई कि सिकन्दर बेगम अंग्रेजों की वफादार और मददगार हैं। शुजात खाँ ने सीहोर केंटोनमेंट में लगा अंग्रेजों का झंडा उतारकर जला दिया। शुजात खाँ ने बेरछा स्थित अंग्रेज कम्पनी के खजाने को लूट लिया और वहाँ के प्रावधान अधिकारी को मौत के घाट उतार दिया। भोपाल राज्य के कुछ अन्य स्थानों पर भी उपद्रव हुए। तत्कालीन शासक नवाब सिकन्दर बेगम ने सीहोर स्थित अपनी फौजों को शुजात खाँ और भोपाल कांटिनजेंट को समाप्त करने का हुक्म दिया। दिसम्बर 1857 ई. में जनरल ह्यूरोज को विद्रोह दबाने का चार्ज मिला। कमान संभालते ही जनरल ह्यूरोज 8 जनवरी 1858 ई. को इन्दौर से रवाना होकर 15 जनवरी को सीहोर पहुँचा। भोपाल नवाब की फौजें काफी तादाद में पहले ही पहुँच कर आजाद सैनिकों को पकड़ चुकी थी। रहा–सहा काम जनरल ह्यूरोज ने पूरा किया। निर्दयतापूर्वक कार्यवाही की गई और 149 आजाद सैनिक पकड़ कर मार दिये गये।

होशंगाबाद के स्टेट वकील के व्यक्तिगत सहायक लाला विजय पाल ने दिनांक 16 अगस्त 1857 ई. को नवाब सिकन्दर बेगम को एक पत्र लिखा, जिसमें डिप्टी कमिश्नर ने विद्रोह के दौरान सिकन्दर बेगम द्वारा अंग्रेजों के प्रति वफादारी और अंग्रेजी सरकार को सहयोग देने की प्रशंसा की गई थी। 3 सितम्बर, 1857 ई. को बहादुर शाह जफर का एक सन्देश सिकन्दर बेगम को प्राप्त हुआ। यह सन्देश ठाकुर मर्दनसिंह, जागीरदार बानपुर, जिला सीवान्स (बेगमगंज) ने अपने एक संदेश वाहक से बेगम साहिबा के सामने पेश करवा दिया था। इस सन्देश में क्या लिखा था, इसको सिकन्दर बेगम ने जाहिर नहीं किया।

बेगम साहिबा के इस सन्देश को अपने एक पत्र के साथ होशंगाबाद में ठहरे हुए पॉलिटिकल एजेन्ट को भेज दिया और सन्देश वाहक को फौजी पहरे में रियासत भोपाल से निकाल दिया गया देहली में जब गदर की आग भड़की थी उस समय बहादुर शाह जफर ने भारत के सभी महाराजाओं और नवाबों के नाम एवं लंबा संदेश अपने हस्ताक्षर और शाही मोहर के साथ भेजा था, जिसमें उन्होंने गदर के समर्थन में विस्तारपूर्वक एक अपील की थी। उसमें फिरंगियों को इस देश से निकालने के लिए हर संभव समर्थन देने का

निवेदन किया गया था। बहादुरशाह जफर के संदेश के कुछ दिन पश्चात् ही झांसी की रानी लक्ष्मीबाई ने भी सिकन्दर बेगम को संदेश भेजा था, जिसमें ये अपील की गयी थी कि अंग्रेजों को भारत से निकालने के लिए राष्ट्रवादी सिपाही जो जंग लड़ रहे हैं, उस कार्य में रियासत भोपाल की ओर से अंग्रेज सरकार की मदद न की जाये, परन्तु सिकन्दर बेगम ने झांसी की रानी को यह उत्तर दिया कि मैं जो कुछ कर रही हूँ वह ठीक हैं। इस पर झांसी की रानी ने सिकन्दर बेगम को फिर वही संदेश भेजा और उनसे अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने की अपील की। बेगम साहिबा ने इस अपील को दोबारा निरस्त कर दिया। इस पर झांसी की रानी ने रोष व्यक्त करते हुए निम्नानुसार संदेश भेजा–''मैं शीघ्र ही अपनी वर्तमान मुहिम को पूर्ण कर भोपाल आऊँगी और अपनी तलवार की नौक पर आपको अंग्रेजों की मदद करने से रोक दूँगी।'' सिकन्दर बेगम ने रानी के इस पत्र का निम्नानुसार शब्दों में उत्तर दिया था –

''रियासत भोपाल को ये गौरव प्राप्त हैं कि वह सदैव सल्तनत बरतानिया की वफादारी में सक्रिय और अग्रणी रही है और आगे भी वो अंग्रेजों की वफादार रहेगी, अगर आप भोपाल आना चाहती है तो जब आप का दिल चाहे यहाँ आइये। मेरा आतिशी तोपखाना आपका मुकाबला करने के लिए हर समय तैयार है।''

सुल्तानजहाँ बेगम ने विद्रोह के दौरान अपनी दादी की उपलब्धियों का इन शब्दों में वर्णन किया है–''नवाब सिकन्दर बेगम की रगों में अपने पूर्वजों का खून दौड़ रहा था, जबकि उनकी सैनिक टुकड़ियाँ अपने पुराने दिनों से प्रेरित हो रही थी। सिकन्दर बेगम ने अपने अज्ञानता अविश्वास और असुरक्षा के अनावश्यक बादलों के स्थान पर शान्ति, उन्नति और ज्ञान के प्रकाश को फैलाया।'' इसी प्रकार के विचार सिकन्दर बेगम ने गर्वनर जनरल को दिए अपने पत्र में उध्दृत किए–''उस खुदा को हजारों शुक्रिया जिसने कि हिन्दुस्तान देश को कानूनविहीनों के हाथ से बचाया और जिसने भारत को ब्रिटिश शासन के अधीन लाया।'' अंग्रेजी सरकार ने सिकन्दर जहां बेगम की वफादारी और सन् 1857 ई. के गदर के अवसर पर रियासत भोपाल में अंग्रेज पुरुषों एवं महिलाओं की सुरक्षा से प्रभावित होकर तथा इकरार नामें की शर्तों के अनुसार सन् 1859 ई. में नवाब सिकन्दर जहां बेगम साहिबा को रईस रियासत भोपाल बनाया। उनकी पुत्री नवाब शाहजहाँ बेगम साहिबा जो कि रईस भोपाल घोषित हो चुकी थी को वलीअहद रियासत भोपाल की मन्जूरी दी गई। इस प्रकार से नवाब सिकन्दर जहां बेगम साहिबा बजाए मुख्तार रियासत के स्थाई

रईस रियासत भोपाल हुई। उन्हें ग्रेट स्टार आफ इंडिया का खिताब दिया गया। सिकन्दर जहां बेगम साहिबा उच्च कोटि की प्रशासक, राजनीतिज्ञ, एवं सूझ–बूझ की शासक तथा प्रबंधक थी। उनके शासन काल में कई सुधार किये गए जिसके कारण जनता को अधिक सुविधायें तथा सुलभ न्याय मिल सका। उन्होंने निजामतों का बंटवारा किया, अदालतों में दीवानी तथा फौजदारी के पृथक–पृथक नियम बनवाए, अपराधियों को सख्त सजाओं का प्रावधान किया गया, न्यायालयों में हिन्दुओं के लिए धर्मशास्त्र और मुसलमानों के लिए कुरान व सुन्नत के अनुसार कानून बनाए गए। इस प्रकार से उनके शासन में सन् 1847 ई. से सन् 1864 ई. तक 134 कानून बनाए गए। सिकन्दर बेगम ने साहस के साथ प्रशासन किया, उन्होंने गाँवो से सीधा संबंध स्थापित किया। उन्होंने जागीरदारों की सम्पत्तियों का पुर्ननिर्धारण कर आकलन किया एवं व्यापार में एकाधिकार को समाप्त किया। उन्होंने अपनी बेटी सुलेमान जहां बेगम के नाम से मदरसा सुलेमानिया सन् 1853 ई. में स्थापित किया जिसमें उर्दू, हिन्दी, अंग्रेजी आदि की शिक्षा दिये जाने का उचित प्रबंध किया गया। लड़कियों के लिए मदरसा विक्टोरिया की स्थापना की। उन्होंने रियासत की जनता के ऐलोपैथिक इलाज के लिए एक अस्पताल की स्थापना भी की। मोती मस्जिद, मोती महल आदि बनवाए उनके शासन काल में रियासत में कई प्रगति के कार्य प्रारम्भ हुए। बेगम साहिबा की योजनाएँ प्रगतिशील एवं दूरगामी रही हैं जिसकी जनता में सराहना होती थी। 7 जनवरी सन् 1861 ई. में जबलपुर में एक दरबार का आयोजन हुआ जिसमें सिकन्दर बेगम भी उपस्थित हुई, भोपाल से जबलपुर जाने में उन्हें 25 दिन की यात्रा करनी पड़ी। उस दरबार में तत्कालीन वायसराय लार्ड कैंनिग ने सिकन्दर बेगम को सम्बोधित करते हुए कहा था–''सिकन्दर बेगम ! मैं इस दरबार में आपका हार्दिक स्वागत करता हूँ। मैं बहुत समय से यह आशा कर रहा था कि आपने श्रीमती साम्राज्ञी के राज्य की, जो बहुमूल्य सेवा की हैं उनके बदले में आपको धन्यवाद अदा करु। बेगम साहिबा, आप एक ऐसे राज्य की अधिकारिणी हैं, जो इस बात के लिए प्रसिध्द हैं कि, उसने ब्रिटिश सरकार के खिलाफ कभी तलवार नहीं उठाई। अभी थोड़े दिन पहले जब कि आपके राज्य में शत्रुओं का आतंक उपस्थित हुआ था, उस समय आपने जिस धैर्यता, बुध्दिमत्ता और योग्यता के साथ राज्य कार्य का संचालन किया, वैसा कार्य एक राजनीतिज्ञ या सिपाही के लिए ही शोभास्पद हो सकता था। ऐसी सेवाओं का अवश्य प्रतिफल मिलना चाहिए। मैं आपके हाथों में बर्सिया जिले की राजसत्ता सौंपता हूँ यह जिला पहले धार राज्य के अधीन

था पर उसने बलवे में शरीक होकर उस पर से अपना अधिकार खो दिया अब यह राजभक्ति के स्मारक स्वरुप हमेशा के लिए आपको दिया जाता हैं।'' इसी दरबार में सिकन्दर बेगम के वकील मुंशी भवानी प्रसाद को विद्रोह के दौरान अंग्रेजों के प्रति वफादारी के बदले एक घड़ी, खिलअत और जीवनपर्यन्त 100 रु. की प्रतिमाह की पेंशन पुरस्कार के रुप में प्रदान की गई। 1861 ई. में ही सिकन्दर बेगम को जी.सी.एस.आई की उपाधि मिली। 1862 ई. में आपको गोद लेने की सनद भी मिली। बेगम ने शासन के विभिन्न स्थलों का दौरा किया और वाइसराय से तीन बार मिली। वह मक्का की धार्मिक यात्रा पर भी गई। 30 अक्टूबर, 1868 को 51 वर्ष की आयु में बेगम की मृत्यु हो गई, उन्हें फरहत अफ्जा गार्डन में दफनाया गया।

संदर्भ

अनुजा मंगला : भारतीय पत्रकारिता–नींव के पत्थर, म. प्र. हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, संस्करण, 1996, पृ. 41.
भाषा संचालनालय : मध्यप्रदेश के स्वतंत्रता संग्राम सैनिक, खण्ड 5, (भोपाल, रीवा, होशंगाबाद संभाग), संस्कृति विभाग, म. प्र. भोपाल प्रथम संस्करण, 1984 पृ. 3, 4.

भण्डारी सुखसंपतिराय : भारत के देसी राज्य, राज्य मण्डल बुक पब्लिशिंग हाउस इन्दौर प्रथम संस्करण, मई 1927, पृ. 18.

खान खालिद मोहम्मद : दस्तान–ए–भोपाल, शब्द प्रिटिंग इण्डस्ट्रीज, भोपाल, संस्करण, 2002, पृ. 114, 115, 116.

खाँ असदउल्ला : सिपाही बहादुर, स्वराज संस्थान संचालनालय संस्कृति विभाग, म.प्र. शासन, भोपाल, प्रथम संस्करण, 2000, पृ. 1, 2, 5, 28, 43.

श्रीवास्तव प्रेमनारायण और गुरु शंभुदयाल : सीहोर और भोपाल जिला गजेटियर, डायरेक्टर गजेटियर, म. प्र. भोपाल, प्रथम संस्करण, 1989, पृ. 76.

Ashfaq Ali Syed : Bhopal Past And Present, Jai Bharat Publishing House Inside Itwara Bhopal, 1969, पृ. 53, 54.

Claudia Preckel : Begams of Bhopal, Lotus Collection, Roli Books New Delhi, edi 2000, पृ. 56, 57, 58.

Prasad S.N. : Descriptive List Of Mutiny Paper in the National Archives Of India, Bhopal, volume IV, 1973, पृ. कृ 2

हिन्दी विज्ञान पत्रकारिकता : वर्तमान परिदृश्य

डॉ. आशा अग्रवाल
सहायक प्राध्यापक हिन्दी
श्री अटल बिहारी वाजपेयी
शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय
इन्दौर (म.प्र.)

आधुनिक हिन्दी विज्ञान पत्रकारिकता का आरंभ हिन्दी पत्रकारिकता के साथ ही सन् 1818 में हुआ। 172 वर्ष की लम्बी अवधि में हिन्दी पत्रकारिकता का जितना विकास और परिमार्जन हुआ, उसकी तुलना में हिन्दी ज्ञान पत्रकारिकता उतनी आगे नहीं बढ़ी जबकि फिल्म और खेल पत्रकारिकता जो बाद में आरम्भ हुई, आज ज्यादा विकसित हैं।

प्रकाशन एवं सूचना निदेशालय के सम्पादक श्री शक्ति प्रकाश के अनुसार हमारे देश में विज्ञान पत्रिकाओं की मांग है। किन्तु सफल विज्ञान पत्रिकाओं की रव्या अंग्रेजी पत्रिकाओं को मिलाकर भी 6–7 से ज्यादा नहीं हैं। शीलाधर मृदा संस्थान के निदेशक डॉ. शिवगोपाल मिश्र के अनुसार कुछ एक को छोड़कर अधिकांश प्रकाशनों में पारिभाषिक शब्दावली पर ध्यान नहीं दिया जाता हैं। वर्तमान स्थिति असंतोषजनक हैं। लेखक, सम्पादक, प्रकाशक और पाठक चारों में राष्ट्रीयता का ह्रास हुआ हैं। विज्ञान पत्रिकाओं का प्रकाशित होना एक बात हैं और उसका स्तर अच्छा होना दूसरी बात। 'आविष्कार' पत्रिका के सम्पादक देवेन्द्रनाथ भटनागर के अनुसार हिन्दी में मौलिक विज्ञान लेखन कम हो रहा हैं। अधिकतर लेखन अनुवाद आधारित है जो अभी तक उपयुक्त स्तर का नहीं बन पाया है। प्रेमानंद चंदोला के अनुसार 'सामान्य पत्रिकाएँ पीछे रह जाती है, आजादी के वर्षों बाद भी गिनी–चुनी विज्ञान पत्रिकाएँ है और वे भी अंतरराष्ट्रीय स्तर की नहीं हैं।' श्री श्याम सुंदर शर्मा के अनुसार ऐसी प्रेसों की संख्या काफी कम हैं जो वैज्ञानिक पत्रिकाओं का भलीभाँति मुद्रण कर सके।

सरकारी क्षेत्र में विज्ञान प्रगति, आविष्कार और विज्ञान परिचय तथा स्वैच्छिक प्रयासों से विज्ञान, विज्ञानपुरी और वैज्ञानिक प्रकाशित होती हैं। इनमें से विज्ञान, विज्ञानपुरी और

वैज्ञानिक यद्यपि उच्चकोटी की सामग्री विभिन्न विधाओं में देती हैं, पर धनाल्पता के कारण इनका रंगरूप आकर्षक न होने से इनकी प्रसार संख्या अत्यंत सीमित हैं।

सी.एस.आई.आर से निकलने वाली 'विज्ञान प्रगति' एक प्रतिनिधि पत्रिका हैं। इसकी प्रसार संख्या लगभग एक लाख हैं। सरकारी साधनों की प्रचूरता के कारण यह काफी सजी–संवरी, रंगीन तथा चिकनी होती हैं। इसका मूल्य काफी कम, आकार बड़ा तथा पृष्ठ संख्या अन्य हिन्दी विज्ञान पत्रिका से ज्यादा हैं। परन्तु इतनी महत्वपूर्ण भविष्योन्मुख, संभावनापूर्ण तथा लाखों तक पहुँचने की क्षमता के बावजूद यह पत्रिका उन मापदण्डों को पूरा नहीं करती जो एक जागरूक हिन्दी विज्ञान पाठक और लेखक उससे अपेक्षा करता है। समय के साथ इस पत्रिका में लगातार सुधार होता गया और आज इसमें नई ताजगी देखने को मिलती हैं।

नेशनल रिसर्च डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया से प्रकाशित 'आविष्कार' आकार में छोटी, रंगरूप में साधारण परन्तु उच्च कोटी की सामग्री से सुसज्जित पत्रिका है परन्तु इसकी भाषा क्लिष्ट एवं जटिल है। 'विज्ञान परिचय' भारतीय विज्ञान संस्थान बैंगलोर से निकलती हैं। यह साधारण तथा क्लिष्ट अनुवाद के रूप में हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद से कृषि विज्ञान पर 'खेती और फलफूल' पत्रिका निकलती हैं। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान पर भी हिन्दी में स्तरीय स्तर की कुछ पत्रिकाएँ हैं।

हिन्दी में वैज्ञानिक शोध पत्रिकाओं की संख्या बहुत कम हैं। इनमें 'शोध भारती' और 'विज्ञान परिषद अनुसंधान' पत्रिका महत्वपूर्ण हैं। विभिन्न वैज्ञानिक विषयों पर पारिभाषिक शब्दावली आयोग की स्थापना सन् 1961 में ही हो गई थी। जिनसे प्रमाणिक और स्तरीय हिन्दी विज्ञान साहित्य के प्रणयन में सहायता मिल रही हैं।

सी.एस.आई.आर. द्वारा 'भारत की सम्पदा' नामक वैज्ञानिक विश्वकोश और 'भारतीय कृषि ज्ञानकोश' तैयार किया गया हैं। वर्तमान में विविध विज्ञान विषयों पर लगभग 4000 से ज्यादा पुस्तके प्रकाशित हो चुकी हैं। आज पाठ्य पुस्तकों के साथ लोकप्रिय विज्ञान पुस्तकें प्रकाशित करने में भी प्रकाशकों की रूचि बढ़ी हैं।

आज हिन्दी में विज्ञान, कृषि और स्वास्थ्य विषयों पर पोस्टर, बुकलेट, फोल्डर, लीफलेट आदि भी उपलब्ध हैं। एन.आर.डी.जी. ने वैज्ञानिक प्रविधियों की तकनीकी जानकारियाँ हिन्दी में प्रकाशित करवाई हैं। सामान्य समाचार पत्र–पत्रिकाएँ भी संदर्भित नये

लेख, वैज्ञानिक प्रकरणों तथा जनरूचि के विषयों पर आधारित वैज्ञानिक सामग्री सचित्र प्रकाशित करती रही हैं।

आकाशवाणी और दूरदर्शन ने भी अपने कार्यक्रमों में विज्ञान का समावेश किया है और विज्ञान कृषि एवं चिकित्सा पर पहले से अधिक कार्यक्रम आने लगे हैं। देश की वैज्ञानिक गतिविधियों पर कुछ वैज्ञानिक वीडियो वृत्त चित्रों का निर्माण किया गया हैं। केन्द्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी संस्थान बच्चों के लिए शैक्षिक कार्यक्रम तैयार करता हैं जिनमें विज्ञान की बातें बड़े रोचक तरीके से नाट्य प्रस्तुतीकरण द्वारा समझाई जाती हैं। विज्ञान पत्रकारिता में संदर्भों की खोज तथा सूचना संसाधन में कम्प्यूटर का प्रयोग होने लगा हैं।

समाचार, रिपोतार्ज, लेख, कथाएँ, उपन्यास, कविताएँ, नाटक रूपक वैज्ञानिक समीक्षाएँ, साक्षात्कार, भेटवार्ता, परिचर्चा आदि का भी परिमार्जित स्वरूप सामने आया हैं। इस प्रकार निःसंदेह हिन्दी विज्ञान पत्रकारिकता के क्षेत्र में प्रगति हुई हैं। लोकप्रिय और शोध पत्रिकाओं के साथ ही हिन्दी में समाचार पत्र फीचर सेवा, वीडियो पत्रिका, विश्वकोश, दूरदर्शन धारावाहिक आदि विधाओं का भी श्री गणेश हो चुका है फिर भी हिन्दी विज्ञान पत्रकारिकता के इन संसाधनों को पर्याप्त नहीं कहा जा सकता।

प्रथम पीढ़ी के हिन्दी विज्ञान लेखकों एवं पत्रकारों में डॉ. सत्यप्रकाश, प्रो. फूलदेव सहाय वर्मा, प्रो. भगवती प्रसाद श्रीवास्तव, रामगोपाल चतुर्वेदी, डॉ. ओमप्रकाश शर्मा आदि ने आरंभिक आधुनिक हिन्दी विज्ञान लेख में अतुलनीय भूमिका निभाई हैं। उनका निजी योगदान तथा प्रेरणा अद्वितीय हैं।

दूसरी पीढ़ी में श्री रमेशदत्त शर्मा, श्री श्याम सुंदर शर्मा, श्री देवेन्द्रनाथ भटनागर, डॉ. एच.एस. विश्नोई, श्री राममूर्ति आदि आते है। इनमें वह उत्साह और लगन नहीं पायी गयी, जो प्रथम पीढ़ी के विज्ञान पत्रकारों में थी। तीसरी कतार में डॉ. जगदीप सक्सेना, श्री विष्णुप्रताप सिंह, श्री चक्रेश कुमार, श्री प्रदीप चतुर्वेदी आदि आते हैं। आधुनिक लेखकों और पत्रकारों की लम्बी सूची हैं फिर भी आज हिन्दी विज्ञान पत्रकारिकता हेतु हर विषय पर विशेषज्ञ पत्रकार चाहिए। साहित्य की हर विधा पर विज्ञान देने में सक्षम विज्ञान पत्रकार चाहिए।

इस प्रकार हिन्दी विज्ञान पत्रकारिकता की वर्तमान स्थिति को देखते हुए तथा इसकी क्षमताओं और संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए कहा जा सकता है कि हिन्दी विज्ञान पत्रकारिकता का भविष्य उज्जवल हैं। सच पूछा जाए तो आज आवश्यकता हिन्दी

विज्ञान पत्रकारिकता के क्षेत्र में लम्बी छलांग लगाकर उसे वर्तमान गतिशील जमाने के साथ ले आने की हैं।

संदर्भ ग्रंथों की सूची –

01. डॉ. ए.रमेश चौधरी – संचार माध्यम

02. मनोज कुमार पटौरिया – विज्ञानपुरी 1987

03. डॉ. शिवगोपाल मिश्र – हिन्दी में विज्ञान लेखन : कुछ समस्याएँ

04. डॉ. देवेन्द्र मेवाड़ी – विज्ञान प्रगति (हिन्दी में विज्ञान लेखक अंक)

05. डॉ. वेद प्रताप वैदिक – हिन्दी पत्रकारिकता : विविध आयाम

06. डॉ. ओम प्रकाश शर्मा – वैज्ञानिक शब्दावली : इतिहास और सिद्धांत

07. प्रेमचंद्र श्रीवास्तव – विज्ञान

जनांकिकीय लाभांश के माध्यम से आर्थिक विकास

डॉ. (श्रीमती) सुदीप छाबड़ा
सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र
श्री अटल बिहारी वाजपेयी
शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय,
इन्दौर (म.प्र.)

वर्तमान समय में भारत के अर्थशास्त्रियों, नीति निर्माताओं एवं समाज सुधारकों सभी के समक्ष एक जनांकिकीय समस्या गहन चुनौती के रूप में विद्यमान है। यह चुनौती भारत की आयु संरचना में आने वाले परिवर्तन के फलस्वरूप आबादी में युवाओं की बढ़ती हुई भागीदारी अर्थात् उसके जनांकिकीय लाभांश से जुड़ी हुई है। इसे जनांकिकी विदों के एक बड़े वर्ग द्वारा देश के लिए काफी अनुकूल माना जा रहा है क्योंकि यदि इस युवा जनसंख्या को हम स्वास्थ्य, शिक्षा एवं कौशल विकास से जुड़ी सुविधाएँ प्रदान करें, इनसे एक कुशल मानव संसाधन का निर्माण करें और इन्हें समुचित रोजगार के अवसर प्रदान करें तो यह परिस्थिति हमारे आर्थिक विकास के लिए अनुकूल ही सिद्ध होगी। मानवीय संसाधनों के विकास द्वारा सतत् व धारणीय विकास तथा उत्पादक रोजगार में योगदान दिया जा सकता है। एक स्वस्थ, शिक्षित और कुशलता प्राप्त श्रमशक्ति, आर्थिक विकास में अधिक महत्वपूर्ण और प्रभावी रूप से योगदान दे सकती है।

शब्द कुंजी – जनांकिकी, कौशल विकास, मानव संसाधन, धारणीय विकास, आयु संरचना, मानव पूँजी निर्माण, कार्यशील जनसंख्या, आर्थिक विकास।

यद्यपि प्राकृतिक संसाधन एवं मानव संसाधन दोनों ही आर्थिक विकास के महत्वपूर्ण आधार हैं लेकिन प्राकृतिक साधन निर्जीव पदार्थ हैं जबकि मानव संसाधन सजीव। वास्तव में किसी भी देश का आर्थिक विकास वहाँ की जनसंख्या अर्थात् मानवीय संसाधनों की योग्यता और कुशलता पर ही निर्भर करता है। भारत सरकार द्वारा प्रस्तुत वर्ष 2012–13 की आर्थिक समीक्षा के अनुसार ''नियोजित विकास का अंतिम लक्ष्य धारणीय विकास द्वारा लोगों के जीवन की गुणवत्ता को मानवीय कल्याण के लिए सुनिश्चित करना है, विशेषकर जनसंख्या के गरीब और कमजोर वर्ग के उत्थान के लिए नीतिगत उपायों के रूप में, इसके लिए सामाजिक क्षेत्र के विकास और कार्यक्रमों को बढ़ावा देने की आवश्यकता है।''

विश्व बैंक के 192 देशों के बारे में किए गए अध्ययन के निष्कर्ष के आधार पर किसी भी देश के विकास में भौतिक पूँजी और भौतिक आधार संरचना का केवल 16 प्रतिशत तथा प्राकृतिक पूँजी का केवल 20 प्रतिशत हिस्सा है, बाकी का 64 प्रतिशत मानव एवं सामाजिक पूँजी का परिणाम होता है।

शोध का उद्देश्य

- भारत की जनसंख्या आयु संरचना का अध्ययन करना।
- देश के आर्थिक विकास पर पड़ रहे जनसंख्या लाभांश के प्रभावों का अध्ययन करना।
- देश में मानव पूँजी निर्माण में वृद्धि हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध पत्र सम्पूर्ण रूप से द्वितीयक समंकों पर आधारित है जिन्हें विभिन्न पाठ्य पुस्तकों, पत्रिकाओं, समाचार पत्रों एवं वेबसाइट्स के माध्यम से प्राप्त किया गया है। पश्चात् प्राप्त साम्रगी का विश्लेषण कर निष्कर्ष प्रस्तुत किए गए हैं।

जनांकिकीय लाभांश

जब कभी भी समय के साथ किसी राष्ट्र की जनसंख्या की आयु संरचना में ऐसा परिवर्तन होता है जिसके कारण 15 से 59 वर्ष के कार्यशील आयु वर्ग का हिस्सा बढ़ जाता है और साथ ही उस पर निर्भर 15 वर्ष से कम आयु वर्ग का हिस्सा कम हो जाता है, तो कार्यशील आयु वर्ग के लोगों की बचत क्षमता में वृद्धि होती है, जो अन्ततः विनियोगों में परिवर्तित होकर विकास दर में वृद्धि उत्पन्न करती है। इस वृद्धि को ही जनांकिकीय लाभांश कहा जाता है। अन्य सरल शब्दों में, जब किसी देश की कुल जनसंख्या में कार्यशील जनसंख्या का भाग अधिक हो तो इसे जनांकिकीय लाभांश कहते हैं। यह देश के विकास में काफी सहायक होता है क्योंकि 15–59 वर्ष की आयु वर्ग की जनसंख्या उत्पादक होती है। इस स्थिति का आर्थिक विकास पर सकारात्मक प्रभाव जानने हेतु विस्तृत विश्लेषण आवश्यक है।

किसी देश की जनसंख्या में विभिन्न आयु वर्गों के अनुपात को आयु संरचना कहा जाता है। जिसके अंतर्गत मुख्यतः तीन आयु वर्गों को शामिल किया जाता है – 0–14 वर्ष, 15–59 वर्ष तथा 60 से अधिक वर्ष। सामान्यतया 15 वर्ष से 59 वर्ष की आयु वर्ग के लोगों को कार्यशील जनसंख्या या उत्पादक जनसंख्या कहा जाता है साथ ही उस जनसंख्या को आदर्श माना जाता है जिसमें कार्यशील जनसंख्या अधिक हो तथा आश्रित जनसंख्या न्यून

हो। किसी भी देश की जनसंख्या की आयु संरचना के माध्यम से उसकी कार्यशील जनसंख्या, निर्भर जनसंख्या एवं संतान उत्पादक जनसंख्या आदि की जानकारी प्राप्त की जा सकती है तथा इसके द्वारा इनके जिम्मेदार सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारकों और समाज पर पड़ने वाले प्रभावों का भी विश्लेषण किया जा सकता है। यह आयु संरचना मृत्यु दर की ओर भी संकेत करती है क्योंकि ऐसे समाज में जहाँ युवकों की संख्या अधिक होती है वहाँ मृत्यु दर कम होती है जबकि ऐसा समाज जहाँ बच्चों तथा विधवाओं की संख्या अधिक होती है वहाँ मृत्यु दर भी अधिक होती है।

भारत में आयु संरचना

हमारे देश में विभिन्न वर्षों में की गई जनगणनाओं में आयु संरचना की स्थिति निम्न तालिका में स्पष्ट की गई है –

तालिका क्रं. 1

विभिन्न वर्षों में भारत की जनसंख्या की आयु संरचना का विवरण (प्रतिशत में)

वर्ष	आयु वर्ग		
	0–14 वर्ष	15–59 वर्ष	60 से अधिक वर्ष
1911	38.8	60.2	1.0
1921	39.2	59.6	1.2
1931	38.3	60.2	1.5
1941	38	60.0	2.0
1951	38.0	57.1	5.5
1961	41.0	53.3	5.6
1971	42.0	52.0	6.0
1981	39.7	54.05	6.25
1991	36.5	57.1	7.4
2001	35.4	57.1	7.5
2011	29.5	62.5	8.0
स्त्रोत : www.censusindia.gov.in			

स्त्रोत –

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि वर्ष 1971 तक भारत की आयु संरचना में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं दिखाई दे रहा है। वर्ष 1971 के पश्चात् 0–14 वर्ष के आयु समूह के प्रतिशत में क्रमशः गिरावट आती गई जो यह दर्शाती है कि भारत में वर्ष 1971 के

पश्चात् जन्म दर में गिरावट आई है। इसी प्रकार 15–59 वर्ष की आयु वर्ग वाली जनसंख्या अर्थात् कार्यशील जनसंख्या में वृद्धि हुई है जो 1981 में 54.05 प्रतिशत थी वर्ष 2011 में 62.5 प्रतिशत हो गई है। 60 वर्ष के ऊपर के लोगों का अनुपात भी बढ़ा है।

तालिका क्रं. 2

देश के मुख्य राज्यों में जनसंख्या की आयु संरचना का विवरण (प्रतिशत में)

राज्य	0–14 वर्ष		15–59 वर्ष		60 से अधिक वर्ष	
	1961	2011	1961	2011	1961	2011
आंध्रप्रदेश	39.54	24.6	54.23	66.6	6.23	8.8
बिहार	42.32	37.3	52.07	55.8	5.62	7.0
गुजरात	42.89	27.8	52.17	63.9	4.94	8.3
कर्नाटक	42.16	25.7	52.11	65.9	5.73	8.4
केरल	42.64	23.2	51.53	64.3	5.84	12.6
म.प्र.	40.82	32.1	54.02	60.8	5.16	7.1
महाराष्ट्र	40.67	27.2	54.07	63.6	5.27	9.3
उड़ीसा	39.10	27.7	55.23	63.0	5.67	9.5
पंजाब	43.57	25.6	49.87	64.9	6.56	9.3
राजस्थान	42.66	32.5	52.19	60.2	5.14	7.2
तमिलनाडु	37.61	23.4	56.79	66.1	5.60	10.5
उ.प्र.	40.50	33.7	53.22	59.5	6.29	6.8
प. बंगाल	40.93	25.5	54.06	66.3	5.01	8.2
भारत	**41.0**	**29.5**	**53.3**	**62.5**	**5.6**	**8.0**

स्त्रोत : www.censusindia.gov.in

उपर्युक्त तालिका में देश के कुछ प्रमुख राज्यों में वर्ष 1961 एवं 2011 में जनसंख्या की आयु संरचना को प्रदर्शित किया गया है। जिसमें स्पष्ट रूप से परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है जिनका विस्तृत विवरण इस प्रकार है –

- केवल मात्र एक उत्तर प्रदेश ऐसा राज्य है जहाँ कार्यशील जनसंख्या के प्रतिशत में कमी पाई गई।
- आंधप्रदेश, बिहार, गुजरात, कर्नाटक, केरल, तमिलनाडू, पं. बंगाल जैसे राज्यों में कार्यशील जनसंख्या में 10 प्रतिशत से भी अधिक की वृद्धि देखी गई है।
- मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र एवं उड़ीसा ऐसे राज्य हैं जहाँ कार्यशील जनसंख्या के प्रतिशत में वृद्धि तो है लेकिन वह 10 प्रतिशत से कम रही है।

भारत में जनांकिकीय लाभांश का वर्तमान स्वरूप

सकारात्मक पक्ष

भारत में वर्तमान आयु संरचना में होने वाले उपर्युक्त परिवर्तन निश्चित रूप से सकारात्मक हैं और आर्थिक विकास की भविष्य में भी बढ़ती दर की संभावना व्यक्त करते हैं। वर्तमान में निम्नलिखित परिस्थितियाँ इसका प्रमाण हैं –

- स्त्रियों की प्रस्थिति में सुधार हुआ है।
- शिक्षा के प्रसार एवं जागरूकता में वृद्धि हुई है।
- आधुनिक मूल्यों का प्रसार हुआ है।
- लघु परिवार की महत्वता बढ़ रही है।
- जनसंख्या समस्या के बारे में जागरूकता बढ़ रही है।
- स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार तीव्रता से हो रहा है।

उपर्युक्त परिस्थितियों के विकास के कारण जन्मदर की अधिकता जो कई सामाजिक व सांस्कृतिक कारकों का परिणाम है, बहुत हद तक नियंत्रित कर ली गई है। इसी कारण से आशावादी जनांकिकीविद् जनसंख्या के वर्तमान परिदृश्य को सामाजिक आर्थिक विकास हेतु सकारात्मक प्रवृत्ति के रूप में इंगित कर रहे हैं। यद्यपि अभी भारत की वर्तमान जनांकिकीय आयु संरचना की यह प्रवृत्ति विकसित देशों की तुलना में अच्छी नहीं मानी जा सकती क्योंकि जापान और अमेरिका की कार्यशील जनसंख्या लगभग 70 प्रतिशत एवं मध्य व पूर्वी यूरोप की लगभग 90 प्रतिशत है, परन्तु हम निरंतर सकारात्मक दिशा की ओर अग्रसर हैं जो एक शुभ लक्षण कहा जा सकता है।

नकारात्मक पक्ष

विकास के निराशावादी विचारक उपर्युक्त सकारात्मक व्याख्या से संतुष्ट नहीं हैं। इनके अनुसार एक बड़ा कार्यबल अधिक श्रमशक्ति के रूप में तभी रूपान्तरित हो सकेगा

जब उसके लिए उत्पादक रोजगार सुलभ होंगे और कुशल श्रमिक उपलब्ध होंगे क्योंकि मानवीय संसाधन केवल श्रमशक्ति की संख्या पर निर्भर नहीं करता अपितु उसके गुणों पर भी निर्भर होता है। इस दृष्टिकोण से भारत की अधिकांश जनसंख्या आज भी अशिक्षित है, यहाँ पौष्टिक भोजन का अभाव है, साथ ही शिक्षा, स्वास्थ्य, चिकित्सा एवं सफाई आदि की दोषपूर्ण व्यवस्था के कारण भारत की अधिकांश मानव पूँजी निम्न श्रेणी की है। इसका प्रमाण निम्नलिखित तथ्यों के माध्यम से भी प्राप्त किया जा सकता है –

निम्न एचडीआर निर्देशांक मूल्य – संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम द्वारा मार्च 2013 को मानव विकास रिर्पोट (एचडीआर) – 2013 का प्रकाशन किया गया जिसके अनुसार भारत 0.554 एचडीआई मूल्य के साथ 187 देशों में 136वें स्थान पर है अर्थात् यह मध्यम विकास वाले देशों के रूप में वर्गीकृत है। जबकि चीन 0.699 एचडीआई मूल्य के साथ 101वें स्थान पर, श्रीलंका 0.751 एचडीआई मूल्य के साथ 92वें स्थान पर तथा मालद्वीप 0.688 एचडीआई मूल्य के साथ 104वें स्थान पर स्थित है जो भारत से अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति में है।

बाल विकास का निम्न स्तर – जुलाई 2012 में 'सेव दी चिल्ड्रन' नामक संगठन द्वारा बाल विकास सूचकांक–2012 नामक रिर्पोट जारी की गई। इसके अनुसार विश्व भर के 141 देशों के बाल विकास सूचकांक का तीन मूल मानदण्डों यथा – स्वास्थ्य, शिक्षा और पोषण के आधार पर विश्लेषण प्रस्तुत किया गया। इसकी रैंकिंग के अनुसार, वर्तमान में बच्चों के रहने के लिए विश्व में सबसे अच्छि जगह जापान है जबकि दुनिया की सबसे तीव्र आर्थिक विकास वाली अर्थव्यवस्थाओं में सम्मिलित भारत को इसमें 112वाँ स्थान प्राप्त हुआ है। जिसे संतोषप्रद नहीं कहा जा सकता है।

आर्थिक असमानता और गरीबी – योजना आयोग के वर्ष 2011–12 के आंकड़ों के अनुसार शहरी क्षेत्रों में अमीरों–गरीबों के मध्य आर्थिक असमानता सर्वोच्च स्तर पर है और यह स्थिति एक सामाजिक–आर्थिक चुनौती बन गई है। आर्थिक असमानता के स्तर को मापने वाले 'गिनी स्थिरांक' सुचकांक के अनुसार वर्ष 2011–12 में राष्ट्रीय स्तर पर शहरों में असमानता का स्तर बढ़कर 0.37 गिनी स्थिरांक हो गया है। जैसे–जैसे यह स्थिरांक बढ़ रहा है, वैसे–वैसे शहरी गरीबों की सामाजिक–आर्थिक कठिनाइयाँ भी बढ़ती जा रही है।

निर्धनता का गंभीर स्तर – वर्तमान में हमारे देश में बारहवीं पंचवर्षीय योजना चल रही है अर्थात् 11 पंचवर्षीय योजनाएँ पूरी हो चुकी है लेकिन इतने वर्षों के बावजूद भी यदि राज्यों

की स्थिति पर नजर डालें तो 23.8 प्रतिशत की राष्ट्रीय औसत गरीबी की तुलना में वर्ष 2009–10 में अधिकतम गरीबी मानव संख्या अनुपात (एचसीआर) बिहार में 53.3 प्रतिशत विद्यमान है, इसके बाद असम में 37.9 प्रतिशत और उत्तरप्रदेश में 37.7 प्रतिशत विद्यमान हैं।

बहुआयामी निर्धनता सूचकांक – एचडीआर रिपोर्ट 2013 में विभिन्न देशों के लिए बहुआयामी निर्धनता सूचकांक ज्ञात किए गए हैं। इसमें भी भारत की स्थिति संतोषप्रद नहीं है जो इस बात से स्पष्ट है कि 2005–06 में भारत की 53.7 प्रतिशत जनसंख्या इस बहुआयामी निर्धनता से पीड़ित थी जबकि चीन में यह केवल 12.5 प्रतिशत था।

प्रतिस्पर्धा के क्षेत्र में पिछड़ापन – वैश्विक प्रतिस्पर्धा रिपोर्ट 2013 बताती है कि भारत अपनी व्यवसायिक नैतिकता, वस्तु और श्रम बाजार की क्षमता, अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी की उपलब्धता, नवप्रर्वतन, कानून और व्यवस्था जैसे कई क्षेत्रों में काफी पीछे रहा है अतः आवश्यकता इस बात की है कि आर्थिक वातावरण के अनुकूलन हेतु सरकार को नई व्यवस्था तथा नये औघोगिक वातावरण पर विचार करना होगा।

जनसंख्या की दृष्टि से भारत का विश्व में द्वितीय स्थान है। 2011 की जनगणना के अनुसार हम आज लगभग 121 करोड़ हो चुके हैं लेकिन अधिकांश गतिविधियों के लिए भारत को आज भी जनशक्ति के अभाव की समस्या से जूझना पड़ता है। इसका मुख्य कारण यह है कि भारत अपनी जनसंख्या को मानव पूँजी में परिवर्तित नहीं कर सका है। वास्तव में ऐसा करना तभी सम्भव होग जब हम अपनी जनसंख्या को अधिक व अच्छी स्वास्थ्य सुविधाएँ और श्रेष्ठ तथा समुचित शिक्षा सुविधाएँ उपलब्ध कराएँ। इस हेतु निम्न दो घटकों पर ध्यान देना आवश्यक है –

- शिक्षा और कौशल निर्माण
- स्वास्थ्य व पोषण

मानव पूँजी विकास हेतु सुझाव

- प्राथमिक शिक्षा का न केवल विस्तार किया जाए बल्कि अनिवार्य करने हेतु और अधिक प्रयास किए जाएं।
- मानव पूँजी निर्माण को प्रोत्साहित करने हेतु शिक्षा प्रणाली में मूलभूत सुधार करने की आवश्यकता है। इसके लिए जहाँ एक ओर तो हमें साक्षरता कार्यक्रम को सक्रिय

करके निरक्षरता को दूर करना चाहिए वहीं दूसरी ओर उच्च शिक्षा केवल उन्हीं को दी जाए जो इसके योग्य हों ताकि शिक्षित बेरोजगारी को रोका जा सके।

- स्कूलों में ही कौशल प्रशिक्षण के माध्यम से माध्यमिक शिक्षा को और अधिक रोजगारपरक बनाने के प्रयास किए जाने चाहिये। इस हेतु इन माध्यमिक स्कूलों में तकनीकी कौशल एवं प्रशिक्षण से युक्त शिक्षकों की नियुक्ति करनी चाहिए।
- गैर सरकारी संस्थाएँ तथा एनजीओ भी प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं आवश्यकता केवल इस बात की है कि इन्हें प्रोत्साहित किया जाए।
- सार्वजनिक स्वास्थ्य सम्बंधी सुविधा प्रणाली का पर्याप्त विस्तार किया जाये ताकि ग्रामीण एवं शहरी दोनों क्षेत्रों की स्वास्थ्य सम्बंधी आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके।
- सरकारी चिकित्सक शहरों के साथ–साथ ग्रामीण क्षेत्रों में भी कार्य करने हेतु तत्पर हो सकें। इस हेतु सरकार उन्हें विभिन्न योजनाओं के माध्यम से आश्वस्त एवं आकर्षित करे।
- विभिन्न पैरामेडिकल तथा सामुदायिक स्तर के स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की अधिक से अधिक भर्ती की जाए, उन्हें प्रशिक्षित करने की समुचित व्यवस्था की जाए ताकि वे निचले स्तर से ही स्वास्थ्य के प्रति जनता को जागरूक कर सकें।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि आज भारत अपने जनांकिकीय लाभांश के परिप्रेक्ष्य में उस दौर से गुजर रहा है जहाँ पर उसके अतिरिक्त पूरा विश्व अपनी जनसंख्या को लेकर वृद्धावस्था की ओर अग्रसर हो रहा है वहीं भारत अपनी युवा कार्यशील जनसंख्या के साथ उत्तरोत्तर तरूणाई की ओर गतिशील हो रहा है। जिसका कारण मूल रूप से आधुनिक चिकित्सा सुविधाओं में महत्वपूर्ण वृद्धि के फलस्वरूप, मृत्यु दर में आई कमी है क्योंकि जन्मदर में आई कमी उल्लेखनीय नहीं कही जा सकती है।

स्पष्ट है अगर भारत को इस जनांकिकीय लाभांश का पूरा लाभ उठाना है तो उसे न केवल व्यापक आर्थिक सुधारों को आगे बढ़ाना पड़ेगा बल्कि कृषि में निवेश और तकनीक को बढ़ाने से लेकर विनिर्माण और सेवा क्षेत्र में श्रम सुधारों को प्राथमिकता देनी होगी। इसके साथ प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करना होगा ताकि सेवा क्षेत्र को योग्य प्रत्याशियों की कमी का सामना न करना पड़े तथा रोजगार एवं गुणवत्ता में सुधार हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. कुमार डॉ. वि. एवं गुप्त डॉ. शिवनारायण, जनांकिकी, 2011–12, पृ. सं. 319
2. बघेल डॉ. डी. एस. एवं बघेल डॉ. किरण, जनांकिकी, 2006, पृ. सं. 270
3. गुप्ता डॉ. शीलचंद्र एवं खत्री रिया, शिवनारायण, जनांकिकी, 2014, पृ. सं. 59, 191
4. योजना, अंक–3, मार्च 2013, पृ. सं. 15
5. दत्त रूद्र एवं सुंदरम के. पी. एम. भारतीय अर्थव्यवस्था, 2002, पृ. सं. 26
6. लघु अतिरिक्तांक, भारत में जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्ति, 2013–14, पृ. सं. 32
7. आज का प्रतिरोगी अतिरिक्तांक–3, जनगणना 2011, वर्ष 2013–14, पृ. सं. 09
8. प्रतियोगी दर्पण, मानव विकास रिर्पोट – 2013, पृ. सं. 78, 99

1857 के स्वतंत्रता संग्राम में रानी अवन्तीबाई लोधी का योगदान

डॉ. श्रीमती शिवा खण्डेलवाल
सहायक प्राध्यापक – इतिहास
श्री अटल बिहारी वाजपेयी
शासकीय कला एवं वाणिज्य
महाविद्यालय,
इन्दौर (म.प्र.)

1857 के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अनेक देशभक्तों व वीरांगनाओं ने अपने प्राणों तक का बलिदान कर दिया। किन्तु इनमें बहुत से त्यागी बलिदान शहीदों व राष्ट्र निर्माताओं को इतिहास में उचित व सम्मान पूर्ण स्थान नहीं मिल पाया। रामगढ़ की रानी अवन्तीबाई लोधी भी उन्हीं वीरांगनाओं में से एक हैं। 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में रानी अवन्तीबाई लोधी रेवांचल में मुक्ति आंदोलन की सूत्रधार थीं। उन्होंने जिस साहस व धैर्य के साथ अंग्रेजों का मुकाबला किया व अपने प्राणों का बलिदान कर दिया वह आज भी भारतीयों के राष्ट्रीय जीवन का मार्गदर्शन कर रहा है।

शब्दकुंजी – वीरांगना – वीर महिला, वीतरागी – विरक्त, अल्पवयस्क – नाबालिग।

रानी अवन्तीबाई का जन्म 16 अगस्त 1831 को सिवनी जिले के ग्राम मनकेड़ी में सिवनी जिले में जमींदार श्री जुझारसिंह के परिवार में हुआ था।[1] उनका पालन पोषण व शिक्षा–दीक्षा मनकेड़ी में ही हुई। बाल्यकाल में ही उन्होंने तलवार चलाना व घुड़सवारी करना सीख लिया था। उनका विवाह सन् 1849 को शिवरात्रि के दिन मंडला जिले की रामगढ़ रियासत के राजा लक्ष्मणसिंह के पुत्र विक्रमजीत सिंह के साथ हुआ था। राजा विक्रमजीत सिंह वीतरागी प्रवृत्ति के थे, पूजा–पाठ व धार्मिक अनुष्ठानों में लगे रहते थे। राज्य संचालन का काम उनका पत्नी अवन्तीबाई ही किया करती थीं। उनके दो पुत्र थे अमानसिंह व शेरसिंह। रामगढ़ रियासत अपने चर्मोत्कर्ष के समय वर्तमान मध्यप्रदेश के मंडला जिले के अंतर्गत चार हजार वर्ग मील में फैली हुई थी। इसमें प्रतापगढ़, मुकुटपुर, रामपुर, शाहपुर, शाहपुरा निवास, रामगढ़, चौबीसा, मेंहदवानी और करोतिया नामक 10 परगने और 681 गांव थे, जो सोहागपुर, अमरकंटक और चबूतरा तक फैले थे।[2] लार्ड

डलहौजी ने 13 सितम्बर सन् 1851 को हड़पनीति के तहत राजा विक्रमजीत सिंह को विक्षिप्त व अमानसिंह को नाबालिग घोषित कर रामगढ़ को हड़पने के लिए उसे कोर्ट ऑफ वार्ड्स के अधीन कर दिया एवं राज्य के प्रशासन के लिए शेख मोहम्मद एवं मोहम्मद अबदुल्ला को तहसीलदार नियुक्त कर रामगढ़ भेजा और राजपरिवार को पेंशन दे दी गई। यह सब देख रानी बहुत दुखी हुईं। रानी ने दोनों को बाहर निकाल दिया। 1855 में राजा विक्रमजीत सिंह की मृत्यु हो गई। रानी ने नाबालिग पुत्र की तरफ से संरक्षिका के रूप में शासन का संचालन किया।

मेरठ में अंग्रेजों के विरूद्ध क्रांति आरंभ हो गई थी। मध्य भारत के देशी राज्यों के शासक कानपुर में नाना साहब एवं तात्या टोपे के सम्पर्क में थे। चूंकि 1857 ई. में सागर एवं नर्मदा परिक्षेत्र के निर्माण के साथ अंग्रेजों की शक्ति में वृद्धि हो गई थी और उन्हें अकेले रोक पाना किसी राजा के वश में नहीं था अतः रानी अवन्तीबाई लोधी ने राज्य के आसपास के राजाओं, जमींदारों व परगनादारों का एक विशाल सम्मेलन गढ़ा पुरवा के राजा शंकरशाह की अध्यक्षता में आयोजित किया। इस सम्मेलन में सत्तर वर्षीय शंकरशाह को क्रांति का नेता चुना गया।[3] अवन्तीबाई ने भी इस क्रांतिकारी संगठन को तैयार करने में बहुत ही उत्साह दिखाया। गुप्त रूप से क्रांति के प्रचार का दायित्व भी उन्हीं पर था। क्रांति का संदेश गांव–गांव तक पहुँचाने के लिए अवन्तीबाई ने काली चूड़ियां व अपने हाथ से पत्र लिखकर किसानों, सैनिकों, जमींदारों और मालगुजारों को भिजवाया जिसमें लिखा था कि अंग्रेजों से संघर्ष के लिए तैयार रहो या चूड़ियां पहनकर घर में बैठो। तुम्हें धर्म और ईमान की सौगन्ध जो इस कागज का पता दुश्मन को दो।[4] यह पत्र सौहाद्र और एकता का प्रतीक था और चूड़ियां पुरूषार्थ जागृत करने का माध्यम बनीं।

देश के कुछ भागों में क्रांति का शुभारम्भ हो चुका था। 1857 में जबलपुर सैनिक केन्द्र की 52वीं देशी पैदल सेना के एक सिपाही ने अंग्रेजी सेना के एक अधिकारी पर घातक हमला बोल दिया। जुलाई 1857 में मण्डला के परगनेदार उमरावसिंह ठाकुर ने कर देने से इंकार कर दिया। पूरे महाकौशल क्षेत्र में क्रांतिकारियों की हलचलें बढ़ गई थी। ब्रिटिश छावनी पर आक्रमण करने की योजना अंग्रेजों को पता चल गई अतः लेफ्टीनेंट क्लार्क ने राजा शंकरशाह व उनके पुत्र रघुनाथशाह तथा परिवार के अन्य 13 सदस्यों को बिना किसी कठिनाई के 14 सितम्बर 1857 को गिरफ्तार कर दिया व मौत की सजा सुना दी। राजा शंकरशाह इस क्षेत्र के राजवंश के प्रतीक थे अतः उनके मृत्युदंड से अंग्रेजों की

नृशंसता की व्यापक प्रतिक्रिया हुई।[5] अब इस क्षेत्र में क्रांति का नेतृत्व रानी अवन्तीबाई ने संभाला। कोर्ट ऑफ वार्ड्स को वहाँ से हटाकर शासन व्यवस्था रानी ने अपने हाथ में ले ली।

रानी के विद्रोह की खबर जब जबलपुर के कमिश्नर को लगी तो उसने रानी से मंडला के डिप्टी कलेक्टर से मिलने को कहा। उन्हें यह संदेश भी मिला कि या तो वह कंपनी सरकार से संधि कर ले अथवा परिणाम भुगतने के लिए तैयार रहे। रानी ने अंग्रेज अधिकारियों से भेंट करने के स्थान पर युद्ध की तैयारियाँ प्रारम्भ कर दी। जबलपुर डिवीजन के तात्कालीन कमिश्नर ने अपने अधिकारियों को घटनाओं के भेजे ब्यौरे में लिखा है – ''राजा शंकरशाह की मृत्यु से क्रुद्ध एवं अपमानित लगभग 4000 विद्रोही रामगढ़ की विधवा रानी अवन्तीबाई तथा युवक राजा सरयूप्रसाद के कुशल नेतृत्व में नर्मदा नदी के उत्तर क्षेत्र में सशस्त्र विद्रोह के लिए एकत्रित हो गए हैं।''

रामगढ़ के सेनापति ने भुआ बिछिया पर आक्रमण किया, अंग्रेजी सिपाही थाना छोड़कर भाग गए अतः थाने पर विद्रोहियों का अधिकार हो गया। इसी प्रकार घुघरी पर भी इनका अधिकार हो गया। केप्टन एच.एफ. वाडिंगटन के पराजित होने के पश्चात क्रांतिकारी जश्न मनाने लगे। क्रांतिकारी जो अब तक बहुत बड़ी संख्या में मंडला नगर के चारों ओर एकत्र हो चुके थे ऐसा विश्वास किया जाता है कि वे नगर पर आक्रमण करने का संकल्प कर चुके थे।[6]

डिप्टी कमिश्नर के पास गोला बारूद समाप्त हो चुका था। रामगढ़ के कुछ सिपाहियों ने व मुकास के जमींदार ने नारायणगंज पहुँचकर जबलपुर मंडला मार्ग बंद कर दिया था अतः वह जबलपुर लौट नहीं सकता था। इससे भी बुरी खबर यह थी कि पूरे मंडला व रामगढ़ में विद्रोह भड़क उठा था। यह भी सुना गया था कि कुछ विद्रोही नर्मदा नदी के दक्षिण की ओर जाकर सिवनी की ओर जाने वाले रास्ते को भी बंद करने के प्रयत्न में थे। इसी समय नागपुर तथा मिर्जापुर से डाक का आना जाना बंद था। इस प्रकार चारों ओर से क्रांतिकारियों से घिर जाने से मंडला का डिप्टी कमिश्नर वाडिंगटन भयभीत हो उठा। विद्रोह को कुचलने में वह असमर्थ था अतः सिवनी चला गया। ऐसा करने के लिए उसे कमिश्नर इरस्किन ने सुझाव भी दिया था क्योंकि बिना और सैनिक सहायता के वह कुछ भी नहीं कर सकता था तथा बिना कारण ही वह अपने जीवन को खतरे में डाले हुए था। अतः 1 दिसम्बर 1857 को वह सिवनी जा पहुँचा। इस प्रकार

दिसम्बर 1857 में संपूर्ण मंडला जिला (केवल मंडला नगर को छोड़कर) क्रांतिकारियों के अधिकार में आ गया। इस प्रकार रानी अवन्तीबाई अघोषित रूप से मंडला की शासक बन गईं और दिसम्बर 1857 से फरवरी 1858 तक गढ़ा मंडला पर शासन किया।

केप्टन वाडिंगटन ने हार न मानकर अब पुनः सैनिक एकत्रित किए। किन्तु अब सिवनी जबलपुर और मंडला के क्रांतिकारियों में ठोस सामंजस्य स्थापित हो गया और मंडला में रानी अवन्तीबाई, जबलपुर में बहादुर सिंह लोधी सिवनी में राजा सतीश प्रसाद लोधी तथा नरसिंगपुर में वीर पिता का वीर पुत्र दीवान मेहरवान सिंह लोधी इस आंदोलन के अगुआ बने हुए थे।[7] कोई पुलिस चौकी को जला रहा था तो दूसरा तहसील को लूट रहा था। दीवान मेहरवान सिंह यदि अंग्रेजों को नर्मदा के किनारे दौड़ाए जा रहे थे तो रानी अवन्तीबाई मंडला पर कब्जा किए हुए थीं। इन स्थितियों में कमिश्नर मेजर इरस्किन के आदेश पर 27 दिसम्बर को सिवनी के डिप्टी कमिश्नर ने 52वीं नेटिव इन्फेंट्री के कमाण्डर लेफ्टिनेंट बार्टन के निर्देशन में नागपुर इर्रेगुलर इन्फेंट्री की ग्रिनेडियर कंपनी को केप्टन वाडिंगटन के सुपुर्द कर दिया ताकि वह सिवनी जबलपुर तथा मंडला जिले में नर्मदा किनारे से विद्रोहियों का सफाया कर सके।

रानी अवन्तीबाई श्रेष्ठ व्यूह रचनाकार थीं। उन्होंने आसपास के सभी ठाकुरों एवं मालगुजारों को एकत्रित करके कहा कि हमें अंग्रेजों को देश से निकालना है। इसके लिए हमें उनके चिन्ह् नष्ट करके उनके आवागमन के साधन अवरूद्ध करना पड़ेंगे। सभी मालगुजारों ने रानी के निर्देश पर अंग्रेजों पर आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिया। इसकी सूचना मिलने पर वाडिंगटन 31 दिसम्बर 1857 को मुख्य सड़कों के मार्ग को बदलकर पहाड़ियों तथा घने जंगलों से गुजरता हुआ, मुहिम पर आगे बढ़ा।[8]

लेफ्टिनेंट बार्टन के नेतृत्व में नागपुर की सेनाएँ बिछिया विजय कर रामगढ़ की ओर बढ़ीं। वाडिंगटन भी घुघरी की तरफ बढ़ा। 15 जनवरी तक घुघरी पर अंग्रेजों का नियंत्रण स्थापित हो गया। अब अंग्रेजों ने रामगढ़ की तरफ लेफ्टिनेंट बार्टन और काकबर्न के नेतृत्व में दाहिनी ओर से व वाडिंगटन के नेतृत्व में बाईं ओर से आक्रमण किया। विद्रोहियों और अंग्रेजी सेना में संघर्ष चलता रहा। परन्तु अंग्रेजी सेना संख्या बल व युद्ध सामग्री की दृष्टि से रानी की सेना से कई गुना शक्तिशाली थी। और धीरे–धीरे अंग्रेज आंदोलनकारियों पर दबाव भी बढ़ाते जा रहे थे और रानी की तरफ के ठाकुरों व मालगुजारों को नष्ट करते जा रहे थे अतः स्थिति को देखते हुए रानी ने किले के बाहर निकलकर देवहारगढ़ पहुँचकर

वहाँ की पहाड़ियों से छापामार युद्ध करना उचित समझा। इस प्रकार रामगढ़ पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया।

देवहारगढ़ पहुँची रानी की सहायता के लिए शाहपुरा एवं शाहपुर के जमींदार आ गए थे। देवहारगढ़ भी अंग्रेजी सेना से घिर चुका था। सैनिकों की संख्या भी कम होती जा रही थी अतः रानी के लिए अब युद्ध करना व स्वयं को सुरक्षित रखना कठिन हो गया था। अतः 20 मार्च को अपी पूर्वजा गढ़ा मंडला की रानी दुर्गावती का अनुसरण करते हुए अपने आत्मसम्मान की रक्षा के लिए गिरधारी नाई की कटार छीनकर घुनसी नाले के निकट रानी ने आत्मोत्सर्ग कर दिया। मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री शिवराजसिंह चौहान ने 20 मार्च 2013 को डिण्डोरी जिले के ग्राम बालपुर में रानी अवन्ती लोधी के बलिदान दिवस समारोह को संबोधित करते हुए कहा कि ''रानी अवन्तीबाई का बलिदान देशवासियों को देशभक्ति और परमार्थ के लिए जीने की प्रेरणा देता रहेगा।''

संदर्भ ग्रंथ सूची –

01. वर्मा खेम सिंह – लोधी क्षत्रियों का वृहत्त इतिहास, बुलन्द शहर, 1994
02. सरस थम्मन सिंह – अवन्तीबाई लोधी, साहित्य केन्द्र प्रकाशन, दिल्ली, 1995
03. कौशिक गणेश एवं फूलसिंह – वतन पर मिटी अवन्तीबाई, नवभारत पत्र, 14.09.94
04. देशराज हुकुम सिंह – अमर शहीद वीरांगना रानी अवन्तीबाई, अलीगढ़, 1994
05. मिश्र सुरेश – रामगढ़ की रानी अवन्तीबाई, भोपाल, 2004
06. इरस्किन मेजर डब्ल्यू सी. – नरेटिव्ह ऑफ इवेन्ट्स 1857–58, पैरा 301
07. गुरू एस. डी. – सिवनी गजेटियर, 1984, पृ. 6
08. इरस्किन मेजर डब्ल्यू सी. – नरेटिव्ह ऑफ इवेन्ट्स 1857–58, पैरा 303
09. भाटी डॉ. सुशील एवं महिपाल सिंह – 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में अवन्तीबाई की भूमिका, 19 फरवरी 2013, janitihasblogspot.in
10. www.mppost.com

युवावस्था में समाजीकरण की प्रक्रिया (सैद्धान्तिक बनाम व्यवहारिक परिप्रेक्ष्य)

डॉ. विमला गोयल

सहा. प्राध्या. समाज शास्त्र

शास. बी. एस. महा. देपालपुर

आज हमारे सामने सबसे बडी चुनौती है हमारा युवावर्ग। युवा वर्ग को उचित मार्ग और बेहतर भविष्य देना हमारी पहली आवश्यकता है। पूरा देश इस बात से चिंतिंत है कि , आज का युवा दिशाहीन हो गया है। देश में अपराध बढ रहें हैं। नित नये आयाम इस श्रृंखला में जुड रहे हैं। इस युवा पीढी पर सबकी निगाहें टिकी हुई है। युवा पीढी में अपार संभावनाएं छिपी हुई है। यदि उनकी ऊर्जा का सही ढंग से उपयोग किया जाए तो वैश्विक स्तर पर करिश्मा करने की क्षमता इनमें समाई हुई है। किंतु आज हर तरफ चिंता की लकीरे दिखाई दे रही है। सब सोचने को मजबूर हो गए है कि इस युवा पीढी को किसकी नजर लग गई। इसे क्या हो गया ? क्यों आज का युवा भटक गया है ? दिशाहीन हो गया है ? क्यों उसे राह नही सूझ रही ? वह अंधियारे में क्यों गुम हो रहा है ? अपराध दर अपराध क्यों हो रहे है ? दिन ब दिन इस श्रृंखला में नित नये आयाम क्यों जुडते जा रहे है ?आखिर कहाँ जाकर यह सिलसिला थमेगा ।

आज वह समय आ गया है कि , हम सब विचार करें, चिंतन करें कि , चूक कहाँ हुई है हमने क्या बोया था क्या सींचा था क्या संजोया था कि , आज वह पौधा जब उसके पल्लवित होने का समय आया तो विष उगल रहा है। पुनः चिंतन की आवश्यकता है और आवश्यकता है अपने अतीत वर्तमान और भविष्य में तालमेल बिठाने की, ताकि हम पुनः उस सुनहरे अतीत को संजो सके, वर्तमान को बचा सके और भविष्य को संवार सके।

प्रस्तुत शोध पत्र में प्रयास किया गया है कि , युवाओं में सामाजीकरण की प्रक्रिया के सैध्दांतिक पक्ष को व्यवहारिक धरातल पर परखा जाए , ताकि हम यह समझ पाए कि , कहीं सिध्दांत और व्यवहार में तालमेल का अभाव तो इसके लिए जिम्मेदार नहीं ?

प्रस्तुत शोध पत्र इस कामचलाउ प्राक्कल्पना पर आधारित है कि , यदि हम एक सम्पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण करना चाहते हैं तो , हमें वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में बदलाव लाना होगा। क्योंकि युवा हमारे समाज का आईना होता है। आईने में वही दिखाई देगा जो दिखाया जाएगा अर्थात जैसा बोयेंगे वैसा काटेंगे। अतः बदलाव जरुरी है । इसकी शुरुआत हमें सबसे पहले स्वयं से करनी होगी। हम स्वयं इस बदलाव के साक्षी बने और अपने घर परिवार से इसकी शुरुआत करें।

सर्वप्रथम हम अपना मूल्यांकन करें, आत्ममंथन करें कि क्या परिवार अपनी जिम्मेदारी का निर्वाहन कर रहे हैं ? क्या माता–पिता के पास बच्चों के लिए समय है ?क्या बच्चों को उचित पालन–पोषण देखभाल और परवरिश प्राप्त हो रही है , क्या हम बच्चों के साथ भावनात्मक रुप से जुड़ पाते हैं , क्या हमने उनकी रुचि अरुचि सुख–दुख में भागीदारी की है ? शायद इन सभी प्रश्नों का उत्तर ना ही होगा। यदि हम उनके साथ जुड़ेंगे, उनसे बातचीत करेंगे, उनके साथ मित्रवत व्यवहार करेंगे, उनके लिए स्वस्थ वातावरण बनाऐगें , उनके लिए अच्छा साहित्य उपलब्ध कराऐंगे , उनको अपना समय देंगें, उनकी बातें सुनेंगे, उनको अच्छी शिक्षा और संस्कार देंगे, उन्हें भारत की समृध्द परम्पराओं, प्रथाओं और संस्कृति का , तथा श्रेष्ठ जीवन मूल्यों का ज्ञान कराऐगें तो निश्चित रुप से हम एक श्रेष्ठ व्यक्तित्व का निर्माण कर सकेंगे। हम उन्हें वस्तुओं से नहीं व्यक्तियों से प्रेम करना सिखाऐं, फिर देखिए किस प्रकार का व्यक्तित्व खिलकर आपके सामने प्रस्तुत होता है ।

सामाजीकरण का मुख्य उद्देश्य व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है, शिक्षा इसका आधार होती है। किसी भी समाज की सर्वोच्च प्राथमिकता अपने युवाओं के लिए श्रेष्ठतम शिक्षा उपलब्ध कराना होना चाहिए।

सी. पी. स्नो के अनुसार ''शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मनुष्य की उस क्षमता को बढ़ाना है जिससे प्रत्येक समस्या का समाधान हो और हर चुनौती का सामना करने की योग्यता का विकास हो।" शिक्षण संस्थाऐं सामाजीकरण का सशक्त माध्यम है। यहां आकर बच्चा अपने घर परिवार में सिखाई गई बातों, आदतों, विचारों, विश्वासों, प्रथाओं, परम्पराओं, जीवन मूल्यों तथा संस्कारों को जांचने परखने और स्वीकार या अस्वीकार करने के अवसर प्राप्त करता है। शिक्षण प्रशिक्षण और खेल – खेल में ही वह यहां जीवन की सच्चाईयों

और अच्छाईयों से वाकिफ होता है। यदि यहां उसे संकुचित मानसिकता में बंधने से रोक दें और उसे खुले आकाश में विचरने दें तो वह एक खुले दिमाग वाला प्रगतिशील विचारों से युक्त और संकीर्ण मानसिकता का विरोधी व्यक्ति बनेगा , जिसके मन में मानवता के प्रति सौहार्द्र भाव होगा और जो सदैव वैश्विक दृष्टिकोण को अपने जीवन में स्थान देगा। इस प्रकार हम शिक्षण संस्थाओं में ही उदात्त चित्त युवा का व्यक्तित्व गढ़ सकने में सफल होंगे।

आज हम देखते हैं कि शिक्षण संस्थाऐं यन्त्रवत कार्य करने वाला व्यक्तित्व तैयार करने में अपनी सम्पूर्ण सामर्थ्य का अपव्यय कर रही है। समस्त प्रकार की शिक्षा व्यवस्था सैध्दांतिक ज्ञान पर आधारित हैं। शिक्षा की , ज्ञान की , व्यवहारिक धरातल पर उपयोगिता सिध्द नहीं हो पा रही है। शिक्षा और सामाजीकरण का आपसी तालमेल गड़बड़ा गया है। शिक्षा का संदर्भ सैध्दांतिक रुप से तो ठीक ठाक दिखाई पड़ता है किन्तु व्यवहारिक धरातल पर यह अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो पा रही है। आज का युवा शिक्षित, उच्च शिक्षित व्यवसायिक रुप से अत्यधिक कुशल, तकनीकी ज्ञान में निपुण कांक्रीट और ठोस व्यक्तित्व के रुप में विकसित हो रहा है। और इसके लिए जिम्मेदार है वे बड़ी – बड़ी आलीशान ज्ञान की फैक्ट्रियाँ जहा पढ़ – लिखकर वह एक कुशल कारीगर बनता है। ज्ञान की इन फैक्ट्रियों में हम डॉक्टर, इंजीनियर, मैनेजर, वैज्ञानिक और न जाने किन–किन विधाओं के पारंगत तैयार कर रहे हैं । इनके जीवन का एकमात्र लक्ष्य होता है अच्छी नौकरी, अच्छा घर, बड़ी – बड़ी गाड़ियां, हवाई यात्राऐं और भौतिक सुख – सुविधाओं से लक–दक जीवन शैली । सामाजिक जीवन से इनका कोई सारोकार नहीं, अपनी आधुनिकता और भौतिकतावादी विलासितायुक्त जीवनशैली को ही वे श्रेष्ठतम समझने की भूल कर रहे हैं।

और यही कारण है कि आज का युवा जो कि समाज की धुरी है एक ऐसे मकड़ जाल में फँसता जा रहा है जिसमें सामाजिकता और सामूहिकता का कोई स्थान नहीं है। जिसमें मूल्यों, विश्वासों, प्रथाओं, परम्पराओं और संस्कृति के त्याग और बलिदान के लिए कोई स्थान नहीं है। जहां परिवार के लिए भी अब स्पेस कम होता जा रहा है।

मेरा मानना है कि न केवल घर परिवार में वरन् शिक्षण संस्थाओं में भी युवाओं के व्यक्तित्व को सुसमाजिकृत करने की आवश्यकता है।

मेरा मानना है कि विद्यार्थी जीवन में सिखाई गई बातों को व्यवहारिक धरातल पर परखने का सर्वश्रेष्ठ स्थान है व्यक्ति का कार्यस्थल या उसकी कर्मभूमि। कार्यस्थल पर ही युवा अपने अब तक के सीखे हुए व्यवहार अपने ज्ञान कौशल और जीवन के आदर्शों का व्यवहारिक प्रयोग करता है। यह पहला पहला अवसर होता है जब वह अपने सिध्दांतों को जीवन में उतारना चाहता है। वह उत्साह से अत्यंत परिपूर्ण है। उसमें न जाने क्या कर जाने की ललक है ? दुनिया बदल ड़ालने का जज्बा है। अपने समस्त स्वप्नों को वह साकार करना चाहता है। अपने कार्यस्थल पर अपने सहयोगी साथियों के साथ। किंतु जब वह देखता है कि यहां तो सब कुछ उल्टा पुल्टा है, यहां जो बातें उसने घर परिवार, स्कूल कॉलेज में सीखी थी वह सब बेकार है, यहां इन सब बातों का कोई महत्व नहीं। उल्टे सब उसे ही मूर्ख समझते हैं तब उसका रुपांतरण शनैः शनैः होना प्रारंभ होता है और फिर प्रारंभ होता है एक अंतहीन सिलसिला व्यक्तित्व के त्रासद विकास का।

व्यवहारिक जीवन में प्रवेश करने के लिए कार्यस्थल पर पहुंचकर जब उसका सामना नवीन हालातो से होता है तब उसके पुराने सिद्धांत चकनाचूर होन लगते है उसकी शिक्षा और संस्कार धीरे–धीरे पीछे छूटने लगतें है और एक नवीन व्यक्तित्व का विकास होने लगता है धीरे–धीरे आडम्बर, झूठ और बेईमानी आदि बुराईयो से वह घिरने लगता है। जैसा वह अन्य सहकर्मियों को करते हुए देखता वैसा ही स्वयं करता है ईमानदारी और सच्चाई के साथ चलना उसके लिए मुश्किल हो जाता है । आज का सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक पर्यावरण तेजी से बदल रहा है। युवा वर्ग जिस दौर से गुजर रहा है वह कठिन दौर है। इस दौर को हम संक्रमण काल भी कह सकते है। पुरानी मान्यताएं ध्वस्त होना नही चाहती और नवीन मान्यताएं पूरी तरह से स्थापित नही हो पा रही। इन दोनो में तालमेल बैठाना और अपने लिए बेहतर भविष्य का निर्माण करना आज के युवा की सबसे बडी चुनौती है। इस चुनौती का सामना करने के लिए , उसका साथ देने के लिए , समाज ने उसे जो सामाजिक व्यवस्था दी है वह चरमराई हुई और जर्जर हो चुकी है। यही कारण है कि उसे विरासत में मिली समृद्ध परम्पराओं का निर्वाह करने में कठिनाईयां आ रही है और उसे लगता है कि , वर्तमान सामाजिक ढांचे में संरचनात्मक एवं प्रकार्यात्मक बदलाव

की आवश्यकता है। क्योंकि वर्तमान सामाजिक व्यवस्था समय के साथ धीरे धीरे अव्यवहारिक होती जा रही है।

आज इस बात की जरूरत महसूस की जा रही है कि समाजीकरण का एक ऐसा प्रगतिशील फ्रेमवर्क तैयार किया जाए जिसमें हमारा समाज स्वयं समाजीकृत हो , क्योंकि समाजीकरण एक पारस्परिक प्रक्रिया है , जिसमें हम सिर्फ सीखने वाले को ही नहीं सिखाते , वरन सीखने वाला और सिखाने वाला दोनो ही परस्पर जुडते है और एक दूसरे को प्रभावित करते है। अतः युवाओं का समाजीकरण करना यदि समाज की महती जिम्मेदारी है तो उसका निर्वाह करने के लिए समाज को भी युवाओं के अनुरूप अपने आप को बदलना होगा। एक कदम युवा बढाए तो एक कदम समाज को भी बढाना पडेगा । तभी हम उस खाई को भर पाएंगे जो आज जनरेशन गेप के रूप में हमारे सामने खडी है।

मेरा मानना है कि सिर्फ घर परिवार स्कूल, कॉलेज या सामाजिक संस्थाएं ही युवाओं के समाजीकरण के लिए कार्य करें ऐसा नही है वरन् समाज का प्रत्येक सदस्य स्वयं को और अपने आसपास के पर्यावरण को पूर्णरूपेण समाजिकृत करे। हम सब प्रण करें कि हम जिस भी स्थान पर हों जो भी काम कर रहे हों और जिस भी स्थिति में हों सदैव सकारात्मक परिवर्तन को प्रश्रय दें और एक सुंदर समाज की कल्पना को साकार करने में सहायक बने। सबसे पहली शुरूआत अपने घर से करें फिर परिवार और पडोसियों को उससे जोडें और साथ में समाज को भी जोडें और एक स्वस्थ्य पर्यावरण बनांए जिससें एक संपूर्ण व्यक्तित्व के धनी युवा का निर्माण किया जा सके। साथ ही इस बात का भी पूरा पूरा ध्यान रखे कि जीवन का लक्ष्य निर्धारित करने में फिर कोई चूक न हो। अंत में इस पंक्ति के साथ अपनी बात को पूर्ण करना चाहूंगी कि समाजीकरण की प्रक्रिया जीवन पर्यन्त चलती है इसलिए आइये हम सब सीखें सीखें और सीखें ।

सन्दर्भ सूची

Philosophic methodological and social cultural factors in the problem of youths. Education and socialization.

A kuszhanova, S. Ivanenkov The paideia project on line Twentieth world congress of philosophy Boston, Massachusetts USA 10-15 Aug. 1998

Youth socialization and social change. A Research Agenda

Swetlana Krimova Musgrave, F. Youth and the social order

London Routledge & Kegan Paul.

The problem of youths and sociologation. www.123helpme.c.m.

The value of socialization in negotiating livelihoods by T. Niclisico. www.codesria.org/imvl

Socialization of Graduate and professional students in higher education John c Weidman, Darla J. Twale Elizabeth leatly stein Volume 28 number – 03 US department of education ERIC

महिला सुरक्षा से जुड़े कानून और महिला सशक्तिकरण

डॉ. सुलभा काकिर्डे
सहायक प्राध्यापक
शा. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर
ई–मेल :
sulbhakakirde@gmail.com

भारतीय संविधान महिलाओं को सामन अवसर प्रदान करता है और सरकार को यह शक्ति प्रदान करता हैं कि वह महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक कदम उठाए। महिलाओं को सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक व सार्वजनिक जीवन में प्रतिनिधित्व, दक्षता में अभिवृद्धि, सामाजिक सुरक्षा प्रदान कर उन्हें सशक्त बनाया जा सकता है। महिला सुरक्षा कानून से महिला को सशक्त कर जिससे वो नई क्षमताओं को प्राप्त कर स्वयं को नए तरीके से देखेगी। घरेलु शक्ति संबंधों को बेहतर समायोजन करेगी महिला सशक्तिकरण आधुनिक परिवर्तन में सामाजिक न्याय की जड़ों को मजबूत करता है। महिला जब सशक्त हो जाएगी तब उन्हें किसी कानून व सुरक्षा की आवश्यकता नहीं होगी। पर आज महिला सुरक्षा, कानून व सशक्तिकरण की आवश्यकता है कि कथनी करनी दोनों की समानता से ही यह संभव होगा।

शब्द कुंजी – महिला, सुरक्षा, कानून, सशक्तिकरण।

किसी भी समाज का स्वरूप वहां की नारी की स्थिति पर निर्भर करती है। यदि उसकी स्थिति सुदृढ़ एवं सम्मानजनक हैं तो समाज भी सुदृढ़ होगा। प्राचीनकाल में नारी की स्थिति अच्छी थी समाज धीरे–धीरे आगे बढ़ता गया और नारी की स्थिति घटती गई और इतनी घटी कि उसे सशक्त करने के लिए सशक्तिकरण कार्यक्रम की आवश्यकता पड़ी। महिला प्राचीन काल में भी सुरक्षित नहीं थी जहां राजा की पत्नि का भी हरण व चिरहरण होता था। वहीं आधुनिक काल में भी वहीं स्थिति बनी हुई। संवैधानिक रूप से महिला सुरक्षा सशक्तिकरण के लिए 1829 सती प्रथा निषेध एक्ट से शुरूआत हुई जो आज भी निरंतर चल रहा है। महिला की सुरक्षा के लिए बने कानून क्या वास्तव में उसे सुरक्षा प्रदान करते हैं या महिला को महिला होने का दण्ड देते हैं जिसके परिणाम महिला होने के श्राप जैसा होता है। जैसे बलात्कार पीड़िता के लिए बनाए कानूनी प्रावधान में तो महिला का एक बार होने के बाद यह कानून उससे बार–बार बलात्कार करता है और जिसे महिला की सुरक्षा के लिए नियुक्त किया गया हैं उसी से महिला असुरक्षित है। तो ऐसा कानून न होना ज्यादा बेहतर है। महिलाओं के लिए बने कानूनों ने कुछ राहत तो दी है थोड़ा डर पैदा किया हैं पुरूष दंभी समाज में जिससे थोड़ा ही सही पर परिवर्तन तो आया हैं और अब यह तकनीकी युग के बदौलत बढ़ रहा है एवं नारी अपनी उपस्थिति जानने लगी है और इसे सशक्त रूप से पेश भी कर रही है। इस कानून ने एक मंच दिया है कानून में थोड़े परिवर्तन और जागरूकता की आवश्यकता है जिससे आशातित परिणाम प्राप्त किये जा सकते है।

उद्देश्य –

1. महिला सुरक्षा से जुड़े कानून जानना।

2. महिला सशक्तिकरण मे कानून की भूमिका जानना।

उपकल्पना :–

कानूनी प्रावधानों के द्वारा महिला की स्थिति में सुधार आ रहा है जिससे वो सशक्त हो रही है।

पद्धति – पुस्तकालय, अवलोकन विधि का प्रयोग।

राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम के छह मूल उद्‌देश्यों में एक उद्‌देश्य महिलाओं का राजनैतिक, शैक्षणिक, आर्थिक और कानून दृष्टि से सशक्त बनाना रखा है। सरकार महिला के पुनर्वास से लेकर आत्म निर्भर बनाने तक की पहल कर रही है इसके लिए सरकार, गैर सरकारी, स्वयं सेवी संस्था भी आगे आ रही है। अलग–अलग पड़े राज्यों (पूर्वोत्तर) में भी महिलाओं को प्रमुखतः दी गई है। स्वावलम्बन, स्वास्थ्य, निपसिड़, सेप, सशक्ति जैसी सरकारी व गैर सरकारी तन्त्रों के माध्यम से सरकार पूर्वोत्तर को पिंजड़े से बाहर निकालना चाहती है। सरकार ने महिलाओं की सुरक्षा और विकास के लिए कई संस्थानों का गठन किया है जिसमें राष्ट्रीय जन सहयोग एवं बाल विकास संस्थान महिलाओं में सशक्तिकरण व संबंधित मामलों के समग्र क्षेत्रों में स्वैच्छिक कार्य, अनुसंधान प्रशिक्षण एवं प्रलेखीकरण में उन्नयन में संलग्न एक शीर्षस्थ संस्थान है यह महिला एवं बाल विकास विभाग के अन्तर्गत कार्य करता है।

महिला की स्थिति सुधार के लिए 1955 में हिन्दू विवाह अधिनियम, 1954 में विशेष विवाह अधिनियम, 1956 पुनर्विवाह अधिनियम, 1956 हिन्दू दत्रक ग्रहण एवं पोषण अधिनियम, 1956 हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1948 फैक्ट्री अधिनियम, 1970 पारिश्रमिक अधिनियम 1976 आर्थिक अधिकार में साथ सम्मान को सुरक्षा प्रदान की, 1961 दहेज निषेध एक्ट, 1986 अश्लील चित्रण निवारण एक्ट पारित किये गये।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 में महिलाओं को पुरूषों के समान दर्जा दिया। अनुच्छेद 15(1) में लिंग के आधार पर भेदभाव को समाप्त कर दिया गया। अनुच्छेद 15(2) में स्त्रियों को सार्वजनिक स्थानों के उपयोग से वंचित नहीं करने का प्रावधान है। अनुच्छेद 21 में सम्मानजनक जीवन जीने का अधिकार।

अनुच्छेद 45 में निर्देशित किया हैं कि 14 वर्ष तक के लड़कियों लड़कों को निःशुल्क शिक्षा का प्रबंध हो।

अनुच्छेद 16(2) के तहत नारी को सरकारी नौकरियों में बराबर का स्थान मिले।

अनुच्छेद 39(घ) में पुरूषों के समान वेतन दिया जाए।

अनुच्छेद 42 में काम ही मानवोचित दशाओं को सुनिश्चित करने हेतु प्रसूति सहायता के लिए कार्य करने के निर्देश है।

आहूजा (1995) के अनुसार सन् 1937 के भारत सरकार अधिनियम में शैक्षिक योग्यता के आधार पर स्त्री को मताधिकार प्रदान किया गया।

राजनैतिक क्षेत्र में महिलाओं को सशक्त बनाने के उद्‌देश्य से संविधान में अनुच्छेद 5 के अंतर्गत महिलाओं को पुरूषों के समान नागरिकता प्रदान की गई है।

अनुच्छेद 325 व 326 के बिना किसी लैगिंक भेदभाव के महिलाओं का नाम निर्वाचन नामावली में सम्मिलित करने व्यस्कता प्राप्ति के साथ उन्हें मतदान के रूप में पंजीकृत करना व मताधिकार देना।

पंचायतों में महिला को एक तिहाई व म.प्र. में 50% स्थान दिया।

महिलाओं के लिए सुरक्षात्मक प्रावधानों हेतु कुछ अधिनियम –

प्रसव पूर्व निदान तकनीकी अधिनियम 1994 – गर्भावस्था में बालिका भ्रुण की पहचान कराने पर रोक लगाना।

73वॉ, 79वॉ संविधान संशोधन – महिलाओं को त्रिस्तरीय पंचायतों में एक तिहाई आरक्षण प्रदान करना।

सती प्रथा निषेध अधिनियम 1987 – महिलाओं का उनके पति की मृत्यु के बाद जिन्दा जलाए जाने व सती होने पर रोक लगाना।

वैश्यावृत्ति निवारण संशोधन अधिनियम 1986 – महिलाओं के अश्लील प्रदर्शन पर रोक लगाना।

अन्तर्राज्यिक प्रवासी कर्मकार अधिनियम 1979 – विशेष नियोजनों में महिलाओं के लिए अलग शौचालय तथा स्नानागारों की व्यवस्था आवश्यक।

बाल विवाह निषेध अधिनियम 1976 – कम उम्र में बालिकाओं के बाल विवाह पर रोक लगाना।

समान पारिश्रमिक अधिनियम – 1976 – समान कार्य समान वेतन

दहेज निषेध अधिनियम 1961 – विवाह में दहेज लेन–देन पर रोक लगी।

घरेलु हिंसा से महिला संरक्षक अधिनियम 2005

भौतिक व्यापार निरोधक, संशोधन विधेयक 2006

कार्य शील पर यौन उत्पीड़न से महिलाओं का संरक्षण विधेयक 2007 हिन्दू उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम 2005–पिता संपत्ति में पुत्री को अधिकार।

आज जब अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष को बीते 33 वर्ष से भी अधिक हो चुके हैं इसके बावजूद समाज की इस दोहरी मानसिकता का बरकरार रहना हमारे राष्ट्र व समाज के लिए घातक है। सशक्तिकरण का एक महत्वपूर्ण माध्यम विधान है विधान दो तरह से महिलाओं को सशक्त बनाता है एक तो यह उनकी शास्त्रीय निर्योग्यताओं को समाप्त करता है और दूसरे जीवन में विविध आयामों पर उन्हें अधिक सम्पन्न बनाता है।

महिला सुरक्षा व सशक्तिकरण को मूर्तरूप देने हेतु जरूरी है कि महिलाओं के वर्तमान सामाजिक, शैक्षणिक, मनोवैज्ञानिक आदि पक्षों को दृष्टिगत रखते हुए उनकी समस्याओं कठिनाईयों और अपेक्षाओं का वास्तविकता के धरातल पर उतरकर निरीक्षण व नीति निर्धारण किया जाए। उन्हें उत्साहवर्धन पारिवारिक, सामाजिक, व प्रशासनिक वातावरण सुलभ कराया जाए तभी महिलाएं अपने अधिकार कानून, व महिला विकास के कार्यक्रमों का पूर्ण लाभ उठा पाएगी।

संदर्भ सूची –

व्होरा, आशारानी (1983). भारतीय नारी दशा और दिशा. नेशनल पब्लिकेशन. नई दिल्ली।

आलोक, चेतनादित्य (2009). समाज कल्याण पत्रिका. नई दिल्ली.

सिंह, रमा (1998). शिक्षित हिन्दू महिलाएं एवं धर्म. बी.आर. पब्लिशिंग दिल्ली.

सिंह, आर.जी. (1994). सामाजिक न्याय एवं दलित संघर्ष. राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी. जयपुर

वैदिक साहित्य में राजनीतिक व्यवस्था

डॉ. नलिनी जोशी
प्राध्यापक – संस्कृत
श्री अटल बिहारी वाजपेयी
शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय
इन्दौर (म.प्र.)

ऋग्वेदिक काल में प्रत्येक जन (जाति) का आधिपत्य राजा के हाथ में होता था। राजसत्ता का प्रादुर्भाव वेद की दृष्टि में युद्धकाल से संबंध रखता था। एतेरेय ब्राह्मण (1/14) की मान्यता के अनुसार देवों ने विचार किया था कि असुरों के हाथों हमारी पराजय का यही कारण है कि हम लोग राजा से विहीन हैं। अतएव उन लोगों ने एक वरिष्ठ तथा ओजस्वी इन्द्र को अपना राजा बनाया। इससे स्पष्ट है कि वैदिक काल में राजापद निर्वाचन का विषय था और उसकी उत्पत्ति युद्धकाल में हुई। समिति में एकत्र होने वाली प्रजा के द्वारा राजा चुना जाता था। उपस्थित प्रजा एकमत होकर राजा को उसके महनीय पद के लिए चुनती थी। यह विश्वास किया जाता था कि राजा कभी भ्रष्ट नहीं होगा। अथर्ववेद (7187–88) तथा ऋग्वेद (10/173) में पूरा सूक्त ही राजा के निर्वाचन के लिए प्रयुक्त हुआ है। इस निम्नांकित मंत्र में समिति के द्वारा राजपद के निर्माण की धारणा स्पष्टतः घोषित की गई है –

ध्रुवाऽच्युतः प्रमृणी हि शत्रू न छत्रुयतोऽधरान् पादयस्व।
सर्वा दिशः समनसः सध्रीचीर्क्षवाय ते समिति कल्पतामिह।।

अपने पद से च्युत होने पर राजा अपने देश से च्युत कर दिया जाता था। अपने द्वेषों को स्वीकार करने पर वह फिर से चुना जाता थ। इस पुनः स्थापना तथा प्रजा के द्वारा राजा के मनोनयन का उल्लेख अथर्ववेद के दो सूत्रों में विशदतया किया गया है –

त्वां विशो वृणतां राज्याय त्वामिमां प्रदिशः पन्च देवीः।
वर्ष्मन् राष्ट्रस्य ककुदि श्रयस्व ततो न उग्रो विभजा वसूनि।।

अथर्ववेद में ऐसे अवसर पर राजा के द्वारा कहे गये वाक्यों का निर्देश है। राजा अपनी प्रजा को अनुकूल सहायक बनने की प्रार्थना करता था। राजा अपने जीवन काल के लिए निर्वचित होता था। उसकी सहायता के निमित्त दो विशिष्ट जनसंघों का निर्देश ऋग्वेद में मिलता है, जिसमें से एक का नाम समिति तथा दूसरे का नाम था सभा। इन

सदस्यों का पृथक्–पृथक् कार्य क्या था? इसके विषय में विद्वानों में एकमत नहीं है परन्तु अधिकांश वेदज्ञों की समिति में यह सम्मति पूरे राष्ट्र की संस्था थी। जिसमें राष्ट्र की समस्त जनता एकत्र होकर राजा का निर्वाचन किया करती थी। समिति में राजा की उपस्थिति अनिवार्य थी। राजा का यह कर्तव्य था कि वह समिति में अवश्य आयें। ऋग्वेद में समिति में जाने वाले सच्चे राजा का निर्देश उपमानरूपेण किया गया है। छान्दाग्योपनिषद के अनुसार जब श्वेतकेतु आरूणेय गौतम पंचालों की समिति में गये थे तब उनके राजा प्राहवण जाबालि वहाँ उपस्थित थे। उन्होंने आरूणेय गौतम से पांच अध्यात्मविषयक प्रश्नों को पूछा। इस घटना का तात्पर्य यह है कि समिति जातीय राष्ट्रसभा ही न थी, प्रत्युत एक जातीय साहित्य सभा के भी समान थी।

समिति के समान तथा समकक्ष एक अन्य राजनैतिक संगठन था, जो सभा के नाम से विख्यात था। सभा और समिति दोनों ही प्रजापति की पत्नियाँ मानी गयी हैं।

''सभा च सा समितिश्चावतां प्रजापतेदुहितरौ संविदाने।''

सभा व समिति दोनों ही प्रजा के द्वारा चुनी गयी संस्थाएँ थी। अथर्ववेद के एक मंत्र में सभा का ''नरिष्टा'' के नामसे उल्लेख है। इस शब्द का तात्पर्य है कि सभा में अनेक लोग मिलकर जिस निर्णय पर पहुँचते थे वह निर्णय सबके लिए अनुल्लंघनीय होता था। सभा में सभासदों के बीच विशेष किसी प्रश्न के ऊपर स्वतंत्रतापूर्वक विवाद होता था। निर्णीत सिद्धांत सबके लिए मान्य तथा अनिवार्य होता था। इसलिए शुक्ल यजुर्वेद की सांस्कृतिक प्रार्थना में युवा पुरूषों को सभा में योग्य होने की मनीषा प्रकट की गयी है। समिति तथा सभा के निर्वाचन में एक पार्थक्य दृष्टिगत होता है। समिति में जनसाधारण को स्थाने मिलता था परन्तु सभा में राष्ट्र के वृद्धों को ही स्थान मिलता था।

''न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धाः।''

सभा राष्ट्र के वृद्धों की एक विशिष्ट संस्था थी। इसका कार्य अपराधियों के अपराध का निर्णय करना तथा तदनुसार दण्डविधान करना होता था। पारस्कर गृहसूत्र में सभा के लिए ''नादि तथांत्विषि'' शब्दों का प्रयोग किया गया है। जिसका तात्पर्य धर्म निरूपण करने से नदनशील तथा दीपनशील (नदनशीला धर्म निरूपणात्) प्रतीत होता है। फलतः कहा जा सकता है कि सभा उच्च न्यायालय का कार्य सम्पादित करती थी। सभा की सहायता से राजा अपने कार्य सम्पन्न करता था।

राजा का कर्तव्य केवल शान्तिकाल में प्रजा का पालन ही नहीं होता था अपितु उसका एक प्रधान कार्य युद्ध के समय शत्रुओं के आक्रमणों से अपनी प्रजा की रक्षा करना भी था। राजा स्वयं युद्ध में जाता था तथा उसके साथ उसका सेनानी (सेनापति) और पुरोहित भी अवश्य जाते थे। पुरोहित का कार्य युद्ध स्थल में देवताओं की प्रार्थना कर राजा को विजय में सहायता करना होता था। दशराज युद्ध के अवसर पर सुदास के साथ उनके पुरोहित वसिष्ठ के रहने तथा विजय के निमित्त देव प्रार्थना करने का स्पष्ट निर्देश मिलता है। इस प्रसंग में पुरोहित की महत्ता पर ध्यान देना आवश्यक है। ब्राह्मण काल में राजा का पद प्रतिष्ठित हुआ तथा उसके अधिकारों में भी विशेष रूप से वृद्धि हुई। अभिशेक के निमित्त उपादेय यागों में राजसूय महत्वशाली हैं। राजा होने के लिए राजसूय यझ विधान नियत किया गया था। कालान्तर में अश्वमेघ यज्ञ का अनुष्ठान सम्राट तथा चक्रवर्ती पद के लिए आवश्यक बतलाया गया है। अधिकारी स्व रत्नी के नाम से प्रख्यात थे जिनके पास अभिषेक से पहले राजा को जाना आवश्यक था। इनके नाम ये हैं – सेनानी (सेना का अध्यक्ष), पुरोहित, अभिषेचनीय राजा, महिषी (राजा की पटरानी), सूत, ग्रामणी (ग्राम या पंचायत का अध्यक्ष), क्षतृ, संग्रहीता (कोषाध्यक्ष), भागदुह (प्रजाओं से कर वसूली करने वाले अधिकारी), अक्षानप (रूपये पैसे के हिसाब रखने वाले अधिकारी) गोविकर्ता (जंगल का अधिकारी)। वेद में उल्लिखित 'राजकृतिः' के ही ये ब्राह्मण युगीन प्रतिनिधि थे। राज्य दान नहीं है प्रत्युत एक संरक्ष्य वस्तु है जिसकी रक्षा करना राजा का उच्च्तम लक्ष्य है। राज्य भोग की वस्तु नहीं है। जिसे राजा अपनी स्वच्छंद अभिलाषाओं की पूर्ति के लिए उपयोग करें। प्रत्युत उसका प्रधान कर्तव्य कृषि के द्वारा राज्य में समृद्धि उत्पन्न करना है। राजा प्रजा का सेवक है। प्रजा के कल्याण के निमित्त वह एक प्रतिष्ठापित पदाधिकारी हैं। जब तक वह अपनी प्रतिज्ञा को निभाता है तब तक वह सिंहासन पर बैठने की योग्यता रखता है। अन्यथा वह हटाया जा सकता है। इस प्रकार अत्यंत प्राचीन काल से हिन्दू राजा स्वेच्छाचारी नरपति कभी नहीं होता था। सभा और समिति की सहायता से राष्ट्र का मंगल–साधन करना ही वैदिक राजा का चरम लक्ष्य था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. छान्दाग्योपनिषद – चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 1956
2. पाराशर गृहसूत्र – पाराशर ऋषि – गीता प्रेस गोरखपुर, 1956
3. ऐतरेय ब्राह्मण – चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।

4. वेदों में भारतीय संस्कृति – ठाकुर पण्डित आद्यादत्त, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।
5. आर्य संस्कृति के आधार ग्रंथ – डॉ. बलदेव उपाध्याय – नंदकिशोर प्रकाशन, वाराणसी, 1986

आवश्यकता है एक विश्व भाषा की

डॉ. एस. चक्रवर्ती
प्राध्यापक – राजनीति विज्ञान
श्री अटल बिहारी वाजपेयी
शास. कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय,
इन्दौर (म.प्र.)

मनुष्य के जीवन में भाषा की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका है। यह वह माध्यम है जिसके द्वारा मुनष्य अपने मन की भावनाओं को एक दूसरे को प्रकट करता है या यू कह लिजिये मनुष्य भाषा के माध्यम से एक दूसरे से जुड़ता हैं। चाहे वह गाँव के स्तर पर हो, राज्य के स्तर पर हो, राष्ट्र के स्तर पर हो या विश्व स्तर पर।

भारत एक विशाल देश है जिसमें विभिन्न धर्म, जाति, भाषा भाषी एवं सम्प्रदाय के लोगों का समावेश है। भारत की राष्ट्र भाषा हिन्दी है परन्तु चूँकि भारत में विभिन्न भाषा को बोलने वाले लोग रहते हैं। इस स्थिति में हिन्दी के प्रचार प्रसार में काफी कठिनाइयाँ आती रही है। लोग हिन्दी सीखने को राजी नही थे (हिन्दी भाषी राज्य को छोड़कर) तथा हिन्दी का काफी विरोध भी हुआ परन्तु भारत सरकार के अथक प्रयास के कारण आज हिन्दी भारत के कोने–कोने में लोग बोलने लगे हैं, पढ़ने लगे हैं, समझने लगे हैं तथा सीखने लगे हैं। कितना अच्छा लगता है जब पूरा राष्ट्र एक ही भाषा में बोले, एक ही भाषा को समझे वह है राष्ट्र भाषा उपरान्त इसके कि उस देश में विभिन्न मात्री भाषा को बोलने वाले लोग रहते हैं। पूरा राष्ट्र जब एक ही भाषा में बोलेगा तो यह स्वाभाविक है कि एक दूसरे के प्रति लगाव तथा प्रेम उत्पन्न होगा।

सन् 1603 में सम्राट जेम्स प्रथम के समय में ब्रिटिश साम्राज्य का अभ्युदय अमेरिका में हुआ, जबकि इसके पूर्व में सन् 1602 में ईस्ट इंडिया कम्पनी की स्थापना भारत में हो चुकी थी। इस प्रकार से धीरे–धीरे ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना प्राय–प्राय विश्व के सभी राष्ट्रों में होने लगा। इस संदर्भ में एक कहावत है कि ब्रिटिश साम्राज्य का सूर्य कभी अस्त नहीं होता। विभिन्न देश जो कि ब्रिटिश साम्राज्य के आधीन रहे वहाँ के लोगों ने अंग्रेजी, अंग्रेजों के दबाब में आकर सिखी, तो कुछ लोगों ने अंग्रेजी हुकुमत में अच्छे पद प्राप्त करने हेतु सिखी, तो कुछ लोगों ने अंग्रेजों का सानिध्य पाने के लिए सीखा इस तरह से अंग्रेजी का प्रचार–प्रसार इस कदर हुआ कि अंग्रेजी आज एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बन गई।

लोग अपनी भाषा को छोड़ अंग्रेजी भाषा की ओर ज्यादा आकर्षित हो रहे है। तथा विश्व के सभी देशों में अंग्रेजी पब्लीक स्कूलों का बौछार सा आ गया है जिससे सभी देशों के राष्ट्र भाषा के अस्तित्व को खतरा उत्पन्न हो गया है।

विभिन्न देशो में जहाँ – अंग्रेजों का साम्राज्य तथा आधिपत्य रहा वहाँ ऐसे भी बहुत लोग हैं जो अंग्रेजी को बोलना अपनी गुलामी समझते है भले ही मजबूरी वश अंग्रेजी बोलना पड़ जाए पर मन से इच्छा नहीं है, इनमें से कुछ लोग जब किसी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में भाषण देते हैं तो वह अंग्रेजी में न होकर अपनी राष्ट्र भाषा में होता है। इस संदर्भ में एक उदाहारण भारत के पूर्व प्रधानमंत्री मानवीय श्री अटल बिहारी जी वाजपेयी द्वारा सयुक्त राष्ट्र महासभा को तीन बार हिन्दी में सम्बोधित करना। सर्वप्रथम 1978 में संयुक्त राष्ट्र महासभा को हिन्दी में सम्बोधित किया था तब वह विदेश मंत्री की हैसियत से वहाँ गये थे। तीसरी बार 14 सितंबर 2002 को हिन्दी में संबोधित किया था। यह इस बात को दर्शाता है कि उनका ह्रदय राष्ट्र भाषा तथा राष्ट्र प्रेम से कितना ओतप्रोत है।

वर्तमान समय में विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय घटनाक्रम से परिस्थितियाँ इस प्रकार की निर्मित हो रही है कि अधिकांश राष्ट्र में अस्थिरता का वातावरण निर्मित्त हो रहा है जो मनुष्य को एक दूसरे से जोड़ने के बजाय अलग कर रहे हैं यह विश्व समुदाय के लिए एक चुनौती बन गया है। विभिन्न राष्ट्रों में आपसी मनमुटाव व्याप्त हो रहा है तथा राष्ट्रों के बीच हथियारों के होड़ लगे हुए हैं, जो कि एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या उत्पन्न किये हुए है। इन समस्याओं का निराकरण कुछ हद तक एक विश्व भाषा के निर्माण से किया जा सकता है।

एक ऐसी विश्व भाषा हो जो किसी देश विशेष की न होकर संपूर्ण विश्व समुदाय की हो। जिसे दुनिया के सभी देश के लोग कहें, चाहे यह देश कितना ही छोटा हो, या कितना ही बड़ा हो। इस विश्व भाषा का निर्माण विश्व के सभी छोटे–बड़े देशों में राष्ट्र भाषा को सम्मिलित कर किया जाना चाहिए ताकि इस विश्व भाषा के निर्माण में दुनिया के सभी देशों की हिस्सेदारी हो। इस भाषा को सभी राष्ट्रों के पाठ्यक्रम में अनिवार्य रुप से सम्मिलित किया जाना चाहिए।

तकि इसके प्रचार–प्रसार में अधिक समय न लगे तथा विश्व के सभी मनुष्य इस विश्व भाषा को सीखें, बोलें तथा समझें। इस तरह विश्व में एक नया भाई चारा उत्पन्न

होगा, लोग विश्व स्तर पर एक दूसरे को समझेंगे तथा जुड़ेंगे। आप दुनिया के किसी भी कोने में जाइये आपको भाषाई परेशानी नहीं होगी।

इस संबंध में एक उदाहरण यूरोपीयन मुद्रा का एकीकरण है।

यह एक प्रयास मात्र है।

वर्तमान समय जागतिकीकरण (Globalization) का समय है जिसको सफल बनाने में यह नयी विश्व भाषा बहुत ही उपयोगी साबित होगी तथा विश्व शांति के प्रयास में यह भाषा रामबाण साबित होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

01. प्रो. त्रिभुवननाथ शुक्ल – हिन्दी भाषा और विज्ञान बोध संस्करण द्वितीय (आवृत्ति) 2010

02. डॉ. सत्येन्द्र शर्मा – हिन्दी भाषा संरचना।

03. प्रो. धनंजय वर्मा – हिन्दी भाषा एवं समसामयिकी।

04. प्रो. शुभा तिवारी – नैतिक मूल्य और भाषा द्वितीय (संशोधित) 2015, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग मानव संसाधन विकास मंत्रालय (उच्चतर शिक्षा विभाग) भारत सरकार, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल

05. प्रो. भोलानाथ तिवारी – भाषा विज्ञान।

06. डॉ. कैलाशचंद्र भाटिया – अनुवाद, कला, सिद्धांत और प्रयोग, भारतीय अनुवाद परिषद, नई दिल्ली द्वारा प्रथम नातालि पुरस्कार से सम्मानित – प्रथम संस्करण : 1985, द्वितीय संस्करण : 1991, तृतीय संस्करण : 2000, चतुर्थ संस्करण : 2004 (संशोधित संस्करण)

07. डॉ. आनंद मोहन उपाध्याय – मध्ययुगीन रहस्यवादी प्रवृत्तियों के मूल स्त्रोत, प्रथम संस्करण, 2009

08. डॉ. बाबूराज सक्सेना – सामान्य भाषा विज्ञान।

09. डॉ. राजमणि शर्मा – आधुनिक भाषा विज्ञान।

English Language Learning – An Experimental Approach

Dr. S. S. Thakur
Dept. of English
SABV Govt. Arts and Commerce College,
INDORE (MP), **INDIA**

ABSTRACT

A radical and revolutionary change in the present era, especially in the field of Information Technology, has redefined the English Language as “Global”, compelling all the eminent linguists to predefine the strategies. To function effectively in this global network where increasingly large quantity of information is processed, professionals need to develop strong English language, this has become instrumental in all the disciplines. The multinational organizations seek only effective, intelligible and global culture based communication strategies for successful business. Hence an attempt is made in this paper to address the issues related to self evaluation, peer evaluation, formative evaluation, teaching methodology and material development for the complete exploitation of learners’ strengths.

The main purpose of evaluation is meticulously discussed, and the potential of evaluation, as an instrument of desirable change, is highlighted. The findings in this paper will stress upon the systematic, planned, formal, informal, conscious, unconscious and principled way of evaluation that consider all the aspects of teaching – learning and not just students’ performance in the end term exam. The paper will also suggest some measures for creating a more conducive teaching/learning environment by developing congruence between what is intended and what is achieved. Further the study also emphasizes on formative framework of evaluation i.e. evaluation during the process of learning because the summative evaluation will inform us only about the product, not the process of learning.

Key words: Information Technology, Global Network, Global Culture, Communication Strategies, Formative Evaluation, Summative Evaluation, Self-Evaluation and Peer-evaluation, Instant Feedback.

The pace of change is accelerating all over the globe and with the development of human civilization; language developed as an important feature of not art and literature alone but became the vital component of different theories in the field of Science and Technology. We cannot let ourselves be left behind in this race. However the issues which are of

paramount concern today are the quality and the relevance of education and formative evaluation stands fundamental to the development of English language. There is no denying of the fact that appreciable changes in scientific and technical manpower have provided India an adequate substratum to step into the field of globalization. But to prepare the youth to enter into the global world as proficient and competent professionals we need to go for considerable rethinking in respect of the education system and its relevance to the changing socio environment. For enhancing the language potential of the learners, evaluation should be an instrumentality not only for global industrial communion but for developing communicative and interpersonal skills that are responsible for any nation's progress.

It is not adequate to modify the courses and the course content but also provide proper training programmes to enhance the teaching learning techniques especially for those underprivileged. Communication field is expanding at an exponential rate, thus providing ample of opportunities to the language students in the field of journalism, publishing, print and media. The possibilities are endless, if adequate training is provided by the institutions. It is interesting to note that some eminent organizations which value the students' performance on the basis of thorough evaluation provide an opportunity to the students to work during off days or vacations on a stipend. But this facility simply doesn't workout unless the teachers seriously supervise them or provide proper instructions and evaluation based on a sequential plan. This kind of evaluation and training will bring the teachers close to the taught, thus improving the quality of their teaching. Fortunately the models of such type already exist in our educational system in some of the universities and institutions in advanced states.

2.1 Evaluation calls for refinement and modification

It is unfortunate that much of our learner's energy and resources have been diverted to the summative evaluation alone. The question that is hurled is the right method of evaluation that can integrate and amalgamate the present system of education with the world education. The obvious consequence of inappropriate methods of evaluation has been a general decline in the academic standards, serious reflection on the quality of teaching and learning and the breakdown of the teacher-taught relationship. We are also undoubtedly familiar with external evaluation system, where external evaluators evaluate the students' performance at the end of the session, in most of the universities and educational institutions in India. Beyond doubt such type of evaluation is done impartially and credibly to a much greater extent but the format of evaluation is usually summative and done mainly for the certification purpose which in no way helps the students to develop language skills. Complete potentials of the

students cannot be exploited in a limited span of time. The language teacher's role in this framework is merely of an invigilator and the students are no more than candidates for an external evaluator. Thus the evaluation system calls for refinement and modification from time to time. Today, no doubt, there are several outstanding educational centers of teaching and research like IITs, IIMs, deemed universities etc. who are truly making their contributions for the overall development of the students who have notched special places across the globe. The evaluation system in most of the institutions does not meet with required standards. The question is how this large bulk of students can be facilitated to achieve knowledge if not optimum but at least a minimum level of competencies for stepping into the global employment or self employment which is equally challenging and demands skills.

The paper attempts to highlight the importance of various types of evaluations, for understanding the intricacies of the communicative challenges at workplaces and the need to introduce and strengthen formative evaluation, while teaching communication courses to engineering students. Unquestionably all definitions of communication cater to only particular theory that "communication means complete understanding." Understanding is often affected by a multiple barriers as communication is a subtle, tangled, complex and fluctuating process influenced by several external and internal factors. It is very essential to practice and adjust to all types of interfering and inquisitive factors that affect the efficiency of transmission.

2.2 Fundamental distinction between Teaching and Learning

The paper intends to discover certain methods of teaching English for complete exploitation of learners' strength. It also tells us why certain teaching practices are better than others and why certain methods are more reflective of specific principles of teaching and learning. It is appropriate at this stage to draw the attention to a fundamental distinction between teaching and learning a language. Teaching involves the curriculum that is organized for instructional purposes and predetermined learning outcomes. But learning in broader sense takes place even without systematic instructional planning. Most of the times it is forgotten that this kind of informal learning could be more effective than learning through planned instruction. This is often overlooked by the teacher community. Then question arises that why do we concentrate on teaching and learning through teaching? Perhaps the answer is in case of the second language or a foreign language; systematic exposure can be created only in the classroom to a majority of learners.

1. **New Dimensions in the Formative Mode of Evaluation**

Learning language involves interaction of existing knowledge with incoming new knowledge. It should not be forgotten that each learner brings different skills into the classroom based on his experience and exposure. Hence evaluation becomes a complex process for the teachers. Another important problem that a language teacher encounters is that each student in a class comes with a different personal agenda (list of items) and it is due to this problem that most students don’t pay required attention in a language class and without a readiness for learning, there will not be much learning. For a teacher, to manage a class of 60, the presence of different and multiple personal agendas with vernacular backgrounds is a challenge to put it in positive terms. But however difficult or impenetrable the problem might be, it needs to be encountered with an extent to which we are able to accommodate multiple personal agendas. This is the only way that reflects the teaching abilities of a teacher.

3.1 Priorities in Teaching

For engineering students, to much extent, language is not taught or learnt for grammar but for communication. Hence English teachers in engineering colleges need to establish and arrange priorities in teaching. It must be remembered that English is not taught to simply qualify the examination based on content. It is not a portion to be covered but skills to be mastered. This doesn’t mean that summative evaluation of the students i.e. the overall end product of a programme which involves tests, assessments and examinations are meaningless for secretly everyone believes in it as students have to cope with examinations in a competitive world. If you feel that summative evaluation is alone sufficient, you are only responding to the short term and immediate needs of the learners and the institution that employs you. A focus on this objective might satisfy the administrative requirements but in long run you are not helping them become autonomous learners, which should actually be the goal of any educational enterprise. English language in most of the states is taught like a subject without providing too many opportunities to the learner to improve his/her language. For achieving the desired goals the teacher has to generate learning opportunities to the students by minimizing the teacher talk and maximizing the learner’s participation. It should be a learner centered class not a teacher centered one. Also it must be remembered that if a teacher enhances the language skills of the students, they will get through the examination automatically. Hence both formal and informal teaching/learning objectives are achieved. All this is not easy but this is the teacher’s task. Most teachers ponder over the consequences of this change but perhaps the consequences are not very inviting and substantial initially. A

good number of teachers will hang on to their favorite techniques and the success stories (99%, 100% result) that cling to their performances and glory. They tend to stick and focus entirely on summative evaluation system i.e. final result thus depriving the students from becoming independent and autonomous.

In a language class both the situations are considered to be extreme i.e. a teacher following a pre-determined plan at the cost of learners' interest and needs, or a teacher abdicating totally from the classroom in order to make the class a learner centered. Sometimes a class focuses on teacher activity, where the teacher does a splendid job and covers the syllabus timely, may still have to face negative feedback. All this indicate the failure of communicative approach in modern times. Considering all these parameters there is an urgent need to understand the difference between teaching any subject and teaching a language. Thus teaching English language in a formal method is often frustrating for the engineering students is evident from the above discussion.

Factors that affect language classroom teaching

- Examination oriented syllabus
- Views of peer teachers, parents and society
- Language teacher's attitude, qualification, language competence etc.
- Teaching strategies / techniques
- Classroom management
- Co-operation and support of the Head of the Institution and other authorities

Unlike the traditional classroom set ups the modern language teacher has to identify the learners' strengths and weaknesses and organize the class into homogeneous or heterogeneous groups so that learners are fully motivated to draw the benefits from such class organizations. This type of classroom setups can lead to autonomous learning putting to maximum language use.

3.2 Evaluation, an instrument of change

The paper intends to highlight the evaluation as an instrument of change. This is something that a teacher does formally or informally but too often these have a harmful effect and one's future is affected by poor evaluation. It must be remembered that evaluation is not a term restricted to the testing of the student's final output at the end of the session but involves more than just testing student's outcome. It is very important on how a teacher reacts to an error committed by a very bright student or to a brilliant answer by a weak student. Sometimes these simple issues are overlooked perhaps because things happen in

such a quick succession that they can't keep track of it all in a class of 50 minutes. All this only indicates that teaching – learning process is not a neat and predetermined set of intensions and outcomes. Testing and assessment are the synonyms often used by most teachers but they determine the learner's ability to produce things on paper as he does in other subjects on the basis of roting, rigorous practice or memory. Such type of evaluation has limited perspective with a focus on the final output. Hence evaluation should focus on the means and should be solely intended to serve the learning process. As discussed in the earlier version of this paper, that communication has undergone several changes with changes accelerating in other fields, these changes have also influenced the concepts and methods of evaluation in the classroom. Every minute factor that affects learning should be meticulously evaluated in a principled and systematic way. Simply knowing the student's final output through summative tests does not help understand what worked well and what did not. True evaluation must focus on both the means and the product of the teaching –learning process. Thus there is an urgent need to introduce formative evaluation i.e. evaluation that focuses on monitoring the on-going developments of a course. This type of evaluation provides instant feedback about the various proceedings of the course. It also helps in exploring the hidden potentials of the learners and provides an access for new knowledge. Most successful teachers make evaluation every few minutes and without this kind of on-going evaluation and correction process, one cannot function effectively.

Another benefit of formative evaluation is to bring about a change. The genuine feedback provided during the evaluation can bring in changes to the existing practice. Thus evaluation is innovative provided the feedback is put to proper use. Most teachers despite of knowing and detecting the setbacks of the system cannot bring in changes. The problem here is due to sheer negligence by the responsible agencies who may not be interested in going for changes due to administrative, financial or time constraints. Sometimes the suggested changes might call for investments. Thus sufficing the matter evaluation is a very powerful tool that can bring in favorable changes in the present system of education and the job of those involved in evaluation is a very responsible and crucial one.

It is an interesting fact to note that the demarcation between teaching and evaluation is a thin one, hence it should not be treated as another component to be accommodated separately in the teaching schedule nor it should be considered as another role of a teacher. Secondly formative mode of evaluation is not just an inherent quality of any and every teacher; it needs some orientation or training to fulfill their job efficiently and to the satisfaction of the students.

Involving learners in the process of evaluation is a way of enabling them to not only perform well but understand the nuances of evaluation system. By their participation in the teaching-learning process, learners will learn to internalize the merits of the system and will learn to interpret the feedback in a way that is useful to them. Through this method they will be better performers and evaluators of their own performance instead of having it imposed on them by their teachers or external examiners. The feedback both teacher and the taught obtain in such a multi-way system would be useful and handy to the learners. Thus the important issue that emerges out of this discussion is that evaluation should not be carried out in a static way with the pre determined peripheral planning, but in negotiation with the participants' interests. All this would once again involve scrupulous practice or orientation to be able to do the evaluation in a systematic way.

Communicative approaches strongly advocate self-evaluation and peer-evaluation. Such type of collaborative learning helps in exploiting learner's potentials for mutual benefits. This type of evaluation also eases the tensed classroom surroundings and creates an amicable teaching learning environment which otherwise remains dull and monotonous in most of the language teaching classes. Evaluation system should in no case treat learners as mere objects otherwise the purpose of teaching and learning will be defeated. Thus the paper intends to add new dimensions to language teaching, learning and evaluation process in order to discover the veiled potentials of the learners that are often masked due to unfavorable and unmatched classroom conditions. The paper emphasizes on the philosophy of education, that it isn't fair to discard ideas without a fair trial. Thus, if taken seriously by keeping an open mind, the task of implementing the above discussed issues isn't difficult or impractical at all. The role of a teacher or a facilitator thus stands vital and an informed teacher can influence teaching practices of a nation as well.

Works Cited

Aderson J., *Giving and Receiving Feedback, Managers and their Careers* 1972

Berelson. B and Steiner G, *Human Behaviour*

Bovee, Thill, Schatzman, *Business Communication Today*, Seventh Edition, Pearson Education, Inc. and Dorling Kindersley Publishing Inc., New Delhi, 2006.

Charles M, Empathetic *Listening, A small Group Communication: A Reader* 1974.

Cook Glenn J, *The Art of Making People Listen to You*, Vikas Publishing House Pvt. Ltd., New Delhi, 1976.

Gibson, Mitchell, *Introduction to Counseling and Guidance*, Sixth Edition, Pearson Prentice Hall: New Delhi, 2006.

Irwin Richard D, *Information Processing System for Management*, Ontaro, 1981

N.K. Uberoi, *Professional competency in Higher Education*, Centre for Professional Development in Higher Education, New Delhi, 1995.

Patterson M, *Spatial Factors in the Social Interaction, Human Factors* 2.3. 1968.

Raman, Sharma, Mishra (eds.), *Communicating at Work, Shifting paradigms and Emerging Trends*, Jain Brothers: New Delhi, 2005.

Robert Goyer, Charles Redding and James Rickey, *Interviewing Principles and Techniques*, Dubugue Lowa, 1986.

Stonier T, *The Wealth of Information*, London 1983

Thibaut John W. Kelley Harold H, *The Social Psychology of Groups* Wiley, New York,1959.

Contemporary Poetry from Northeast India: Paradise of Ecology A Bird's Eyeview

Dr. Pankaja Acharya
Asst.Professor Dept. of English
SABV Govt. Arts and Commerce College,
INDORE (MP), INDIA

The Northeast India comprising of eight provinces of Arunachal Pradesh, Assam, Manipur, Meghalaya, Mizoram, Nagaland, Sikkim and Tripura is an ecological paradise and anthropological museum. Known as Assam the provinces excluding Sikkim are popularly called seven sisters. The first Indian writing in English from this region to introduce the region to the outside world is Hem Barua's *The Red River and the Blue Hill (1954).* The writing in English from this part of the country has a distinct trend, a set of distinct concepts and techniques. Though writing in English has been produced slowly, the tempo of writing has gathered momentum after 1990s. Established writers like Bhupati Das, Temsula Ao, Robin S. Ngangom, Kynpham Singh Nongkynrih, Lakshahira Das, Dayananda Pathak, Mamang Dai, R.K. Madhubir, Mitra Phukan, Easterine Iralu, Indira Goswami, Birendra Kumar Bhattacharya, Ratan Thiyam, Arun Sarma, Nilakshi Borgohain, Rajendra Bhandari and Bhaskar Roy Barman have been assessed by various contributors. The paper is supposed to pave the ground for further critical harvest in this field. The Northeast India has a very talented band of writers. Some writers of others provinces domiciled in Northeastern states have also produced a good quantum of writing in English.

Assam is the most ancient and richest among these states in written literary heritage and also in oral traditions. It has produced literature in Sanskrit in the Eleventh century (especially Kalikapurana and Yogini Tantram) and has continued with glaring instances of literary excellence difficult to find in its counterparts. In fact the first foray of Assamese poetry into English was through the publication of **Dr. Hem Bama's** Modern Assamese Poetryin 1960 'which enshrines the English translations of the poems of twenty six Assamese poets out of which nine poets translated their own poetry into English. This is also chronicled in K.R.S. Iyenger's Indian Writing in English-the source book of Indian English literature criticism (Iyenger 642). He terms them as "The 'New' Poets" (Iyenger 641). From the seventies to the nineties, the poets who came up with commanding voices were Maheswar Neog, Amaresh Datta, Dayananda Pathak, Lakshahira Das, Umakanta Sharma and Bhupati Das. The pioneering work on the field, Nigamananda Das's Mosaic of Redemption offers precise and contextual critiques of their English poems.

Bhupati Das's contribution to Indian English writing is highly praiseworthy and it is hoped that he will publish more of his poems.

The veteran octogenarian from Assam, Amarestha Atta has been a brilliant teacher and eloquent analyzer of English Literafirefid his poems bear testimony to his erudition and imagination. The reinterpretation of the Biblical myth of Origin in an ironical tone brings him close to the spirit of a modernist:

In the beginning was the dream
He said: let there be light
And pressed the button
And light was there
In his walled globe.
And water too
For his lackey brought it cool from the bar.

Datta's poems are romantic lyrics of introspection, but often woven with contemporary issues and ethics. His poems about nature and earth evokes the age old relationship between God and creation:

You have given me
The freedom
To traverse my sky
To gain my nest's paradise
Or lose it.

Nature and its representation is also the major concern of Bhupati Das's poems who has shown adequate skill and imagination to be labeled as the finest poet from Assam writing in English. His ecological concerns, however, do not overshadow the romantic mystic in him:

The lonely road
I walk it
alone
counting the dead leaves
falling
vibrations
of my thoughts
ripple through them
and make the dead leaves
alive.

Are you my love
counting your steps
on some other path
some other time
thinking
about
you and me

Two significant poetic voices to come out of the dense forests of Arunachal Pradesh are **Mamang Dai** and **Yumlam Tana**. Quite naturally, the Arunachalian topography and geography are major issues in their creation. Lament, implicit and explicit, for past ways of life is also a recurrent theme, expecially in the poems of Dai.

Legends, myths, rites, rituals and customs of the Nyishi tribe find reflection in the poems of **Yumlam Tana** in sync with postcolonial self assertion. He is vocal about the problematic of English as a creative medium, which reminds one of Raja Rao, Kamala Das, Chinua Achebe or Ngugi wa Thiong'o: "I write in English / which is not my language / You see I am a Nyshi/ A tribal claiming to be a man."

Robin S. Ngangom from Manipur has been an able maker of verse d can be said to be the representative poetic voice of Manipur with little disagreement. Published by the Writer's Workshop in 1988, his first volume of poetry, Words and Silence, engages with multifarious themes of World War II, tribal life, Manipuri legends, love and sensuality etc. Bitter realities of contemporary Manipur, not withstanding its legendary past, makes Robin deeply pessimistic:

Our necks and hands shake with perverse lust
We respect with avarice only the richest new
And a pot-belly and a manipulating wife
Are our status symbols

R.K. Madhubir is also from Manipur and is chiefly concerned with initiating witty dialogues between mainstream Indian and Christian myths and legends, re-assessing their validity for contemporary life. For instance, he uses the Ravan-Sita motif in his attempt to protest the chase and haunting of innocent wild animals. Myths have not only related the ancient epics, modern legendary figures are no less mythical in their complete ideological failure or incompatibility with changing times.

Meghalaya possesses incredible natural beauty and is praised as the Scotland of East. This beautiful province has produced a band of poets who write regularly in English.

Among them, **Esther Syiem** and **Indari Syiem Warjri** are two renowned women poets who have exposed their ecological aesthetics. Myth and tribal folklore are among the core subject matters of these two poets.

Esther Syiem is continuously reminded of the khasi myths and legends. As a poet she realizes that in every myth is embedded the wisdom of her race and that every legend speaks in symbolic overtones. In her poetic etches Esther Syiem reflects sorrowful fates of the innocent who have fallen prey of the destiny.

Indari Syiem Warjri (1967-) explores the nostalgic royal traditions and rich culture of Meghalaya in her poems. Nature's mysterious and mysterious folk tales enrich her composition. The contribution of myth and legend can't be underestimated as they enrich the folk literature and tradition of Meghalaya. Meghalaya, which literally means 'the abode of clouds' has a strong presence of Christian-European culture in its socio-religious world, and English for all purposes is often almost the mother tongue or 'L_1'. It is more so in the capital Shillong and there is quite a few Shillong based poets who address their worldviews in English. The Manipuri poet **Robin Ngangom** is also seen as part of this Shillong group due to his enthusiasm about and representations of the folk life and culture of Meghalaya. 'Contemporary socio-cultural concerns of Meghalaya, the cultural past and environmental changes are main subjects of his poetry.'

A strong female and feminist voice is discernible in the upcoming poet **Anjum Hasan**, presently residing at Bangalore. But the autobiographical quasi-mystic note is also present in her, as in many of her peers:

Life is a woman
Night, a stolen sobbing chamber
Of unnamed girls
I see centuries of slavery
In the shadows
Within one dark room

Celebration of nature and liberal feminist ideology in sync with humanism is the h mark of the major poetic voice from **Nagaland-Temsula Ao**.

A recipient of Padmashri in 2007 for Literature and Education, Temsula Ao (b.1945) holds a PhD in English Literature and is a Professor of English at North-Eastern Hill University, Shillong. She was Director of North East Zone Cultural Centre, Dimapur (1992-97), and was a Fulbright Scholar to the University of Minnesota (1985-86).

Temsula’s reflections on women issues draw attention to what Irigary would opine:'…. we must not once more kill the mother who was sacrificed to the origins of our culture. We must give her new life, new life to that mother, to our mother within us and between us. We must refuse to let her desire be annihilated by the law of the father. We must give her right to pleasure, to jouissance, to passion, restore her right to speech, and sometimes to cries and anger’ (Irigary 2003:421).

In "Woman" the poet examines a woman’s role in life. She had been fashioned by nature to nurture life disregarding her own needs. But she has been a victim of social customs and roles assigned to her. She has become a prey of male domination despite protests.

Man beguiled her
Into submission
Thus establishing
Timeless dominion (811322).

Being born in Assam and serving in Meghalaya as a University teacher in English, she has definitely more than one cultural tradition at her back. Her earliest collection of poetry Songs That Tell (1988) is primarily concerned with identity, existence, subjectivity and a search for the ’roots’-a11 common features of Indian English literature. What marks her out however is her distinctly individual response to the issues and in her search for the mechanics / origin of her writing, she approximates a Wordsworthian mysticism:

These are songs which
Sometimes come
On lonely nights
And make bright
And fading lights
Songs
Which sometimes
Imitate
Greater bards to indicate
Similar response
To corresponding chords

Ecstasy, agony, memory, fantasy-these perennial human emotions and realities are always addressed to in Temsula Ao's poetry. She has also been called a nature poet par excellence whose poetic vision is often haunted by **‘the cultural and physical ecology of Nagaland’.**

Like an eco-feminist, Temsula exposes the ever increasing deforestation and destruction of nature by man in “lament for Earth.” The poet is Keatsian in her description of the ’verdant, virgin’ forest that was the ‘majestic splendour’ of the earth made ‘Silent / Stunned and stamped’ in course of time. She continues to describe in eco-feminist terms and grieves for the rape of mother earth. She asserts like some feminists ‘that women are closer to nature, to the environmental, to a matriarchal principle at once biological and ecological’

Significant poetic creations are yet to emerge from **Sikkim** and **Tripura - Rajendra Bhandari** and **Bhaskar Roy Barman** being, respectively, the lone voices of some prominence from these states. The cursory glance I wanted to give you must end here to give way to papers with deeper and specific engagements with poets and poems from tile North East.

Mamang Dai (1957-), a famous Indian English poet of **Arunachal Pradesh**, (born in Pasighat, East Siang District), left the Indian Civil Service for maintaining a career in journalism and uplifting the social ammo-cultural standards of her people. A poet from the Adi community, she founded the Arunachal Heritage Society in 1992 and has been its president since then.

In her poetry, life in Arunachal Pradesh, peoples’ faiths and her own, agriculture, mountains, streams, rivers and stones, myths, and nature’s magic, reveal the myriad world of Arunachal’s ecology and mysterious and glorious heritage. She reflects the Arunachalee culture and traditions and recent or modern transitions in the mosaic of living conditions. A keen explorer of heritage, she seems to be a sentinel of traditional tribal values. **Environment ecology, profound serenity in nature, and an innocent voice about the things in the surroundings have been her important concerns.** She voices her emotions and feelings through the images and metaphors chosen mostly from nature. Her search for identity has exposed her to be a nature-loving-humanist. She reveals her beliefs in tribal pantheon of Gods and mystery of environing ecology:

Yes, I believe in gods,
in the forest faith
of good and evil,
spirits of the river
and the dream world
of the dawn.

Lone poet from Sikkim who writes in English and Nepali and translates from Nepali, **Rajendra Bhandari (1954-), makes landscape** his haven for poetry. Stars, streams, flowers,

trees and creatures of the surroundings are the means of explorations of his emotions and feelings:

The naked sky is the witness.
Sultry sun is the witness.
These words,
I haven't coughed out
from nowhere.
……
I haven't materialised these lines
by the sleight of my hand.
Reclaiming them from sliding land
I've lifted them from
the forests, the lowlands,
the grain fields, the cliffs.

The poet reacts to loneliness during the rains and hailstorm, when the nature turns violent isolating the man in shivering and solitude:

Hostile is this loneliness to me.
The past and present have grabbed me.
History has assaulted me brutally, my dear!
Wounded all through the body, I'm here.

The tribal ethos of Tripura are best exposed in the poetry of **Bhaskar Roy Barman** (1950-), where he has been reflecting the cultish designs of Tripura. Recurrence of river, stream, mountain, tree, temple, priest, crow, stone and other forms of ecology is found in many of his poems. Through the image of river, the poet symbolically exposes the hard life of the tribes and their happy singing life in the midst of all hardships:

The river knows not how
it has come to be called a river,
Know though it does where it was born,
Since its birth on the mountain top
It has been cascading down the mountain
Through groups of stones
Spread out down the path
While treading its way it sings forth
into existence

The world is crowded and shrouded by mysteries. The bards of Northeast have culled these mysteries from various sources and spun several webs. In these webs of mystery lies the identity of North-east's worlds of esoteric and exoteric mysticism. Roy Barman is flowing in his themes and techniques. His poetry is rich in imagery and a vision of despair pervades it. His legitimate voice is yet to be clear. In his future poetry, his voice is expected to be more profound, visionary, and refined. The bards of North-east are expected to explore the myths of the region more profoundly in future.

Work Cited :

1. Ao Temsula. *Songs That Tell.* Calcutta: Writers Workshop, 1998.
2. Chandra, N.D.R. and Nigamananda Das. *Ecology, Myth and Mystery: Contemporary Poetry in English from Northeast India.* New Delhi: Sarup and Sons, 2007.
3. Das Nigamananda. *Mosaic of Redemption: Poetry in English from the North East.* Cuttack: M.G. Publications, 2004.
4. Iyenger, K.R.S. *Indian Writing in English.* 1962. New Delhi: Sterling Publishers, 2001.
5. Das Nigamananda. 2004. "The Poets of Nagaland Writing in English." *Mosaic of Redemption: Essays on Poetry in English from North East.* Cuttack: M.G. Publications.
6. 2007. "Matrix of Ecology" *Ecology, Myth and Mystery: Contemporary Poetry in English from Northeast India.* Eds. N.D.R. Chandra and Nigamananda Das. New Delhi: Sarup and Sons.

Potentials of Employment and Economy through Tourism: A Study of Historical Place Mandu (M.P.)

Dr. Rajendra Singh Waghela
Professor of Commerce,
Shri Atal Bihari Vajpayee,
Govt Arts and Commerce
College (Bhanwar Kunva), Indore, (mp)

Abstract

India is a land of Varied cultures, heritage, monument, mountains, river belts pilgrimage centers, historical places, religious temples, world class film locations such green valleys, zoo, Parks, dry desert, the sparkling ocean, hospitable people and variety of food habits. People come from different regions to a new beautiful vision of glory of nature. There are many places which attract the interest of the tourists in India. The historical places Mandu is one of them. Mandu is famous for tourist place in Madhya Pradesh. There are a number of tourist attractions in Mandu like – Mandu Fort, Darwazas, Hindola Mahal, Baz-Bahadur's Place, Rewa Kund, Ashrafi Mahal, Nahar Jharokha, Rani Rupmati's Fort, Rupmati Pavilion, etc. which have unique historical and architectural significance. Tourism is one of the important pillars in the economy and it is an important source of income for the nation. Tourism is smokeless income generating and employment oriented industry. Tourism in its broadest generic sense can do more to develop understanding among the people, provide jobs, create tourism exchange and raise living standards than any other economic force. The focus of this paper is on the economic benefits accruing by the way of tourist's arrivals to Mandu. The objective of the study is to analyze the different local occupation of employees with the help of questionnaires. This study will evaluate the reasons of lacking in economic benefits from business and service activities and also analyze the problems faced by tourists.

Keywords: Tourism, Economy, Employment, Historical Places, Service activities.

India is a beautiful country rich in diversity. Many tourists from different parts of the country and abroad come to explore the natural and heritage beauty of the nation. Tourism has been the single economic sector that has gained considerable economic attention. People all over the globe are more anxious, more enthusiastic and more willing to spend on travelling. Thus, the global tourism industry has gathered extravagant economic contributions evident in many countries in the world today[1]. Currently, tourism is one of the world's biggest and fastest growing industry. Tourism in the present period is one of the most dynamic and developing sectors of the world's economy. Interest in culture, heritage, and history is resulting in an

increasing number of visitors to historic sites and many regions and towns are exploiting such interest for the benefit of tourism and economic regeneration. Based on activities that are directly or indirectly involved in providing services to this broad definition, tourism industry can be called all Socio-economic tourism with more than 185 supply-side economic activities. These significant connections to tourism are listed under the world tourism include, among other, the services of the following sectors: transportation, hotels and lodging, food and beverage, cultural and entertainment, banking and finance, and promotion and publicity services.

Mandu has a beautiful fort carved out in stone in Afghan architecture. This was a pleasure resort for the Mughals with its beautiful palaces, lakes and natural setting. It is situated at an altitude of 2000ft along the Vindhayas. Even today it is relatively untouched and an excellent gateway for tourists. A broader focus to tourism related economic and employment generation and poverty reduction is important because it emphasizes the multi-faceted nature of economic and employment generation, poverty and the relevance of looking at the broad range of impacts which tourism may have on livelihoods which are discussed later in the paper.

Contributions to the Society by Tourism Industry

- It's an Employment generation industry
- It's an Economy generation industry
- It's a community development industry
- It preserves the Natural environment
- It restores the culture and develops the infrastructure
- It gives the reprieve and entertainment to the people

Objectives of the Study

This research study has been basically directed to the following objectives:

1. To study the prospects of the various attractive spots in and around Mandu.
2. To identify the area of improvement needed for tourism.
3. To assess the existing infrastructure – basic and tourism related - for the circuits/destinations.
4. To study the socio-economic profile of local employees
5. To study the respondents opinion about the arm from different business and service activities
6. To study the problems faced by tourists

Research Methodology

The method of data collection is through survey. The questionnaire had questions of both open ended and close questions. In order to analyse the study and test the hypothesis, following statistical tools were used. From this structured data required information was extracted, analyzed, tabulated and illustrated with the help of statistical tools like factor analysis and discriminative analysis.

Mandu at a Glance:

Mandavgarh is situated at a distance of about 90 kms from Indore city of Madhya Pradesh. Popularly known as Mandu, the town is located amidst the Vindhya Ranges, at an elevation of 2000 feet above the sea level. It was originally founded in the 10th century by the Parmar rulers who made it their fort capital. Later, it was conquered by the Delhi Sultans, who named it as Shadiabad, meaning the "City of Joy". There are a host of historical monuments here which are constructed on the fusion of Hindu and Afghan style of architecture.

Mandavgarh is famous for its amazing Fort. The fort is 82 km in perimeter and is considered to be the biggest in India. It contains the ruins of palaces, ornamented canals, baths, pavilions etc. The fort was once the monsoons retreat of the Mughal emperors. Mandu has over 40 monuments which are divided into three broad categories: the Central Village Group, the Royal Enclave Group, and the Rewa Kund Group. The city is also famous for the legendary romantic tale of Rani Roopmati and Baz Bahadur which still haunts the place.

Champa Baodi - a well, the huge 15th-century Jami Masjid, the beautiful Jahaz Mahal (ship palace), Hindola Mahal or Swing Palace, the romantic Baz Bahadur's Palace, Roopmati's Pavilion and Hoshang Shah's Tomb are some of the unique gems of architecture and must see tourist spots of Mandu. It is believed that Emperor Shah Jahan took the inspiration of building Taj Mahal from the tomb of Hoshang Shah only. Mandu is an ideal place to be visited in the monsoons, when the weather is pleasant and surroundings blooming.

The mystical beauty of the monuments, amidst the sprawling lush green landscape and the purple sunset sky, paints the live picture of the bygone era. The effect is completed by the rich surroundings of mango, tamarind and banyan trees. The place is also famous for its 'Khusrani Imli', tamarind trees which bear fruits only in the rainy season and juicy custard apples. Mandu can be reached by taxi, available from Indore. You can buy beautiful Chanderi and Rewa [Maheshwari] saris here, as well as some medicinal herbs and local handicraft.

Some of the notable places at Mandu are The Darwazas/Gates, Jahaz Mehal/Ship Palace, Hindola Mahal, Hoshang Shah's Tomb, Jami Masjid, Reva kund, Roopmati's Pavilion and Baz Bahadur's Palace.

Economic Significance of Tourism

The tourism sector has a number of characteristics, which suggests that it can make a significant contribution to the economy of the country. It…

- generates hard currency in foreign exchange
- creates jobs
- generates tax revenues for government
- has an important impact on regional economic activity
- is attractive for small and medium sized enterprises and consequently can foster an enterprise economy
- has strong linkages to other sectors of the economy
- can bring economic benefits to local communities, and
- has considerable potential for expansion and increased value added.

Socio –Economic of Local Business Owners

profile of different type of Occupational employee's in terms of education, household income, occupation, age and sex have been analyzed.

Table 1: Socio-Economic Characteristics of Households/Heads

No	Characteristics	Dominant Indicators	Mean Value
1	Age	67.3% between 25 – 62 years	38.84
2	Gender	95% Males	-
3	Household Size	70.7% between 5 to above persons	8.7
4	Household Education Index	75.3% had formal education	3.8
5	Household Working Member	78% between 1-2 persons	2.7
6	Major Occupation	72.67% into Non-Farming	-
7	Experience	61.5% having 11 – 30 years	-
8	Household Debit Rs. per capita	55.67% persons Annual	6228.47

Source: Primary data.

Like gender profile of general employees, males are predominant group in the sample. There are about 85% male and 15% female respondents. As regards to age-structure, majority of employees falls in 24 to 65 years age group. When marital status was examined, more than 20% of employees were seen unmarried. This is not surprising since marrying a person with some form of disability is considered as problem. Further it suggests that this perception is comparatively more acute in Mandu. Household size of employees was considered, which suggests the household size of employees to be comparatively bigger, with proportion of 6 persons and above category shows it about 70% a measure of the relationship between total members in the household and number of employed ones in it. The dependency ratio is higher

among employees with over 100% reporting to have two or more dependants. However, those with no dependants in the household are nearly zero.

Table 2: Literacy Level of Respondents

Education	No. of Respondent	Percent
Illiterate	2	3.33%
Upto Secondary	8	13.33%
High school	27	45%
Higher Secondry	12	20%
graduate	5	8.33%
Other	6	10%

Literacy rate and its level among the respondents were compiled and placed in Table. Upon breaking it occupation-wise, it was found that in general, more than half of respondents in the sample possess high school or qualification above Higher Secondry qualification. However, proportion of such respondents is illiterate (3.3%). Further, rate of illiteracy among the respondents are insignificant but those upto secondary level comprise about 13 % of respondents.

Generally, proportion of vocational education is negligible in the sample, especially among employees. The Table further suggests that nearly one- fourth of local employees are found to be graduates.

Table 3 : Income Share among Households

no	Income	N	Mean	Std. Deviation
1	Hotel	5	30902.37	35637.89
2	Canteen	15	6334.04	3423.46
3	Guide	7	6260.12	4210.50
4	Small Shop	8	15331.22	14305.92
5	Tea Stall	5	6780.12	4320.10
6	Lodge	2	58009.77	38256.00
7	Driver	15	6228.4192	4866.5934
8	Other	3	38009.77	28256.00
9	Total	60	34210.00	7654.33

Source : Primary data.

Results are furnished in Table. It shows that the respondents with monthly income of upto Rs. 5000 comprises of 34% respondents. Those earning below Rs. 5001 to 10000/- per month have accounted for about 28%. Monthly income distribution of this nature across employees with disabilities perhaps may not be a general pattern in Indian context. To estimate monthly household income of employees, the responses were obtained first in respective currencies and then converted the same into Indian currency for ease of comparison. Accordingly, Table reveals that nearly half of them have monthly income of over one 15000 rupees. However, reading those figures calls for certain level of caution as it may not match the standard numbers of developed State. But, the figures are to be considered for the inbound tourists in general and not to attach to particular nationality. Attempts were made to asses the monthly income of the respondents.

Impact of Tourism on Civic Facilities:-

a. Pressure on Land

Providing various tourist facilities invariably cause pressure on land, e.g. use of extra land for accommodation and other infrastructure, like road parking etc. aerodromes. Building materials are often extracted from ecosystem, mostly from forests. Conversion of such extra land invariably hits three very important sectors – agriculture, dairy and forests.

b. Sewage Generation and Disposal.

Sewage planning of main tourist centres of Mandu is already grossly inadequate. The situation has worsened due to rapid growth of population and expansion of this town. Increasing tourism will certainly enhance the pressure on the existing systems.

c. Municipal Solid Waste Garbage Disposal.

Increase in tourist inflow will add considerable amount of solid waste, especially polybags garbage, etc. requiring more systematic disposal and awareness about necessity of category-wise segregation of garbage.

d. Road Transport.

As seen above, about 100% tourists arrive in Mandu by road, travelling within Mandu is even more by road, and within the town it is totally by road. The situation of traffic is already pathetic which is going to be even worse in future. NHDP (National Highway Development Programme) for widening, improvement and construction of roads in the state will boost tourism in Mandu also. More availability of buses will be helpful in reducing pollution as well as irritation of overcrowding and traffic jams.

e. Impact on Public Facilities.

Boost in tourism will also have extra pressure on other public facilities like medical,

sanitation, communication etc.

Socio Economic Impact of Tourism

The impacts arise when tourism brings about changes in value systems, behaviour and threatens indigenous identity. Changes often occur in community structure, family relationship, collective traditional life style, ceremonies and morality. Main negative impacts on social and cultural environment are – Loss of authenticity, adoption of tourists' behaviour pattern or Irritation due to tourist behaviour, Culture clashes, cultural erosion and disruption of traditional lifestyle. It also has some negative economic impacts as only a few get bulk of the financial benefits, and majority of the community are only marginally benefited. Any subsidy or favours extended to some private entrepreneurs for high cost infrastructures of tourism development is at the cost of more important activities of mass benefit. Influx of people from rural to urban areas causes social degradation, uncertainties of seasonal variations in income. There are also some possibilities of smuggling and anti-national activities.

Impact on Environment, Wildlife & Forest.

To cope up with the growth in tourism industry large scale constructions of roads, resorts, hotels, shops etc. are being taken up which cause adverse impacts like degradation of forests, soil erosion, fragmentation of wildlife habitats, encroachments, accidents etc. Also excessive vehicular traffic, more than carrying capacity of the Protected Area, and noisy conduct of tourists cause terrible disturbance to wildlife, especially in their breeding and feeding activity. It also results in pollution, fire hazards, trampling of new regeneration etc. within the protected area. The field staff gets deviated to the responsibilities of tourism management instead of protection duties. At times pathogens and exotic species also get introduced.

Tourism is considered to be a positive contribution to economy and employment. Tourist usually demands for main facilities – goods, services, accommodation, food transportation and entertainment. The paper has critically analyzed the movement and development of Economic and Employment tourism particularly tourism circumstances of Mandu. The tourism industry movement of Mandu is discussed to show its bright future, its target markets and market share. It is possible to say here that tourism has been pioneered and developed for many decades, hence, passing through many stages namely conventional tourism which sees tourism as an economic development tool, then mass tourism which focuses on only income of tourism and number of the visitors. Alternative tourism has taken

roles in Madhya Pradesh tourism industry as it has encountered environmental problems due to the lack of carrying capacity management.

However, in terms of challenging issues of Madhya Pradesh tourism marketing, it has found that Mandu is facing severe competition among surrounding areas like, insufficient tourism marketing incentives, vague branding and image of Madhya Pradesh, difficulties in proposing high quality tourism products for high yield tourists, ineffective tourism promotion through mass media and the misconception of consumer behaviour of Madhya Pradesh for domestic tourism marketing.

References:

1. Mechthild Kuellmer (2007), "**Economic Success of Tourism**" Submitted for the degree of Bachelor of Public Administration, University of Muenster/ University of Twente, Muenster, August 13th, 2007
2. Krishnaiah Pujari, (19191) "**Andhra Pradesh Tourism – A Swot Analisis**" Asian Journal of Research in Social Science & Humanities Vol.2 Issue 4, April 2012, ISSN 2249 7315
3. http://www.wttc.org
4. Barry, T. and Vernon. D. (1995). Inside Belize. Albuquerque. NM: Interhemispheric Resource Center Press.

Dr. Ambedkar's Perception on Caste System in India

Mrs. Usha Yadav
Assistant Professor Sociologly
SABVGACC Indore

Dr. Ambedkar role as a prominent constitution maker of India is quite well known. However, his views on religion, particularly his reasons for renouncing Hinduism, the religion of his birth, are not as widky known. Ambedkar who was born in an untouchable family carried on a relentless battle against untouchability throughout his adult life. In the last part of his life, he renounced Hinduism and become a buddist. What were his reasons for doing so?

Untouchability as at present practiced is the greatest blot on Hinduism. It is (with apologies to Sanatanists) against the Shastras. It is against the fundamental principles of humanity, it is against the dictates of reason that a man should, by mere reason of birth, be for ever regarded as an untouchable, even unapproachable and unseeable. These adjectives do not convey the full meaning of the thing itself. It is a crime for certain men, women and their children to touch, or to approach within stated distances, or to be seen by those who are called caste-Hindus. The tragedy is that millions of Hindus believe in this institution as if it was enjoined by the Hindu religion.Ambedkar has enumerated the evils of Hinduism in the following manner:

1. It has deprived moral life of freedom.
2. It has only emphasized conformity to commands.
3. The laws are unjust because they are not the same for one class as of another. Besides, the code is treated as final.

According to Ambedkar, "what is called religion by Hindus is nothing but a multitude of commands and prohibitions."

Overcoming numerous social and financial obstacles, Ambedkars become one of the first "untouchable" to obtain a college higher education in India as well as aboard too. Born into a poor untouchable community, ambedkar spent for his fight against the system of untouchable and the Indian caste system.

***Faculty (Social work), School of Social Science, Devi AhilyaVishwavidhalaya, Indore.**

Ambedkar's statement in 1935 at Yeola Conference is quite instructive in this regard. Ambedkar believed that the untouchables occupied a "weak and lowly status" only because they were a part of the Hindu society. When attempts to gain equal status and "ordinary rights as human beings" within the Hindu society started failing, Ambedkar thought it was essential to embrace a religion which will give "equal status, equal rights and fair treatment" to untouchables. He clearly said to his supporters "select only that religion in which you will get equal status, equal opportunity and equal treatment…"

Previous Research: Caste and Social Exclusion in India

There is a large amount of scholarly literature about caste ('jati') in India that spans disciplines ranging from history to sociology, and from anthropology to economics. There are spirited debates about whether caste is an ancient Indian institution, or largely an outgrowth of colonial rule; whether caste is primarily a religious and ritual phenomenon, or it has important economic functions or causes; whether it is a hold-over that is in decline in today's India, or is a meaningful feature of present-day social structure; whether castes are ordered hierarchically or are mainly horizontal groupings; whether caste is best conceptualised as a kind of familialism, or a pseudo-ethnicity, or an occupationally- based grouping, or a system of patronage [Overviews of this larger literature include Bayly 1999; Deshpande 2005; Dudley-Jenkins 2003; Mendelsohn and Vicziany 1998; Searle-Chatterjee and Sharma 1994; Srinivas 1996; Sharma 1999]. Akerlof (1984) and others have developed theories to explain why an economically irrational phenomenon such as caste discrimination might persist in a modern economy [cf Scoville 1991, 1996; Deshpande 2005]. Johdka (2002) and colleagues have shown that multiple identities (caste, religion, migrant status, gender) together affect patterns of employment and exclusion in Indian cities.

Darity and Deshpande (2003) have drawn parallels between dalits and disadvantaged groups in other countries. Thorat (2004) provides a compilation of data from Indian government surveys,contrasting dalits with higher caste Hindus on indicators such as earnings, unemployment, education and health. Thorat and Umakant(2004) compile articles that debate caste and discrimination against dalits, in the context of the United Nation's world conference against racism in Durban.

Current patterns of socio-economic inequality within nations are often intertwined with much older systems of stratification. In the United States, many descendants of enslaved Africans continue to face social and economic disadvantages. In Europe, the Roma and other semi-nomadic groups that pre-date modern nation states find themselves distrusted and socially excluded. In modern Japan and in South Korea, the descendants of

certain families who historically held "unclean" occupations remain a stigmatised group. In India and neighbouring countries, ancient systems of caste inequality endure; their modern manifestations severely constrict the lives and opportunities of lower caste citizens.

In most of these nations, groups at the bottom of the stratification order have either won or have been granted rights of equal citizenship. Nowadays, modern constitutions and legal codes outlaw the more violent or oppressive forms of social exclusion. In some countries, lawmakers have gone further to offer group-specific rights and privileges intended to redress past wrongs [Darity and Deshpande 2003]. Ironically, the existence of these rights and protections leads many persons in the social mainstream – those not from a stigmatised group – to conclude that discrimination is a thing of the past [Pager 2007].

The fact that certain social groups remain disproportionately poor, despite these legal safeguards, is often attributed to the group's low levels of education, or to their concentration in economically backward sectors. When continuing discrimination is acknowledged, it is frequently viewed as a fading survival from the past, an aberration that is antithetical to a modern capitalist economy. Consequently, advocates for stigmatised groups face an uphill battle in persuading their fellow citizens that discrimination remains a powerful ongoing force that explains the persistence of inequality even in modern sectors of society [Thorat et al 2005].

In India, caste and gender discrimination appear to become more pronounced with the advent of hereditary and authoritarian ruling dynasties, a powerful state bureaucracy, the growth of selective property rights, and the domination of Brahmins over the rural poor . But this process was neither linear nor always irreversible. As old ruling dynasties were overthrown, previously existing caste equations and Caste hierarchies were also challenged and modified.

Discrimination in the Modern World

While in India, caste continues to be an important category leading to grave social inequities, national origin and race have become important factors in how inequality is propagated in much of the modern world. Racial and national discrimination was at the core of how colonial rulers justified their exploitation of the colonies. The colonial system was unique in how human exploitation reached a level of intensity unseen in human history and enabled the creation of exploitative patterns across vast oceans and geographical territories. The legacy of this economic devastation lives on in how negative social practices from older eras continue to survive not only in India but in much of Africa and other colonized nations.

The legacy of colonialism also shows up in how there is no equal work for equal pay across nations. Even accounting for differences in purchasing power, the income and ability to consume for a doctor, engineer, skilled industrial worker or service worker in the US, Europe or Japan is often five to ten times greater than say in India or Bangladesh or Kenya or Indonesia.

While it is undeniable that the task of democratization of Indian society is incomplete, that caste and gender discrimination continue to cause grave harm, that Adivasis and Dalits still face all manner of trials and tribulations, and that all such social inequities need to be fought with continued vigor - India's social evils cannot be analyzed or eliminated in isolation of other necessary changes. It is important that the process of how social relations become shaped in a certain way be better understood. While battles for social equality need widespread support, their ultimate success may be determined as much by how India's economy develops.

All through human history, property-less classes have suffered social discrimination of one kind or another. Economic disparities remain a serious contributor to social inequities today. Any social system that is based on unequal access to economic assets - (whether they be land, raw materials, industrial or commercial wealth) will inevitably lead to some form of social discrimination and inequity. Victims of older forms of discrimination will either continue to be victimized, or simply become victims of new forms of discrimination.

For that reason, the challenge for countries like India is not only to fight against all instances of social discrimination, but to also struggle for greater economic equality - not only within India, but also in terms of India's equality with the rest of the world.

In May 1956, a talk by Ambedkar titled "Why I like Buddhism and how it is useful to the world in its present circumstances" was broadcast from the British Broadcasting Corporation, London. In his talk Ambedkar said: I prefer Buddhism because it gives three principles in combination, which no other religion does. Buddhism teaches prajna (understanding as against superstition and supernaturalism), karuna (love), and samata (equality). This is what man wants for a good and happy life. Neither god nor soul can save society.

In his last speech delivered in Bombay in May 24 1956, in which he declared his resolve to embrace Buddhism, Ambedkar observed: Hinduism believes in God. Buddhism has no God. Hinduism believes in soul. According to Buddhism, there is no soul. Hinduism believes in Chaturvarnya and the caste system. Buddhism has no place for the caste system and Chaturvarnya. .

It is obvious that Ambedkar regarded Buddhism as a much more rational religion compared to Hinduism, rather the most rational religion. His main objection to Hinduism was that it sanctified inequality and untouchability through its doctrine of Chaturvarnya. Buddhism, on the other hand, rejected Chaturvarnya and supported equality. He commends Buddhism for rejecting god and soul and for emphasizing morality. According to him, prajna (understanding as against superstition and supernaturalism), karuna (love), and samata (equality), which Buddhism alone teaches, is all that human beings need for a "good and happy life".

References:

1. **Hetukar Jha**, Social Structures of Indian Villages, A study of rural Bihar.
2. **K. Damodaran:** Indian Thought, A Critical Survey (Advent of Islam and Later Feudalism)
3. Economic and Political Weekly dated 13 October (2007)
4. **Zarina Bhatty:** "Social stratification among Muslims in India" - (from the book "Caste - its twentieth century avatar" by M N Srinivas, Viking, New Delhi, 1996, pp 249-253)
5. **Sandra Mackey:** The Caste/Class system in Iran (from The Iranians – Persia, Islam and the Soul of a Nation), Dutton Books published by the Penguin Groups, New York, 1996 pp. 34-35

EFFECTIVENESS OF THE INQUIRY APPROACH IN LEARNING HISTORY

Dr. Sushma Shukla
Guest Faculty
Shri Atal Bihari Vajpayee
Govt. Arts and Commerce College,
Indore (M.P)
email: sushmashukla18@gmail.com

Abstract

The objective of the paper is to find out the effectiveness of Inquiry Approach for achieving the objectives of learning History and compare the effectiveness of the Inquiry Approach with Conventional Textbook Approach in achieving the objectives of learning History. History cannot be considered as a finished product. It has both product and process parts. Each generation needs to study it afresh. It plays an important role in knowing the past better, as in the process many issues get clarified and concepts become clearer. Thus ultimately an acceptable picture emerges which may further be challenged or modified by later research. Moreover History should be visualized as the vehicle to train a child to think, reason, analyze and to articulate logically. Apart from being a subject, it should be treated as a concomitant to any subject involving analysis and reasoning.

Inquiry Approach, which strongly emerged from the proliferation of new social Studies project in the late sixties and early seventies, has been riding on a high crest in Social studies education. The Inquiry Approach, the heart of new social studies, involves three groups of objectives: attitudes and values, a mode of inquiry involving the development and testing of hypotheses, and a variety of knowledge objectives. In general sense, inquiry and discovery are interchangeably used in the literature.

KEYWORDS: Effectiveness, Inquiry Approach, Learning History

"To exist is to change, to change is to mature, and to mature is to advance and make progress. History is the barometer to record this progress of mankind." **(Ali, 1993)**

Inquiry Approach, which strongly emerged from the proliferation of new social Studies project in the late sixties and early seventies, has been riding on a high crest in Social studies education. Social Studies not only borrowed the concepts, generlisations and value concepts from the social sciences, but also methodology of it. As such, inquiry is viewed as a methodological framework of the new social studies(Tassel, 1986).

Inquiry has always been a part of education. It predates Socrates and his method of leading students to self-knowledge through aggressive questioning. Dewey's reform of the

educational system led to the first inquiry-based learning method in the United states. He advocated child-centered learning based on real world experiences. The Educational Policies Commission (1961) reacted on the central purpose of American Education and suggested that students needed to develop "Ten rational powers." These were: recalling and imagining; classifying and generalizing; comparing and evaluating; analyzing and synthesizing; and deducing and inferring. These are also some of the fundamentals of inquiry learning.

The Inquiry Approach, the heart of new social studies, involves three groups of objectives: attitudes and values, a mode of inquiry involving the development and testing of hypotheses, and a variety of knowledge objectives. In general sense, inquiry and discovery are interchangeably used in the literature. There are numerous interpretations of the inquiry or discovery approach. They range from a belief in total discovery in which the teacher acts as a stimulator and facilitator, to a directed discussion in which the discussion becomes more teacher oriented and the students receive cues regarding the path of inquiry being pursued(Fenton, 1967).

History cannot be considered as a finished product. It has both product and process parts. Each generation needs to study it afresh. It plays an important role in knowing the past better, as in the process many issues get clarified and concepts become clearer. Thus ultimately an acceptable picture emerges which may further be challenged or modified by later research. Moreover History should be visualized as the vehicle to train a child to think, reason, analyze and to articulate logically. Apart from being a subject, it should be treated as a concomitant to any subject involving analysis and reasoning.

The Present method of teaching History which depends much on lecture method, confining strictly to the prescribed text book, is being very much criticized. It is alleged that the lecture method followed by the teachers leads to the memorization of the facts alone by the teachers don't know how to make History teaching effective and interesting, in spite of the umpteen innovative and dynamic methods of teaching. The result is that the mental abilities of students which are required for scientific observation, classification, inquiry, reasoning, problem, solving etc. are completely neglected.

This research study reveals the new method of learning history like giving students opportunity to collect facts, analyses them and presents them with their views it will them to view History with a scientific perspective. These methods will inculcate a sense of inquiry in the minds of the children. The inquiry method makes the children self- reliant and self-realizing.

This Inquiry Approach replaces the monotonous with interesting and active teaching-learning process. But while reviewing the studies conducted in India, it is found that this area of Inquiry Approach in History subject is almost neglected so the researcher decided subject is almost neglected. So the researcher decided to study how Inquiry Approach makes develop mental abilities of students.

Objectives of The Study

1. To find out the effectiveness of Inquiry Approach for achieving the objectives of learning History.
2. To compare the effectiveness of the Inquiry Approach with Conventional Textbook Approach in achieving the objectives of learning History.

Inquiry- Based Learning

Inquiry has always been a part of education. Dewey's reform of the educational system led to the first inquiry – based learning methods in the United States. He advocated child –centered learning based on real world experience.

'Inquiry' is defined as a seeking for truth, information or knowledge by questioning. Individuals carry on the process of inquiry from the time they are born until they die. Inquiry is form of self-directed learning and follows the four basic stages defining self-directed learning. Students take more responsibility for:

- Determining what they need to learning
- Identifying resources and how best to learn from them.
- Using resources and reporting their learning.
- Assessing their progress in learning

Inquiry aims to build research skills in students. Teaching through "Inquiry" involves engaging students in the research process with instructor support learn discipline specific content, but in doing so, engage and refine their inquiry skills. An inquiry course:

- Begins with a general theme to act as a starting point or trigger for learning.
- Emphasizes asking good researchable questions on the theme, and coaches students in doing this.
- Builds library, interview, and web search skills along with the critical thinking skills necessary for thoughtful review of the information.
- Inquiry has revealed a number of characteristics, which the teacher should have in mind when using inquiry in the classroom:
- The classroom reflects an open atmosphere.

- The student is active in the learning process.
- The student participates fully.
- Inquiry involves higher levels of thinking.
- It often results in the development of new knowledge.
- Students practice systematic investigation.
- Inquiry is basically an inductive method.
- The processes (skills, attitudes, values) and the product (content) are both important to inquiry.

The difference between the Inquiry Approach and Conventional Textbook Approach

Table 1 outlines the major difference between Inquiry Approach and Conventional Textbook Approach

Table 1

Classification	Inquiry Approach	Conventional Textbook Approach
Objectives	• Development of new knowledge • Focuses on “Learning Things” • Emphasis on “How we come to know” • Preparation for life long learning	• Mastery of content • Focuses on “Learning about Things” • Information about ‘what is known’ • Preparation for the next grade level
Content	• To develop information processing and problem solving skills	• Assimilation of existing information
Lesson Plan	• Facilitated learning plans	• Used to organize the various steps in the learning process for the whole class approach
Method	• Student-centered	• Teacher-centered
Classrooms	• Open- system • Make use of resources beyond the classroom and school	• Closed-system • Limited use of resources within classroom or school
Use of technology	• Application of technology to enhanced learning	• Learning about technology
Role of teacher	• Facilitator of learning • Monitor • Advisor • Referrer • Counselor	• Dispenser of learning • Provider of information • Monitor • Disciplinarian

Input of the student	• Systematic investigation, critical thinking • High involvement • Higher level thinking	• Memory work • Low involvement • Low level thinking
Assessment	• Focused on determining the progress of skills development, attitudes and values	• Less emphasis on the development of skills, attitudes and values.

Inquiry – Implementation

In theory, research results indicate that inquiry, when administered properly can be beneficial to students and recommendations have been develop. Based on research in inquiry teaching, the following recommendations have been developed:

- Students are considered to be and treated as investigators.
- During the inquiry process, a problem, a situation, and a topic is explored.
- Students must make inductive use of the evidence.
- Evidence should be presented as raw and uninterrupted.
- All data should not be presented in a single chunk.
- The scope of the inquiry-based investigation often becomes increasingly larger.
- Content serves as both a vehicle and a goal.
- Inquiry or discovery teaching is concerned with content, concepts, and basic skills, thinking skills, feeling and values.
- Covering less material but covering it in greater depth encourage learning in higher order intellectual processes.
- Learning activities should be varied in order to appeal to a wide range of abilities and interest.
- Teachers need to provide activities, which focus on reasoning skill rather than recall.

Suggestions

Based on the finding of the study, the following suggestions are made to improve the implementation of the Inquiry Approach. The existing curricula will not be able to cope with the proposed Inquiry Approach. So the curricula has to be modified. Teachers should provide opportunities for individualized learning so that pupils can solve problems individually or in group. Teachers should develop awareness on this method of teaching and they should be informed to apply it in the classrooms. The teachers should be given an orientation to the new method of teaching i.e, Inquiry Approach. Book on the Inquiry Approach of teaching history are very limited. More reference books should be made available. In addition, Educational Institutes should be well equipped to practice this method. For this, overcrowding in the

classrooms should be avoided. This will help the teachers to give special attention to gifted and below average students. For better acquisition and retention of ideas the existing curriculum should be re-organized and suitable method should be adopted for evaluation.

The purpose of the study was mainly to compare the effectiveness of the Inquiry Approach with that of the Conventional Textbook Approach. The aim of the study can be broadened by comparing it with certain selected traditional methods like story telling method, Discussion method etc. The aim of the study can also be widened by finding out the subjects.

Generally speaking, the students are more interested, or more enthusiastic, or just more active in the inquiry process as they are generating more knowledge like a social scientist. Research evidence on inquiry as a method of teaching and learning History with respect to student's achievement is scant, fragmentary and inconclusive. Indubitably, more research is needed.

Work Cited

- Dris Coll. Amy (1992). Univcrsity/School District Reflection in Teacher Education: A collaborative Inquiry Approach (ERIC Document Reproduction Service [CD-ROM], No. ED 346100).
- Ebel, RX. (1991). Measuring Educational Achievement. Englewood Cliffs, N.J: Prentice Hall, Inc.
- Exline, Joe (1995). Inquiry based Learning: Explanations, /www.thirteen. Org/Fair, J and G. Kachaturoff (1988). " Teaching Thinking: Another Try". The Social Studies, 79,64-69.
- Fancctt.V and Hawke D.(1982).' Instructional practices', Social Studies in the 1980's, Irving Morrisset, ed. Alexandria, Virgina:National Science Foundation.
- Fenton, Edwin (1967). The new Socio/ Studies. New York : Holt, Rinchart and winston. lnc.
- IGNOU(2007) Perspective of Knowledge for Master of Education (M.A(Education)), New Delhi, IGNOU.
- IGNOU(2007) Different Types of studies in Educational Research for Master of Education (M.A(Education)), New Delhi, IGNOU
- IGNOU(2007) Research Design for Master of Education (M.A(Education)), New Delhi, IGNOU

- IGNOU(2007) Data Analysis and Interpretation for Master of Education (M.A(Education)), New Delhi, IGNOU
- IGNOU(2007) Research Reports and Application for Master of Education (M.A(Education)), New Delhi, IGNOU
- NCERT (2009)India and the Contemporary World for Ninth Standard, New Delhi.
- Thomas. Sally (1996). Enhancing student and Teacher Engagement in Literacy Learning: A Shared Inquiry Approach. (ERIC Document Reproduction Service [CD-ROM], No.ED 393078).
- Toma,J.Douglas (1997). Exploring a Typology for Classifying Inquirers and
- Inquiry into Paradigms. (ERIC Document Reproduction Service [CD-ROMl.No. EJ552401).

Archetypes in Panchtantra and in Aesop's Fables (A Comparative Study)

Dr. Renu Sinha
Asst. Prof in English
S.A.B.V.
Govt. Arts and Commerce College
Indore (M.P)

Abstract: There is a relationship between the present action and inherited past. Innate thoughts, feelings, instincts and memories reside in our subconscious. Its transference from one generation to another gives birth to rich cultural heritage of myths and folklores as reflected in Aesop's Fables and Panchtantra.

Key Words: Fables, animal characters, human archetypes, behavioral patterns, laws of society, Socio-political hierarchy.

The origin of the art of story-telling goes back to the fables in various cultures. In Greek, *Aesop's Fables* enjoyed an important place. Socrates whiled away his time in jail turning *Aesop's Fables* in verses. Aristotle had special interest in fables of Aesop. The writer of these fables, known as Aesop, lived probably from 620 to 560 B.C. Aesop was a slave who earned his freedom through his stories. In Sanskrit, animal fables are often a part of the epics *The Mahabharata* and also in the *Veda,* Shuka, or Kak or Garuda often speak and behave as the humans with dignity. A neat collection of fables if first found in the form of The *Panchtantra*. The text came into light through the German translation *Das Panchatantra by* Theodor Benfey in 19th century. It has a frame of story within story, the main frame indicating the (probable) name of the story teller, Archetypes in *Panchatantra* and in *Aesop's Fables*.

According to an assumption the maker of this text was Chanakya but there is no justification for such an assumption. The date of these stories is not certain but there are assumptions that either the Greek stories influenced the *Panchtantra* or vice versa. Both the texts yield some comparisons such as the animal characters representing human archetypes. The animals and birds exhibit common traits of human behavior. The pattern of socio-political hierarchy is elaborate in the beast characters. My endeavor here will be to offer a comparison between the two texts of different cultures and study the archetypes in the stories of both.

I must justify my use of the term 'archetype'. The first reason is that the fables are ancient and speak of: "Culturally elaborated representations of the contents of the deepest recess of the human psyche: the world of archtypes."1 At first there are some striking

similarities in both the collections of fables. Three stories are identical, in addition to that, the choice of animals and their characteristic features are also identical. Aesop's oriental source brings in camel and lion as characters and these fables have definitely played an important role in building certain images and moral frame work in the European culture. The prototypes in animal characters provide a framework of human behavior and also indicate the incorrect pattern with a reproof.

Panchtantra is divided into five parts, Mitrabhed, Mitrasamprapti, Kakolukiyam, Mandukarajamritfal-makar katha and Aparikshitkaram. The frame story is of a Brahmin Vishnusharma accepting the challenge of indoctrinating three uneducated princes. His method was illustrated "principals of policy and details of technique through fables and for the most part acted by animals, though completely human in motivation."2

Man-women as well animals and birds inhabit the world of story equally, so it is not always necessary to imagine that the animals represent humans allegorically, they sometimes co-exist and communicate with the world of humans. In a *vratkatha* I remember that a cow and bullock grieve and complain of the ill treatment of their master (who actually are their children of the previous birth), the master realizes his mistake and corrects it by providing good food and giving proper care to the animals. The message is usually a co existence of human –animal.

Kipling's *Jungle Book* is different as it presents the wild with its own behavioral patterns and laws of 'society'. Orwell's *Animal Farm* is a clear set up of a free human against the hegemony of any government. The governmental authority is there represented either by humans or animals resembling humans. The animals are victims and humans victimizers. The pigs who tyrannize other resemble the humans in the end. There is an obvious dichotomy between the domesticated animals and the beasts of the wild. Aesop's story of a hungry wolf and a tame dog illustrate the slavery verses freedom. The message is "It is better to starve hungry than to be a fat slave"3

That *Aesop's Fable* is also one of the earliest texts that appeared in print by Caxton also gives a hint to its importance in the civilization. These stories defined the relations of humans and also with nature as in the case of sour grapes, a bear does 'advise' a true friend or a boy crying 'wolf'. Sometimes it by becomes clear that the stories are more oriental by nature than western. The animals like lion and tiger might have been a part of natural surrounding for Aesop.

The first obvious prototypes are political in *Panchtantra*. There is a king, the lion, the fox, the minister and the other animals are subjects. In the first part Mitrabhed, the camel is a

victim in an otherwise an atmosphere with decorum. The camel is a person who has sought the protection of the king and therefore cannot be killed for eating. Other courtiers offer their lives to the hungry and starving king, who politely refuses to eat them. Inspired by this game, the camel offers his life, instantly he is killed and devoured. The camel is an outsider, an animal separated from his keepers and so prone to all the hazards. There is also the civilization based animals and those who have a separate set up in forest. In *Panchtantra* life of wild is not different from the pattern of domestic life of humans; they too have family, wife, and children and communicate with other animals with same courtesy. The human emotions and needs are transplanted in animals. The language of animals is also diplomatic in certain situations where courtly matters are displayed. There is little emotion for common people's miseries. There is an amount of wisdom that tells characters not to feel surprised at the sudden mishap or accident. The lion, the king is the mighty one but also vulnerable in the case of old age or rivalry of a mightier enemy. The cunning fox then is the aid of his master; he is the minister, a loyal scavenger who would protect his master in diversity.

Not with the might but with intellect a person survives. There is the clever rabbit that leads the tyrant lion to a well and instigates him to jump into it. The subject is no longer a helpless victim but retaliates with the use of intellect. The King is usually a brainless mighty lion who relies on the minister for many solutions. The fox is of course not always successful, the indigo colored fox gets killed after he responds to the call of his brothers. There is a pattern of foolish verses witty and cunning person. Animals have a world parallel to humans and sometimes here is a communication between the humans and animals as well. The tiger and the Brahmin converse and the tiger prove to be smarter. He tempts the greedy Brahmin to come and take a gold bend, kills and eats him as soon as the other comes closer. Stories without animals also suggest that a person from lower class has a certain command over the lives of upper class people as is the case with a sweeper and the King and his friend, a rich merchant. A weave marries a princess and so on.

Panchtantra has traditional Hindu beliefs in the characters of the son, the father and mother. There are characters of the son, the father and mother. There are prototypes of the Kings, the minister, the slave and the master. The frame of the story speaks of the son. A son is very important in Hindu tradition, no salvation is possible without the son who performs the final rites. And yet, crossing that axiom, the writer speaks of the curse in the form of uneducated, foolish sons. A proverb is cites for the purpose:

> Of Sons unborn, or dead, or fool,
> Unborn or dead will do;

They cause a little grief, no doubt;
But fools, a long life through.4

The writer has to fight a case against such parenthood in a cultured where any type of son is looked with gratification. He pronounces:

To what purpose can a cow
That brings no calf nor milk be bent?
Or why beget a son who prove
A dunce and disobedient? (*Panchtantra, 2)*

The mother is often considered responsible for giving birth to an invalid child, a daughter, a foolish or disobedient son. A woman, who gives birth to a block head, is no better than a barred woman. *Tenamba yadi sutini vada, vandhya Kidrashi bhavati?*(*Panchtantra,3*)

It is noteworthy that the mother of a great one is praised; similarly the ancient stories criticize when the son is unworthy. Let me quote a story of a Crab from Aesop:

The Crab and Its Mother

A crab said to her son, “Why do you walk so one-sided, my child?

It is far more becoming to go straight forwards.” The young Crab replied: “Quite true, dear Mother; and if you will show me the straight way, I will promise to walk in it.” The Mother tries in vain, and submitted without remonstrance to the reproof of her child.

Example is more powerful that precept.

The image of slave is also very obviously narrated in the stories. The servant of a king is a miserable man and lives a life like death. His life is worse than a dog since he has no independence. The slave’s condition is described to the princes so that they understand the plight of their servants and do not take hasty decisions on the faithful servants.

Five death-in-life sage Vyasa notes
With well-known epic swing:
The poor man, sick man, exile, fools,
And servant of a king.

Here the slave is the servant of a king, though treated as a friends, still a slave is a miserable creature.

The common phrase ‘a dog’s life has
A most persuasive ring:
But dogs can do the things they like;
A slave obeys his king.

Aesop' stories speak of slaves and slavery in a subtle manner. The story of the wolf and dog is very obvious:

The Dog and the Wolf

A gaunt Wolf was almost dead with hunger when he happened to meet a House-dog who was passing by. "Ah, Cousin," said the Dog.

"I knew how it would be; your irregular life will soon be the ruin of you. Why do you not work steadily as I do, and get your food regularly given to you?"

"I would have no objection," said the Wolf, "if I could only get a place."

"I will easily arrange that for you," said the dog; "come with me to my master and you shall share my work."

So the wolf and the dog went towards the town together. On the way there the Wolf noticed that the hair on a certain part of the Dog's neck was very much worn away, so he asked him how that had come about.

"Oh, it is nothing," said the Dog. "That I only the place where the collar is put on at night to keep me chained up; if chafes a bit, but one soon gets used to it,"

Is that all?" said the Wolf. "Then good-bye to you, Master Dog."

Better starve free than to be a fat slave.

Women in *Panchtantra* are sensuous and not dependable. They are considered cunning and not dependable. A story in Mitrabhed reveals woman as a person who would be chaste only when no chance crosses her. She would always get flattered and be ready to sleep with any young or old. Though the centrality of the male and secondary role of the woman is the problem with these primitive stories but do indicate a pattern underlying cultural consciousness. In the social pattern a wife is not a dependable person. The text *Panchatantra* is a book of the Political Science for Princes with little intellectual abilities. It is not a book of ethics but tells reality of life and teaches the practical side of life. One should not feel the shock if his wife is not loyal to him because she is by nature sensuous, seeks pleasures from outside the wedlock.

Honey in a woman's words,
Poison in her breast:
So, although you taste her lip, drub her on the chest.((*Panchtantra, 99*)

The story of mouse maiden has the message of social patterns of the time. The marriage at tender age is recommended because:

If she, unwed, unpurified,
Too long *within* the home abide,

She may no longer married be:
A miserable spinster she. (*Panchtantra, 99*)

The general pattern of social life gives a domestic pattern from which the modern society deviates. So it provides an axiom. Again there is an image of sacred life which the princes are supposed to recognize. An ideal wife also appears in the story of dove and a fowler. The dove kills self in order to proved food for a hungry guest. Grief-stricken hen dove also kills herself by offering herself to fire. An ideal couple and praise worthy but do not fit in very well in the otherwise practical rational attitude of the story teller.

In this way I have tried to use the theory of Archetype to study two ancient texts and examined the concepts of the father, mother-child, son, woman, master and the slave as reflected in the. Aesop's fables provide wisdom in general; *Panchtantra* has a color of politics to it. Both the text are created with the purpose of instruction, Aesop has more of ethical value and *Panchtantra* teaches of fair as well as unfair means to sustain life and power. The relation of father-mother, son, daughter, and wife master and slave are all viewed in a very objective manner. They are all men and women in certain social conditions. A prince has to respect his mother, try to be a worthy son of his father and never trust his wife. A daughter is someone who is to be dispatched as early as possible. A slave is always restless and unhappy and the master is never pleased with his services no matter how hard he tries. The reason why I use the word Archetype is that they are deeply ingrained in a culture and are not individual but prototypes.

Work Cited:

1- Archetypal Literary Criticism<Wikipedia free encyclopedia>p2
2- Panchtantra ed. By Damodar Dharmanand Kosambi. Mumbai, Nirnaysagar, 1940. Introduction.
3- *https//en.wikipedia.org/wiki/*Aesop's Fables
4- *The Panchatantra* Tr. Arthur Ryder. Bombay, Jaico, 1983.

Gender Issues in Mahesh Dattani's Tara

Dr. ALKA TOMAR
Asst. Prof. Dept. of English
Shri Atal Bihari Vajpayee
Govt. Arts and Commerce College
Indore (M.P.)

Mahesh Dattani is the foremost Indian English Playwright today. He has received the Prestigious Sahitya Academy Award for his contribution to English Drama. His significant plays are: Tara, On a Muggy Night in Mumbai, Where there is a will, Dance like a man, Bravely Fought the Queen and Final Solutions. His choice of theme is quite wide, encompassing the subjects like gender identity, homosexuality, human relationship and communalism. In this paper I would like to focus on Gender Issue as dealt in the drama 'Tara'. English Drama was lagging behind Poetry and Fiction because of lack of audience and stage facilities. Young writers like Mahesh Dattani has imparted vigor to drama by producing forceful plays like 'Tara', Dattani writes about mean, unhappy and ugly themes of life and his plays are meant for stage Production and have universal appeal.

In this play Tara, Dattani has highlighted the issue of gender discrimination. This discrimination is prevalent amongst the urban educated middle class families living in metropolitan cities like Bangalore and Mumbai. Dattani is a spokes-person of all marginalised group. In this play he has questioned the role of society that treats the children of same parent in two different ways.; The play seems to be inspired by Tennessee Williams play 'Glass Menagerie'. In 'Glass Menagerie' and 'Tara', father of the Protagonist comes from a middle class family and mother belongs to quite well off family. Just like Tennessee Chandan is too much attached to his sister. In the beginning of the Drama we find that Chandan is in London and has become a famous playwright under the assumed name of Dan. He remembers his childhood days and Tara, his sister who is no more in this world. Tara and Chandan are two sides of the same self rather than two separate entities. Dan writes Tara's story to rediscover the neglected half of himself, as a means of becoming whole.

The Play is about Siamese-twins, Tara and Chandan, Cojoined at birth. The twins must be separated successfully to survive. A decision needs to be taken on who shall have third leg. An unethical and powerful decision was taken by Bharati, the mother and her powerful grandfather which leaves Tara crippled for life. Dr. Thakkar was well aware that third leg would adhere better to the female half and yet becomes a party to the decision.

Mahesh Dattani admits in one of his interview to Lakshmi Subramanyam - "I see Tara as a play about the male self and female self. The male self being preferred".

Chandan, a living person can't forget the happy moments spent with his sister and gives vent to his resentment and anguish in the drama based on his sister's childhood. Tara nurtures a grudge against society. She seems to have some kind of aversion with the outside world and her world comprises only her parents and brother. Tara's attachment to her brother and the internal anguish is expressed in her conversation with her brother, Chandan, when she says: "May be we still are, like we've always been. Inseparable. The way we started life. Two live an one body, in one comfortable womb. Till we are forced out.... and separated."[1]

The play has successfully exposed typical Indian mindset which has from time immemorial preferred a boy child to a girl child. It is conspicuous that a decision by mother left Tara crippled for life. The surgery was carried out by Dr. Thakkar at the Queen Victoria Memorial Hospital at Bombay. The parents were warned of the odds against survival and in almost all the cases of such kind, one of the twin has always died by the age of four. Mrs. Bharati Patel experiences pricking of her conscience and throughout the play she tries to overcome the gilt by showing excessive concern for her. Her guilt is so intense that she agrees to donate her kidney to her daughter so that she can survive for some more years. As the play progresses we come across another character, Roopa.Bharati imposes her sense of regret on Roopa when she bribes her to be her daughter's companion and says to her -

"You can watch whatever you want! just be My Tara's friend."[2]

In this play Dattani has exposed the conventional Pattern which is being practiced in so called urban educated families that is the preference for something which is masculine. He has also unearthed the corruption prevalent in the bureaucratic society and at the same time the ethical deterioration of the medical profession. The play centres around the theme that how the physical separation manipulated by their mother and grand father to favour the boy (Chandan) over the girl (Tara) results in an emotional separation between the two cojoined twins. Tara's brother was favoured, Eventually Tara leads a life of paralysed child and dies away. Chandan experiences the guilt though no fault of her, eventually escapes to London, changes her name and at the end of the play opologizes to Tara in the most moving of all lives- "Forgive Tara. Forgive me, for making it my Traqedy'[3] Bharati suffers from pangs of guilt but patel has no compunction for being the party of wrong decision by his wife and father in Law. He tries to accommodate his son Chandan and plans out his education and

career. Bharati's father also shows his preference for Male child by leaving her property to Chandan and not a single penny to Tara. Patel's attitude are also of indifference towards Tara as he is a mute observer of everything thus tacitly subscribing to the ideology of patriarchal world. He blames his wife and father in Law in the damage done but his complicity in the whole operation can not be denied. Dattani has highlighted that attitude for a girl child is far from satisfactory. All the claims for women's emancipation and equality are being belied by the social fabric of out society.

Thus Dattani focuses on contemporary issue of gender discrimination in an urban family but like Bermard shaw he presents the problem but fails to provide any solution.

Dattani has successfully exposed existing patriarchal stereotypes of the Indian mind set. Tara is captivating that it makes use of a rather unlikely 'Freak' case to lay bare the injustices, in the conventional Indian family, meted out to a girl child, a play that comments on a society that treats the children differently. Bharati's role in surgical operation highlight the fact that women continue to be willing instruments in the vicious circle. But Tara shows amazing resistance and fights back against the injustice. She stands strong and does not perturb when people make fun of his physical disability. However educated and well off one is the situation of girl child is far from satisfactory and she always gets a treatment of

second class citizen in home as well as in outside world, This patriarchal mindset is responsible for rising graph of female infanticide.

Mahesh Dattani has symbolically and metaphorically presented harsh reality of woman having a secondary role in day to day affairs and major decisions affecting family life. Modern Society’s claim of being liberal and progressive are being belied. All the propaganda of equality between Male and female are sham. Bharati and Patel are soft instruments in the hands of social system which is incapable of getting rid of shackles and inhumerable chains being created and strengthened. Bharati is exceptionally conscious and becomes a soft target in our society which is incapable of maintaing harmony and balance and fails to provide due share to human being. A person is respected as a human being. She is discouraged openly, not withstanding her feeling in the matter. She is agonized after coming to know that injustice was perpetrated by her mother as she is a helpless instrument in the hands of social system which has invented new shackles for female inspite of all tall claims made by preudo egalitarian society. Economics and cultural factors have been responsible for the apathy towards girl child. All these factors combine to create a social system in which the

girl child have to live and die. Tara is victimized by so called advanced social system. Identity arises becomes a chain with which a female is filtered when the question of choice between male and female arises.

Work Cited

1. Dattani, Mahesh, Collected Plays, Penguine, New Delhi, 2000, P-325
2. 1 bid, P -387
3. 1 bid, P -380
4. Dhawan, R.K., Pant Tanu, The Pays of Mahesh Dattani, New Delhi, Prestige Books, 2005 PP -22-35
5. Barure, S.K., Siddiqiu , M.A. Somi, Re- Exploring Indian Drama in English, Jaipur, Vital, Publications, India PP. 42-49

Anita Nair's *Ladies Coupe*

Dr. Roshan Benjamin Khan
Professor, Department of English
S.A.B.V
Govt.Arts and Commerce College
Indore (M.P)

Abstract: *Ladies Coupe* deals with the inner and outer revolt of the female characters portrayed in the fiction written by Anita Nair. The emerging 'New Women' after colonial rule in India wants to live with dignity and equal rights. This novel is written in story narration style where the protagonist finds herself sharing in the common misery that beset the lives of women. The self of women is divided into compartments of expectations by the society as a daughter, mother, and wife. Gender equality and empowerment are only for namesakes. Nair's fiction through the stories of women travelling in a ladies coupe reveals the aspirations, inner demons of battered and abused personalities, and skills of maneuvering the art of balancing acts by women to live up day to day life that often brings them to a crossroad and leaves them with Hamlet's dilemma.

Key Words: journey for self-discovery, dilution in relationships, sterility of life, man-woman relationship, their inner fears, oppression and suppression faced in and outside home.

Gender equality and women empowerment are the issues which picked up momentum in India in the last three decades. There has been a shift, not only in the policy approaches but also in the ideology of women themselves. This 'New Woman' is self-reliant, emancipated and happy individual, who is sexually uninhibited, intelligent, confident and assertive. She lives with a heightened sense of dignity.

This 'new being' has been projected in the context of contemporary world as an individual with freedom of choices in the fictional works of many post-modern Indian writers. Through their fiction, they have successfully projected the urges, drams and desire of a woman, in particular the middle class housewife, who refuses to be bounded and suffocated by her surroundings. Indian writers like Kamala Markandaya, Shashi Deshpande, Anita Desai, Namita Gokhale, Anita Nair, through their fiction, has successfully and skillfully brought to the surface, these new women issues like dilution in relationships, pre-marital and extra-marital affairs, sterility of life, man-woman relationship, their inner fears, oppression and suppression faced in and outside home.

Anita Nair belongs to that species of genuine writers who have projected the journey of women with expertise and profundity in *Ladies Coupe*. This journey for self-discovery and realizing one's worth as individual includes stories of six women who meet in a ladies coupe. The title *Ladies Coupe*, itself is metaphorical to the journey of women from birth to death. It is a compartment reserved exclusively for women, which can be compared to their compact world, where they can share their smiles, their tears, their marital life, lovers and children, the most private and special moments of their lives without any worries of exposure, as all of them are strangers to each other and probably would never ever meet again. But the common stance in all of them is, they all are very strong and are in search of real meaning of life. The charm of the novel lies in the vivacious description and the ardor it produces. Clara nubile has rightly averted for the novel "It is a novel in which fiction merges with reality and where female voices are authentic. Indeed, it is gendered novel which gives hope and courage to all women" (Nubile, Clara, 2003) Out of these six women, Akhila is not only the protagonist, but also the 'central consciousness', through which the events come filtered to the readers. On her way to Kanyakumari, she meets these women who share their experience as women, one by one. However, Akhila is the narrator and her outlook is the superseding view of the novel.

Anita Nair presents her as a woman who doesn't allow the adversity to destroy her. She has enough in herself that fulfills her but still a void is there in her life and there is always a quest to fulfill that void. She is born in a conservative lower middle class family and is till unmarried at the age of 45, an age by when most of the women in India get settled with their husbands and children. She is a woman of deep understanding whose life has been taken out of her control after her father's untimely death. She bears the responsibility of the entire family as she is the eldest of all her siblings. Without any contempt she fulfills all her duties and the family accepts her very easily as the head of the family but only for their convenience as she is the only for their convenience as she is the only earning member. In one incident when she has to be out for work one day, her mother asks her to take permission from the younger brother. She feels dismayed because of the double-standards of her mother and family. Akhila's mother has been portrayed as very traditional and conservative woman who used to be completely devoted to her husband and considered him to be the superior most, because of her established thinking. She also tried to inculcate in Akhila all the good traits of a perfect wife ironically before her father's death. She says, "A good wife learns to put her husband's interests before anyone else's, even her father's. A good wife listened to her

husband and did as he said. There is no such thing as equal marriage, Amma said. It is best to accept that the wife is inferior to the husband."(*LC, 14*)

Being a modern woman Akhila feels sickened with her mother's conventional preaching. Even then she supports her family and sacrifices all her happiness and her own personal life, right from educating her brothers and marrying off her sisters. They all get settled in their lives, but turn a blind eye towards her desires. Not even her mother thinks about the welfare of her daughter and remains oblivious to the fact that she has made sacrifices so that her family prospers. The noble deed of prosperity done by her for her family adds to adversity in her life. Her mother never bothers for her to get married and have family. She feels imprisoned and trapped because of their indifferent attitude and sarcasm for her. This makes her a rebellion. She likes everything which is against narrow-minded Brahmin culture. She falls in love with a boy named Hari, who is much younger to her. They even share in intense physical relationship as well, which confirms Akhila's rebellion against the forced traditions on her. She tries to rediscover the pleasure of being a woman with him. But owing to the fear of societal pressure she decides to end her relationship with him. She feels suffocated and befriends Katherine, a Christian by religion who is considered as immoral by Brahmin community just because of their life-style whereas Akhila gets inspired only by her different and unconventional life-style. To give vent to her bolted emotion she starts consuming eggs which is against Brahmin food restrictions. Akhila tries to fight all the prejudices where gender related or caste related.

Karpagam, a childhood friend of Akhila, is projected as a very modern and unconventional woman. She lives a very modern and unconventional woman. She lives according to her wishes and instincts. Although she is widow, defies all norms to be followed by the widows and adorns herself with coloured clothes and jewellery. She criticizes all the ancient laws which snatch the freedom to live one's own life after husband's death and explodes, "Who made these laws anyway? Some man who couldn't bear the thought that in spite of his death, his wife continued to be attractive to other men."(*LC202*) One day, Akhila is suddenly flooded with desire to fine the 'real her'. All her life she has been continuously haunted by the question "Can a woman stay single and be happy, or does a woman need a man to feel complete?"(*LC 39*) When she decides to leave her family and live alone, her siblings do not approve that. They wonder why she is talking about her needs. She gets furious and wants to be "Nobody's daughter. Nobody's sister. Nobody's wife. Nobody's mother." (Nubile, Clara, 2003) In an impulsive moment she buys a one-way ticket for herself to Kanyakumari and in the compartment silently listens to the stories of other women, which

finally make Akhila to take her ultimate decision of her life, something only for herself. This work of fiction arises many taboo questions about the role of women in post-colonial India. They have been repressed, oppressed and humiliated by the society, their own families and their male counterparts. All the women in this work belongs different age groups, varied cultural and economic backgrounds representing different facets of life. This work of fiction can also be viewed in terms of collective women's psyche. This psyche is a product of female culture tooted in different classes, nationalities and races. It is as Elaine Showalter states, "collective experience within the culture whole, an experience that binds women writers to each other over time and space" (Showwalter,Elaine.New York.1985) Janaki Prabhakar, the oldest of them all is portrayed as an overprotected and fragile female. She herself says, "I am a woman who has always been looked after. First there was my father and my brothers; then my husband. When my husband is gone, there will be my son. Waiting to take off from where his father left. Women like me end up being fragile. Our men treat us like princesses. And because of that we look down upon women who are strong and who can cope by themselves."*(LC206-207)*

Married forty years, she has developed a 'friendly love' with her husband. Remaining stuck to the conventional role of women she calls home as the kingdom of women. She also talks about the time when even she has sudden disinterest in that same home but finally she's convinced that woman is a subordinate self and as her horizon expands, she needs man to complete her. This is the common desire amongst all women globally. Commenting on marriage Simone de Beauvoir rightly says, "There is a unanimous agreement that getting a husband-or in some case a Protector –is for her .Woman the most of undertakings…she will free herself from the parental home, from her mother's hold, she will open up her future not by active conquest but by delivering herself up, passive and docile, into the hands of new master…" (Beauvoir, Simone de.1983)

On the contrary fourteen years old Sheela, the youngest of them all proves to be the most sensitive individual. Her innocence as a child makes her conceive the incidents much more prudently without any prejudices. At this tender age of hers, she has realized the bitterness of gender discrimination. Issue of child abuse has alos been exposed where her friend's father tries to seduce her and very sensibly she decides never to go to her home afterwards. She shares a very strong bonding with her grandmother Ammumma who has always taught Sheela to be always herself before thinking of pleasing others. Amumma says, "You must not become one of those women who groom themselves to please others. The

only person you need to please is yourself. When you look into a mirror, your reflection should make you feel happy."(*LC 67-68*)

This is the modern day approach of educated and new woman who prefers their happiness and gratification of desires first. Sheela after her grandmother's death adorns her corpse by applying make-up, the way her grandmother would have loved to do. This is the perfect example of women networking between two different generations.

While sharing their experiences these women go back in virtual time machine and recollect their memories which gives them a better insight to their lives. Prabha Devi is although the daughter of a rich family but her father considered her a 'bloody nuisance' because of his preference for male child. Here is exposed the Indian mentality of gender discrimination. She gets married to a rich man Jagdish who gives her independence to do everything she loves. She is very beautiful and is conscious of her looks and sexuality and misuses the freedom given to her. Once she shocks her husband by telling him to use contraceptive as she did not want to get pregnant just then. There is a clash of modernity and tradition where she is caught in the vortex of these two lifestyles. Anita Nair very skillfully presents women's weaknesses through this character but always displaying a respect even for those weaknesses as they are present in both the genders. Akhila gets inspired by her the most in taking the definitive decision of her life. She tells Akhila not to give up to easily after hearing Janaki's story and the way she had led her life. She has been portrayed as the most confident and contented person. In a fit of weakness once Prabha Devi tries practicing her wiles on her husband's friend Promod but later is harassed when he comes to her home when she is alone there. She immediately realizes the blunder she has committed. And decides to become, "The women her mother had hoped she would be. With eyes forever downcast and busy hands; embroidering, pickling, dusting birthing babies, preserving order and bless in the confines of her home and all the while changing to herself: this is who I ought to be, this is the way to be happy."(*LC183-189*)She turns herself into a submissive, docile woman and stops caring for herself and denies her feminity, her life becomes monotonous and mechanical day by day. Eventually she takes up the hobby of swimming and triumphs over her innate timidity and gains 'peak experience'. Through this story of Prabha, the author very skillfully gives her observations no society. She never exaggerates the minds of women and they are presented as their real selves with all the weaknesses of mind and body.

Story of Margret Shanthi opens with a strong statement "God did not make Ebenezer Paulraj a fate man. I did. I, Margaret Shanthi, did it with the sole desire for revenge. To erode his self-esteem and shake the very foundations of this being."(*LC 96*). She very shrewdly

overcomes this situation. She silently attacks his self-esteem and ego. He had a good body which he flaunt everywhere he can. By using her culinary skills, she coaxes him to give up his diet conscious life style. He puts all his defenses down and open his taste fate all around his body and becomes a slow moving creature that cannot control even his school."Ebe slowly became a fat man. A quiet man. An easy man….Since I was the one to appease his appetite, he sought me more and more."(*LC134*) With the passage of time, all the reins are in her hold; she conceives and fulfills her desire of becoming mother by giving birth to a girl. Her story undoubtedly shows that there is incredible inner strength in every woman which she can exhibit at the right time.

The sixth passenger Marikolanthu is a low cast woman whose sufferings are the most tragic ones which would cause goose-bumps all over the body of the readers. She suffers all her life because of her gender and low caste. Her story is tight slap on the face of hypocrite society. At a very young age, she was eyed upon by her employer's relative Murugensan who later on forces himself upon her and makes a physical relationship with her. She feels completely broken and tries to wash away the bruises she had from the physical abuse. But the fruit of rape comes and she gives birth to a baby boy whom she hates as he reminds her of the cruelty she had suffered from. As a result she renounces her son Muthu and leaves him with a relative without any regret. Her sufferings do not end here. She then becomes the mistress of her employer and his wife both and cherishes their covert association by offering her body. But later one even they throw her out of their home. At this point of time when she needs money she sells her own son to his father (her rapist) Murugensan and feels that she has avenged him of his sin. This incident shows the extreme unreal and unimagined side of motherhood. Things take a sudden change with death of Murugensan. The body of Murugensan does not burn completely. Muthu is given the responsibility to take care of the corpse and ironically he completes the ritual by loading more logs to burn the body. Seeing this Mari is full of guilt and shame and accepts her son.

After listening to all these stories of different women in the coupe Akhila finds herself more determinant, more strong. She also realizes that there is not one perfect solution to her dilemma. No one can teach her how to lead her life but finds that for sure she had been doing it all wrong. All sacrifices and denial to self due to the 'lakshman rekha' drawn for women by the hypocrite society can never be the right way of surviving. Now she wanted everything for herself whether it is gratification of her physical desires or having family and children. She even establishes a sexual relationship with a stranger in a hotel room in Kanyakumari. She doesn't even bother to ask this stranger's name. She is now a reformed and transitional being.

This could also be concluded that Indian womanhood has undergone complete metamorphism. Woman today is open minded, mentally and emotionally more stable than ever before. Like the characters presented in the novel, in real life too women are striving to create a world a world which be all their in true sense, without any inhibitions and restrictions; where they can break free from conventional norms. This is just the beginnings of their new emancipated life.

Primary Source

Nair, Anita. Ladies Coupe. New Delhi. Penguin Publications. 2001.

Note: The name of the novel in the paper appears as ***LC***

Work Cited

Nubile, Clara. The Danger of Gender: Caste, class and gender in Contemporary Indian Women's writing. New Delhi. Sarup &Sons, 2003.74

Beauvoir,Simone De. The Second Sex. Harmond Worth: Penguin 1983.

Showwalter,Elaine. "Feminist Criticism in the Wilderness" in Modern Criticism and Theory. New York: Pantheon, 1985.

Amitav Ghosh- The Past master

Dr. Rajendra Kumar Bhevandia
Shri Atal Bhihari Vajpayee,
Govt. Arts & Commerce College, Indore M.P.
Devi Ahilya Vishwavidhyalaya Indore
M.- 09893610267
E-mail-rbhevandia@gmail.com

ABSTRACT

In my paper I will be dealing with some of the novels of Amitav Ghosh. I will focus to observe what the act of narration does to Time and Space. I will discuss briefly the historical reality in terms of Time and Space. The past is equally dependent on the present which determinse how we look at it. The mobility with which history traverses past and present is indeed due to the fluid pattern of time.

KEY WORDS :

Religious violence, modes of accommodation, repression, economic environment.

INTRODUCTION

Amitav Ghosh is one of the best known Indians writing in English today. He holds a place of singular distinction among the contemporary writers of fiction in English. As Dr. R.S. Pathak opines: " Amitav Ghosh is one of the brightest stars in the galaxy of the novelists who appeared in the 1980s. "

What makes his emergence so distinctive is the fact that he chose to illumine those areas of darkness which seemed to have lurked on the horizon of Indian writing in English since the very beginning. “The vigour and vitality of his narration is largely dependent on the fact that it is firmly embedded in the native soil". So far he has written five novels, one travelogue, and one reportage ; but this small oeuvre has ensured him international renown. His books include - "The Circle of Reason" published in 1986, "The Shadow Lines" published in 1988. "In an Antique Land" published in 1993. "The Calcutta Chromosome" published in 1996, "Dancing in Cambodia, At large in Burma" published in 1998, "Countdown" published in 1999. "The Glass Palace" published in July 2000 and his latest novel "The Hungry Tide" published in July2004. Amitav Ghosh contributes regularly to various international literary magazines and journals. Many of his works have been translated into French, Italian, German and Bengali. He is a winner of several national and international awards.

Amitav Ghosh was born in Calcutta in 1956 - several years after India's independence. His mother, a simple housewife, grew up in Calcutta and her memories were that of Mahatma Gandhi and his movements of non- violence and civil disobedience, and the trauma of partition in 1947. His father belonged to Chapra, Bihar. In 1942, one of the most tumultuous years in Indian history, he left home to join the British colonial army in India at the age of twenty one. The stories and events narrated to Ghosh in his childhood made an indelible impression on his mind. He graduated from St. Stephen's College, Delhi, and did his post graduation from the Delhi University. He received a scholarship for D.Phil in social anthropology which took him to the Oxford University. His anthropological studies and research took him to the villages of Egypt. He admits that his campus life and travels within and without the country contributed to his development as a creative writer. Presently he lives in Brooklyn, USA with his wife and children. His wife Deborah Baker is senior editor at Little Brown & Co. She is the biographer of Laura Riding.

Within a few months Ghosh started his second novel which he called " The Shadow Lines", a book that took him back in time to earlier memories of riots, once witnessed in childhood. Ghosh submits that this book is " not about any one event but about the meaning of such events and their effects on the individuals who live through them."

Ghosh's concept of history colours all his writings. His sense of historicity and the fictional framework renders history more lively and readable. Ghosh virtually bends his novels to the needs of history and they largely derive their shape and purpose from it. We observe both political and historical consciousness in his fiction. Amitav Ghosh describes himself as a traveller interested in men, places and scenery. He has the infallible eye of a travel writer. Journeys form real and important part of Ghosh's fictional landscape. His travels have contributed to his ability to move his characters in and out of their native settings with confidence and ease. "Traversing borders becomes almost an obsession with Ghosh. Men set up borders..........but Ghosh's the make it clear that these are mental constructs ....the lines on the maps are shadow lines." A journey becomes a metaphor in Ghosh's fiction; as the narrator in "The Shadow Lines" argues: "that a place does not merely exist, that it has to be invented in one's imagination." Travel is transformed from mere dislocation to a living quest. Journeys are meant to do away with borders; they are not mere quest but means to explore the ramifications of history, particularly history of human beings. Ghosh has said in one of his interviews - "I am a great believer in quest narratives. I think it is the best, the fundamental narrative. All the great narratives of literature are quest narratives - the Odyssey, the Ramayana. So I like the quest - the very idea itself - and writing about it. But unlike the

people who are on a quest and know what they are searching for, I do not think I necessarily do................It is always the journey, not the getting there."

Ghosh's novels are about narration. A novelist makes meaningful constructs to understand the meaning of the world. Story telling becomes a way of looking at the world and life at large. According to Bill Buford, the founder editor of Granta, Ghosh "is a natural story teller and one of the most exceptional talents of his generation." Ghosh makes unique experiments by combining various themes and techniques. He approaches human affairs from unconventional points of view like anthropology, sociology, history, psychology, medical science, and has been able to discover a considerable body of information that furnishes the basis for a provisional understanding of human beings. There is an Austen like austerity in Ghosh's approach. He does not venture into fields of which he has no first hand experience or at least imaginative grasp. He ignores those aspects which do not appeal to him or shape his consciousness. Ghosh is not interested in the world without. His centre of concentration is the world within - how it is affected by the outside world, and how it learns to come to terms with the world without.

Ghosh writes about a vanished era, but does not lose his claim of being a modern writer, because most of the situations, characters and passions that he deals with belong to no particular age or society. Infact Ghosh's writing is a part of the "multiple search for a new dimension of reality which could combine past and present." He has a healthy respect for the validity of emotions. He believes that emotions are shape and conditioned by economic environment, by class values and aspirations and above all by memory and nostalgia. Emotions are personalized but because they are conditioned by the process of history, geography, economics and sociology, they assume dimensions of universality.

Both the tragedy and vitality of his native land figure in Ghosh's sense of creativity. Making a comparison with the British and American writers who have a fear of emotions, Ghosh says, "with Indian writers, its just the opposite: there is a wish to connect with people emotionally." It is Ghosh's personal endeavor to make those connections stretch beyond the borders themselves. Unlike the contemporary Indian novelist who feels the immense weight of cultural baggage, Ghosh has found liberation by crossing borders. "I've never felt that my imagination was bound by India", says Ghosh, who claims inspiration from the peripatetic meditations of V.S. Naipaul who is also of Indian origin. “Naipaul’s beauty of phrase is unmatched in its sheer power” he says. He admits that it was Naipaul who made it seem important that as Indians we must reclaim the world – and that Ghosh has done sincerely and confidently. It is from Naipaul that Ghosh acquired his pellucid prose, the tone of

understatement and the irreplaceable word. He has the wanderlust of a Hemingway, travelling regularly for material.

The fifty Seven year old novelist defies categorization even after his seventh book. He has seamlessly shifted from genre to genre weaving into his work such diverse forms as culture, history, science, travel and reportage. As he admits in one of his interviews - " The issue of what novels are is not settled for me. What genre I write is not a question I ask myself. Writing for me is a process of becoming. When you are faced with the stark reality of the blank page in the morning, that is the time when the hammer meets the anvil. And there is no telling in which direction the sparks will fly." Over the years, though the sparks have flown in different directions and Ghosh believes that in his works there is a consistency of theme, if not form, we find in his works a consistent interest in science and the diaspora. Ghosh always believed in researching his material and writing. In fact he is the critic's novelist, and he has his own set of readers who are interested only in what lies between the covers of his books and not the hype and buzz that accompanies the launching of his books. He confesses that he himself is his ideal reader and " what kind of book I would like to read ? ....in a way, governs what I write." Ghosh is not a book a year person. Every detail and locale that he depicts is authentic and meticulously researched. "Modernism gave us an aestheticized version of the novel." he says. "I am not concerned with taking it to a point where it has no connection with the world around us." In fact it is the world around us that keeps Ghosh going. Ghosh is his own critic. "There is so much in my work which comes from life and experience. As long as my curiosity exists my material is inexhaustible." he proclaims optimistically.

REFERENCES

Primary Sources :

Fiction:

1. The Circle of Reason . Hamish Hamilton, London 1986.
2. The Shadow Lines . Ravi DayaL, New Delhi 1988.
3. In an Antique Land . Ravi Dayal,New Delhi 1993.
4. The Calcutta Chromosome . Ravi Dayal, New Delhi 1996.
5. The Glass Palace. Ravi Dayal, New Delhi and Harper Collins India, New Delhi 2000.

Personal Writings :

1. The Indian Story- Civil Lines -I. Ravi Dayal, New Delhi 1994.
2. The Ghost of Mrs. Gandhi - The New Yorker 15 July 1995.
3. "Winter in Calcutta," Noon in Calcutta Dutta Krishna and Andrew Robinson (ed) Great Britain : Viking 1992. (A short story translated from Bengali)

Secondary Sources :

1. Bhatnagar, M.K. (ed): Indian Writings in English Vol. I Atlantic Publishers New Delhi 1996.
2. Bhatnagar, M.K. (ed) : Indian Writings in English Vol. II Atlantic Publishers New Delhi 1996.
3. Bhatt, Indira & Indira Natyanandam (ed): The Fiction of Amitav Ghosh Creative Books New Delhi 2001.
4. Dwivedi, A.N.(ed) : Studies in Contemporary Indian Fiction in English . kitab Mahal, Allahabad.
5. Dhawan, R.K. (ed) : Indian Writing in the New Millennium IAES, New Delhi 2000.
6. Desai, S.K., M.K. Naik & G.S. Amur (ed) : Critical Essays on Indian Writing in English machmillon India, Madras.
7. Kirpal, Viney (ed) : The New Indian Novel in English - A Study of the 1980s. Allied Publishers New Delhi 1990.
8. Mukherjee Meenakshi - Realism and Reality Oxford University Press, New Delhi 1985.
9. Pathak, R.S. (ed)- Indian Fiction of the Nineties Creative Books, New Delhi 1997.
10. Sharma K.K. & B.K. Johri - The Partition in Indian English Novels Vimal Prakashan , Gaziabad 1984.

Journals :

1. The Indian Journal of English Studies.
   R.K. Dhawan (ed) IAES Delhi.
2. The Journal of Indian Writing in English
   S. Balarama Gupta (ed).
3. Indian Literature Vol .33 (1990).

बाल श्रमीको की समाजिक स्थिति का समिक्षात्मक अध्ययन

डॉ. संध्या गोयल
सहायक प्रध्यापक राजनीति विज्ञान
श्री अटल बिहारी वाजपेयी
शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय
इन्दौर (म.प्र.)

शाब्दीक अर्थ –

1. **बाल श्रमीक** – जो बच्चे किसी भी कार्य में लिप्त होते है वे बाल श्रमीक कहलाते है।
2. **सामाजिक स्थिति** – आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियॉ।
3. **सांस्कृतिक राष्ट्र** – भारत की हजारो वर्षो की परम्पराओं को आज भी यथावत अनुसरण किया जाना।
4. **कल्याण** – सम्पुर्ण समाज के समस्त निःशक्त और असहाय व्यक्तियों का व्यवस्थित और सर्वागीण विकास।

परिचय :–

भारत वर्ष प्राचीन सांस्कृतिक राष्ट्र है। कई बार विदेशी सत्ताओं ने हमारे राष्ट्र का शोषण किया, परंतु भारत अडिग रहा और नवीन संस्कृतियों को भी अपने में आत्मसात कर लिया। स्वतंत्रता उपरांत भारत वर्ष कई प्रकार की सामाजिक एवं अन्य प्रकार की समस्याओं से पीड़ित है, जिनमें कचरा बीनने वाले बच्चे, कारखानों में काम करने वाले बच्चे, होटलों में काम करने वाले बच्चे, निर्माण कार्यों में मजदूरी करने वाले बच्चे, घरों में साफ सफाई करने वाले बच्चे आदि की समस्याएँ भी इनमें से एक है। इन बाल श्रमिकों के विकास पर ध्यान नहीं दिया गया तो भारत का भविष्य पुनः अंधकार में डूब जाएगा।

बच्चों को विशेष देखभाल की जरूरत होती है। कारखानों व अन्य स्थानों पर काम करने वाले बच्चों के बारे में मौजूदा कानून है, उनका समुचित पालन नहीं किया जा रहा है। ऐसे कई क्षेत्र हैं जहां कोई कानूनी सुरक्षा है ही नहीं नतीजा यह होता है कि इन बच्चों को स्वास्थ्य पर तरह–तरह के खतरे मंडराते हैं।

खुरजा का बर्तन उद्योग लगभग 600 वर्ष पुराना है। खुरजा में मिट्टी के बर्तन के व्यवसाय में तकरीबन 20,000 लोग काम करते हैं, इनमे से 5000 बच्चे हैं। जिनकी उम्र 14

वर्ष से कम है, ये बच्चे व्यवसाय के हर चरण में काम करते हैं, चाहे कच्चे माल की तैयारी हो, साँचे बनाने का काम हो या बर्तनों को पकाने का। मिट्टी के बर्तन का उद्योग सेहत की दृष्टि से काफी खतरनाक है तथा इनमें बच्चों को काम देने पर प्रतिबंध है।

ताला उद्योग भी एक ऐसा जोखिम भरा उद्योग है, जहां बच्चों को काम पर लगाया जाता है। अलीगढ़ अपने पारंपरिक ताला उद्योग के लिए प्रसिद्ध हैं। तांबा उद्योग की शुरूआत डाक विभाग ने 1860 में की थी तथा उसके बाद यह फैल गया। इस उद्योग में 90,000 लोग कार्यरत हैं, जिनमें 10,000 बच्चे होगें। पीतल के बर्तन उद्योग की दो सबसे खतरनाक प्रक्रियाएँ ढलाई और पॉलिशिंग है और उन्हीं दो क्षेत्रों में सर्वाधिक बाल मजदूर है।

बाल श्रमिक कौन :–

बाल श्रमिकों की श्रेणी के अंतर्गत कौन आता है। इस विषय में मतभेद नहीं है। संविधान के अनुच्छेद 24 के अनुसार 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को किसी फैक्ट्री, खनन कार्य या किसी जोखिम भरे काम में नहीं लगाया जा सकता बाल मजदूरी अधिनियम 1986 के अनुसार वह बालक या बालिका जो 14 वर्ष से कम आयु का हो बच्चा कहलाएगा। जबकि भारतीय जनगणना आयोग के अनुसार काम का तात्पर्य है किसी आर्थिक उत्पादन क्रिया में प्रतियोगिता ।

अतः किसी उद्योग, खान, कारखाने आदि 14 वर्ष से कम आयु के मानसिक और शारीरिक श्रम करने वाले बच्चे श्रमिक कहलाते हैं। परंतु 5 वर्ष से कम आयु के बच्चे इतने बड़े नहीं होते हैं कि भुगतान या मुनाफे के लिए लाभदायक आर्थिक गतिविधियों में भाग ले सकें। इसलिए बाल श्रमिक 5–14 आयु वर्ग के आर्थिक गतिविधियों में भाग लेने वाले बच्चे होते हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ के बाल अधिकार पर संपन्न सम्मेलन में कहा गया है कि बच्चों के श्रम की वे परिस्थितियां जहां उनका कार्य बच्चे के स्वास्थ्य व मानसिक, शारीरिक, आध्यात्मिक या सामाजिक विकास पर प्राकृतिक प्रभाव न डालता हो। बाल श्रम की परिधि में नहीं आता।

भारत में स्थिति :–

राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के 32वें दौर के अनुसार भारत में बाल मजदूरों की अनुमानित संख्या 1.76 करोड़ थी।

ऑपरेशन रिसर्च ग्रुप ने 1914 में भारत में कामकाजी बच्चों की संख्या 4.45 करोड़ होने का अनुमान लगाया था।

सेंटर फॉर कन्सर्न ऑफ चाइल्ड लेबर के अनुसार हमारे देश में लगभग 10 करोड़ बाल श्रमिक हैं। 100 करोड़ आबादी वाले इस देश की लगभग आधी जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे निवास करने वाले 5–14 आयु वर्ग के बच्चों की संख्या लगभग 12–13 करोड़ है। इस प्रकार 10 करोड़ का आंकड़ा अतिश्योक्तिपूर्ण नहीं लगता है।

इंदौर में स्थिति :–

वर्तमान में इंदौर की जनसंख्या लगभग 28 लाख है जिनमें से 12400 बच्चे बाल श्रमिक है तथा इन 12,400 में से 3000 बच्चे कचरा बीनने का कार्य करते हैं अन्य बच्चे दूसरे प्रकार के धंधों में कार्य करते हैं। इन बच्चों की स्थिति बड़ी ही दयनीय होती है। ये बच्चे बहुत ही निराशा से भरे हुए हैं।

संवैधानिक या सरकारी प्रयास : –

बच्चों को बाल श्रम से बचाने के लिए हमारे संविधान में अनेक प्रावधान किये गये हैं। हमारे संविधान का अनुच्छेद (15) राज्य की महिलाओं और बच्चों को सुरक्षा के लिए विशिष्ट प्रावधान करने की शक्ति देता हैं।

अनुच्छेद (24) में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को कारखानों एवं अन्य जोखिमपूर्ण कार्य में नियोजन का प्रतिरोध किया गया है तथा अनुच्छेद (39) में ई–एक में आर्थिक आवश्यकताओं की वजह से किसी व्यक्ति से उसकी भावनाओं से परे तथा शैशवों तथा बालकों को शोषण से संरक्षित करने का स्पष्ट उल्लेख किया है। अनुच्छेद (45) में बालकों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराने का निर्देश राज्य सरकारों को दिया गया है।

भारतीय संसद ने बच्चों के बारे में एक राष्ट्रीय नीति (1972) स्वीकार की जिसमें घोषित किया कि बच्चों की उपेक्षा करना और शोषण से रक्षा की जाएगी और 14 वर्ष से कम का कोई भी बच्चा अनिश्चिता वाले व्यवसाय या भारी कार्य में नहीं लगाया जाएगा।

फैक्ट्री एक्ट 1948 किसी भी फैक्ट्री मे 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के रोजगार के बारे में निषेधात्मक व्यवस्थाएँ निर्देशित करता है।

खान एक्ट 1952, खानों में काम करने के लिए न्यूनतम आयु 15 वर्ष निर्धारित करता है। बागान श्रम एक्ट 1951, 12 वर्ष से कम आयु के बच्चों के चाय, काफी और रबर के बागानों में रोजगार निषेधित करता है।

ये तीनों एक्ट बच्चों के फैक्ट्री और बागानों में सायं 6 बजे के बाद काम करने को निषेधित करते हैं और उनकी सुरक्षा और उत्थान की व्यवस्था करते हैं।

बाल श्रमिक (निवारण और नियमितीकरण) अधिनियम 1986 बच्चों के उक्त व्यवसायों में प्रवेश पर रोक लगाते हैं और कुछ अन्य व्यवसाय प्रवेश की दशाओं का नियमितीकरण करते हैं।

1987 की राष्ट्रीय बाल श्रम नीति के अंतर्गत बाल श्रमिकों को शोषण से बचाने और उनकी शिक्षा, चिकित्सा, मनोरंजन तथा सामान्य विकास पर जोर देने की व्यवस्था की गई है।

बाल मजदूरी उन्मूलन प्राधिकरण की स्थापना सरकार द्वारा उठाए गए कदमों में एक सार्थक कदम कहा जा सकता है। यह प्राधिकरण बाल मजदूरी में विशेष रूप से जोखिम वाले व्यवसायों में कार्यरत बाल श्रमिक प्रथा मिटाने हेतु नीतियों एवं कार्यक्रमों का आयोजन करेगा। यह प्राधिकरण बच्चों की सुरक्षा हेतु कानून लागू करना, बच्चों को काम से हटाकर ऐसे विशेष स्कूलों में भेजा जाए जहां उन्हें अनौपचारिक शिक्षा एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण के साथ–साथ पोषक आहार और छात्रवृत्ति उपलब्ध हो, बाल मजदूरी प्रथा से मुक्त कराए गए बच्चों के अभिभावकों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने हेतु रोजगार प्रदान करना एवं उनकी आमदनी बढ़ना, उत्तम शिक्षा एवं पोषित आहार उपलब्ध कराकर नए बच्चों को बाल मजदूरी से रोकना विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में भी सरकार ने बाल श्रमिकों के उत्थान के लिए कई कार्यक्रम शुरू किये हैं। सरकार के अलावा कई गैर–सरकारी स्वैच्छिक संगठन भी इस दिशा में प्रयत्नशील रहे है।

व्यवसाय :–

स्लेट, पेंसिलों का निर्माण (इनकी पैंकिंग भी) बीड़ी उद्योग, खनिज उद्योग, निर्माण कार्य, कचरा बीनना, उत्पादों का निर्माण, होटलों में कीटनाशक, मैंगजीन वितरण, लिफाफा उद्योग, सीसा उद्योग, लोहा उद्योग आदि उद्योगों में बच्चे काम करते हैं।

कल्याणकारी परियोजनाएँ :–

अ) जयपुर (राजस्थान) में बहुमूल्य पत्थर पॉलिश उद्योग में कार्यरत बच्चों के कल्याण हेतु परियोजना।

ब) मंदसौर (मध्यप्रदेश) में स्लेट पेंसिल निर्माण उद्योग में कार्यरत बच्चों के कल्याण हेतु परियोजना।

स) मर्फापुर(मध्यप्रदेश) स्लेट उद्योग में कार्यरत बच्चों के कल्याण हेतु परियोजना।

द) शिवकाशी (तमिलनाडू) में माचिस एवं आतिशबाजी उद्योग में बच्चों के कल्याण हेतु परियोजना।

बाल श्रम :–

कानूनों एवं संवैधानिक प्रावधानों के बावजूद इस देश में बाल शोषण अबधित चल रहा हैं इस शताब्दी के अंत तक श्रमिकों की संख्या 10 करोड़ तक हो जाने की संभावना है। 1981 की जनगणना के अनुसार 1971 में 10.74 मिलियन से बढ़कर बाल श्रमिकों की संख्या 14.5 मिलियन हो गइ है। मार्च 1983 में यह संख्या 17.65 मिलियन थी तथा अनुवर्ती वर्षों में इस संख्या में कोई कमी नहीं आई।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की रिपोर्ट 1988 में इस तथ्य पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि भारत में विभिन्न कानूनों के बावजूद बाल श्रमिकों की संख्या बढ़ी है एवं इससे देश में 44 मिलियन से अधिक बाल श्रमिक हैं।

व्हिटले आयोग जिसे श्रम खोज समिति भी कहा जाता है ने बताया है कि कुछ स्थानों पर बच्चे समुचित योजनाओं अवकाश तथा साप्ताहिक छुट्टी के बिना केवल 12 पैसे की मजदूरी पर 10 से 12 घंटे तक कार्य करते हैं। उनमें नगरों में बच्चे लंबे समय तक काम पर लगाये जाते हैं तथा उन्हें कठोर शारीरिक दण्ड एवं घोर अनुशासनात्मक कार्यवाही का सामना करना पड़ता है। दक्षिणी एशिया बंधुआ बाल श्रमिक गोष्ठी जो दिल्ली में 1889 में आयोजित की गयी ने बंधुआ बच्चों की स्वतंत्रता हेतु एक रेखाचित्र तैयार किया था तथा सुझाव दिया कि कोई भी ऐसा कृत्य जो बाल दासता को जन्म देता है अथवा जारी रखता है, संगीन अपराध घोषित किया जाना चाहिए। बाल श्रम के प्रयोग पर संवैधानिक प्रतिबंध लगाया जाये, जहां कहीं पर भी ऐसी बाल दासता विद्यमान है उससे उन बच्चों को स्वतंत्र कराके बाल दासता को समाप्त किया जाये। सितम्बर 18 को बाल दासता दिवस घोषित किया जावे।

सुझाव

यहां इन बालकों की दशा में सुधार हेतु सुझाव दिये हैं यदि इन पर पूर्ण रूप से अमल किया गया एवं कार्यान्वित किया गया तो आशा है भविष्य में इन बच्चों की आर्थिक एवं सामाजिक दशा सुदृढ़ हो सकेगी। ये अपने व्यक्तित्व को पूर्ण विकसित कर सकेगें व राष्ट्र के विकास में काफी योगदान देते हुए सहयोग भी करेगें। इन सुविधाओं से केवल इन्हें ही लाभ नहीं, अपितु एक ऐसे आदर्श समाज का निर्माण होगा जो उन्हें उत्तम नागरिक बनने की शिक्षा भी देगा।

- सर्वप्रथम इन बच्चों को फ्री शिक्षा प्राप्त करने की सुविधा मिलनी चाहिए। जिससे कि वे अपने अवकाश के समय में कुछ शिक्षा अर्जित कर सके।
- जो बालक पढ़ने में विशेष रूचि रखते हो या विशेष योग्यता रखते हो उन्हें सरकार द्वारा सहायता मिलनी चाहिए।
- प्रारंभिक तथा माध्यमिक शिक्षा तक देश के बालकों को जिनकी उम्र 7 से 12 वर्ष तक की है। उनकी शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिए।
- गंदी बस्तियों में स्वास्थ्य जागरूकता कैम्प लगाये जाने चाहिए तथा बच्चों के स्कूलों में स्वास्थ्य शिक्षा पूर्ण रूपेण लागू करनी चाहिए।
- बच्चों के पालको का वेतन ज्यादा होना चाहिए जिससे कि ये बच्चे गरीबी से छुटकारा पा सके तथा स्वस्थ्य रह सके।
- देश में बेरोजगारी कम हो ताकि इनके पालक कार्य करे जिससे इन बच्चों को बाल श्रम से छुटकारा मिले तथा बच्चे अपनी जिन्दगी जी सकें।
- बच्चों के लिए समाज के लोगों को भी आगे आकर उनकी सहायता करनी चाहिए।
- सरकार की नीतियों और कार्यप्रणाली में सुधार की आवश्यकता है। जिससे बच्चों की स्थिति को सुधारा जा सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मालिक पी.एल. – इण्डस्ट्रीयल लॉ (लखनऊ एण्ड न्यू देहली–पी.एल.इस्टनी बुक कंपनी नाइन्टीनथ् एडीशन 1968
2. मुकर्खी, राधाकमल –लेबर एण्ड प्लानिंग (बम्बई, एशिया पब्लिकेशन हाउस, सेकेण्ड एडीशन 1964)
3. यंग, हुसैन पी. – फैक्ट फाइन्डिंग विद रूरल पीपुल्स (एफ.ए.ओ. पब्लिकेशन, 1955)

4. मौजर. सी.ए. – सर्वे मेथडस इन सोशल इन्वेस्टिगेशन (लंदन, दिनीयन एजुकेशन लि.)
5. आरोड़ा, ओमप्रकाश– श्रम समस्याएँ एवं समाज कल्याण (राम नगर–मेरठ, राजहंस प्रकाशन, चतुर्थ संस्करण,1998)

खेल – कुद और मानव सामाजिक विकास

डॉ. रितेश महाड़िक
कार्यक्रम प्रबंधक
टाटा सामाजिक विज्ञान संस्थान, (TISS)
मुम्बई

शाब्दीक अर्थ –

सामाजिक वयस्कता – सामाजिक रूप से वैचारिक और व्यवहारीक विकास।

यंत्रवत जीवन – मशिनो की भाती अपने जीवन को व्यतीत करना।

शारीरिक क्रियाए – खेल कुद के माध्यम से शारीरिक व्यायाम।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह अकेला जीवन नहीं व्यतीत कर सकता। वह दूसरे सम्बन्ध जोड़ता है क्योंकि प्रकृति ने उसे सामाजिक बनाया है, मानव का शिशु पूर्ण सामाजिक वयस्कता से विहीन पैदा होता है तथा दूसरो पर निर्भर करता है। तब विभिन्न संस्थाओ से वह समाजीकरण सीखता है। और समाज के अन्य सदस्यो से विमुक्त होता है, वयस्क होकर स्वतंत्र जीवन जीने लगता है।

आधुनिक जीवन में यंत्रवत जीवन और कंप्यूटरीकरण ने एक नये प्रकार के मानव को पैदा किया है, 21 वी भाताब्दी अंतरिक्ष और तकनीक की भीमकायता का युग है, जो गति, भाोर और तनाव पैदा करने वाले कारकों से परिपूर्ण है। हमारे समाज और आर्थिक व्यवस्था की मांग द्वारा पैदा किये गये चिन्ता व दबाव और बुद्धिवाद की ओर हमारा समर्पण विस्मयकारी है। भाहरी जीवन शैली ने कई तनावों को पैदा किया है। और ये मानवता के लिए विनाशकारी साबित होंगे।

आधुनिकता ने हमारे ऊपर प्रतिकूल प्रभाव डाले है। पर्यावरण प्रदूषण, संस्कृति का ह्रास, सामाजिक विघटन, धार्मिक असहि णुता आदि ने पारिस्थितिक एवं सामाजिक संतुलन को बिगाड़ दिया है। आज मानव अस्तित्व एवं समायोजन के संकट का सामना कर रहा है। इन संकटो पर विजय पाने के लिए व्यक्ति को साहस, निर्भीकता, भाारीरिक, मानसिक, सामाजिक और बौद्धिक रूप में मजबूत बनना होगा। खेल समूह वह समूह है जो व्यक्तियो में शारीरिक कार्यक्रमो द्वारा व्यापक्ता व भिन्नता लाकर सामाजिक दायित्वों को प्रभावी ढंग से निभाने में सहायता करते है।

समाज में मनुष्य द्वारा स्वयं अपने चारो ओर खड़ी की गई समस्याओं से बाहर निकलनें में खेल हमारी मदद करते है। समाज में खेलो के महत्व पर स्वामी विवेकानंद ने बल दिया है कि, '' भारत को आज भगवत गीता की नहीं बल्कि फुटबाल के मैंदान की जरूरत है।'' खेलो की न केवल वर्तमान बल्कि भविष्य में भी महान उपयोगिता है। खेंलो की आव यकता एवं महत्व पर बल देते हुए रोशयू ने कहा है, ''यह भारीर का ठोस गठन ही है जो मन का सही और निश्चित संचालन करता है।''

राष्ट्रएकता की दृष्टि से बच्चे के लिए मित्रो का समूह अथवा खेल समूह' एक महत्वपूर्ण प्राथमिक समूह है। परिवार के बाद वह अपने हमजोलियों एवं खेल के साथियो के सम्पर्क में आता है जो उसके हम उम्र होते है। ये लोग उसे अपनी परिस्थिति एवं वर्ग के मूल्यों से परिचित कराते है। खेल समूह में बच्चे खेल के नियमो का पालन करना सीखते है। उसमे नेतृत्व के गुण विकसित होते है वह खेल में हार और जीत होने पर परिस्थितियों से अनुकूलन करना भी सीखता है। खेल के दोरान ही वह पारस्परिक सहयोग, प्रतिस्पर्द्धा और स्वस्थ संघर्ष की भावनाएं भी ग्रहण करता है। समय आने पर बच्चा कानून और व्यवस्था का प्रतीक बन जाता है। जब कोई खेल के नियमों को तोड़ता है तो वह उसका विरोध करता है। तथा स्वयं नियमो का रक्षक बन जाता है।

खेल वर्तमान समय में राष्ट्र को एक करने वाला एक महत्वपूर्ण समूह है। आज का युवा दूसरो द्वारा अधिक निर्दे ात होता है। जबकि ग्रामीण एवं आदिम समाजो के लोग 'स्व–निर्देशित' या 'परम्परा–निर्देशित' होते है। अच्छे लड़के व लड़कियों को खेल के मैदान में अपना हूनर साबित करने का मौका दिया जाये । उनकी प्रतिभा को सवारा जाये। यदि बच्चो को अपने मन पसन्द खेल में हिस्सा लेने का मोका दिया जाए तो देश को तन्दरूस्त व सेहतमंद नागरिक मिलेंगे। खेलों में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति तो चैम्पियन नहीं बनेगा बल्कि वह बेहतर नागरिक जरूर बनेगा। जब लाखों की सख्या में लोग हिस्सा लेंगे तो उनमें से हजारो प्रतिभावान व्यक्ति मिल जाएंगे।

युवाओं में खेल भावना को प्रोत्साहित करना और जनता के लिए एक कार्यक्रम देना एवं एमच्योरिज्म के दर्शन को महत्व देना। राष्ट्रीय खेल समितियों को यहां ध्यान में रखना होगा कि वह खेलों के प्रदर्शन और नये रिकार्डो पर नहीं बल्कि एमच्योर खेलों के सामाजिक शिक्षा, सौंदर्य, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों पर ज्यादा ध्यान केन्द्रित करे।

खेल का अर्थ

खेल के अर्थ को हम दो अर्थो में समझ सकते है। पहले अर्थ में हम यह कह सकते है। कि व्यक्ति द्वारा किया गया बह भाारीरिक क्रिया कलाप , जेसे चलना , दोड़ना , साइकिल चलाना आदि क्रिया कलाप कही न कही खेलों से मानव को जोड़ते है। जो जब किसी नियम के तहत कि जाती है तब उन्हें हम खेल की संबा दे सकते है। परन्तु इन गतिविधियो का खेल के स्थापित नियमो , मान्य तरीको के दायरे से बाहर होने के कारण इन्हें खेल की परिभाषा में सम्मिलित नहीं किया जाता है।

दूसरे अर्थ के अनुसार हम खेल के अन्तर्गत उन भाारीरिक गतिविधियो को सम्मिलित करते है, जिने कुछ स्थापित व सार्वभोमिक नियम बनाए गये है। तथा उनके अनुसार ही सम्पूर्ण विश्व में सम्बन्धित खेल प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है। ये वे स्थापीत व सर्वमान्य नियम होते है। जो किसी मान्यता प्राप्त व वि वसनीय संस्था या संगठन द्वारा बनाए जाते है।

खेल व्यक्तिगत व सामूहिक होते है। जिनमे व्यक्ति अपनी भाारीरिक क्षमता , भाक्ती , मांसिक क्षमता आदि का प्रदर्शन कर खेल भावना का परिचय देते हुए अपने प्रतिद्वन्दी के साथ संघर्ष करता है।

परिभाषा :– Eitzen and sage (1978) defined as :-

"Comparative physical activity that is guided by established rules"

''खेल – कूद शिशु के विकास की प्रारम्भिक पर्तो के प्राकृतिक रूप से खोलता है। ''

–: फ्री बेल :–

'' खेल मस्तिष्क तथा भारीर के लिए ऐसा श्रम है जो कि हमें प्रसन्नता के उस मुकाम तक पहुॅचाता है जिनका कोई अन्त नहीं है। ''

–: पुस्किन :–

खेल और ज्ञान

लोगो की धारणा है कि जो विद्यार्थी खेलों में रूचि लेता है वह पढ़ाई में नहीं चलता। स्कूलों तथा कॉलेजो में भी खेल प्रतियोगिताओं में उन्हीं विद्यार्थियों को लिया जाता है जिनकी शैक्षणिक योग्यता कम होती है। ऐसे विद्यार्थी कभी – कभी खेलों में इतनी योग्यता प्राप्त कर लेते है। कि वह उच्च स्तर की प्रतियोगिताओं में भाग लेने के योग्य बन जाते हैं। खेलों में उत्तम तथा भौक्षणिक योग्यताओं में निम्न होने का यह अर्थ नहीं कि वह मन्द बुद्धि बालक हैं। कई विद्यार्थी विशयों को रट कर शैक्षणिक योग्यता प्राप्त करते हैं।

अतः यह धारणा पूर्णतः निराधार है कि खेल में रूचि लेने वाले विद्यार्थी भौक्षणिक रूप से अयोग्य होते हैं। सभी भाारीरिक एवं बौद्धिक क्रियाओ के लिए भारीर का स्वस्थ होना अति आव यक है। कहा गया है कि स्वस्थ तन में स्वस्थ मन का वास होता है। यदि भारीर स्वस्थ है तो विद्यार्थी की ग्रहण भाक्ति तीव्र होती है और यदि वह स्वस्थ नहीं है तो

उसकी ग्रहण भाक्ति कम होती है। खेलो द्वारा बच्चो को स्वस्थ रखा जा सकता है। इसलिये सभी स्कूलो एवं कॉलेजों में खेल को एक अनिवार्य विषय के रूप में मान्यता प्राप्त है। भाारीरिक स्वास्थ मानसिक विकास का आव यक चरण है और शारीरिक क्रियाओं द्वारा ही व्यक्ति अपनी बौद्धिकता को व्यक्त करता है।

गति बुद्धि का आधार होती है। मनौवैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया है कि मांसपेशियों के कार्य करने की कुशलता पर ही मस्तिष्क का कार्य निर्भर करता है। जितनी कुशल मांसपेशियां होंगी उतनी ही कुशलता से मस्तिष्क कार्य करेगा। खेलों का लक्ष्य ही गत्यात्मक विकास है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. जे. डब्ल्यू. लो जी. केन्यान : स्पोर्ट, कल्चर एंड सोसायटी, ए राडर आन द सोशोलोजी आफ स्पोर्टस, मैकमीलिन कम्पनी लंदन.1969 पे. न. 39
2. जगदीश बैंस जी ''स्पोर्ट, कल्चर एंड सोसायटी''हरीयाणा प्रीन्टीग प्रेस 1999 पेज. न. 20
3. जे.टी. तालमीया ''स्पोर्टस एंड सोसायटी'' कालिन्दी प्रकाशन 1997 पे.न. 65
4. जगतार सिंह गिल जी ''ए रीडर आन द सो ाोलोजी आफ स्पार्टस'' बारोवालिया पब्लिकेशन 1995 पेज. न. 34
5. अजमेर सिंह भाारीरिक शिक्षा व सामानय शिक्षा कल्याणी पब्लिशर्ज हरियाणा पेज. न. 80

"डिजिटल भारत कार्यक्रम – डिजिटल लॉकर एक सेवा"

संदीप टाँक
पी.एच.डी. शोधार्थी
म.गाँ.चि.ग्रा.वि.वि. चित्रकूट

परिचय

डिजिटल लॉकर डिजिटल इंडिया प्रोग्राम का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इस वेब सेवा के जरिये आप जन्म प्रमाण पत्र, पासपोर्ट, शैक्षणिक प्रमाण पत्र जैसे अहम दस्तावेजों को ऑनलाइन स्टोर कर सकते हैं। यह सुविधा पाने के लिए बस आपके पास आधार कार्ड होना चाहिए। आधार का नंबर फीड कर आप डिजीटल लॉकर अकाउंट खोल सकते हैं। इस सर्विस की सबसे खास बात यह है कि आप कहीं भी अपने दस्तावेज में डिजिटल लिंक पेस्ट कर दीजिये, अब आपको बार–बार कागजों का प्रयोग नहीं करना होगा। डिपार्टमेंट ऑफ इलेक्ट्रॉनिक्स एंड इंफॉर्मेशन टेक्नोलॉजी (डीईआईटीवाई) ने हाल ही में डिजिटल लॉकर का बीटा वर्जन लॉन्च किया है।

इसे बनाने के लिए आपको डिजिटल लॉकर पर लॉग इन करना होगा, उसके बाद आपको आईडी बनानी होगी। उसके बाद आपको आधार कार्ड नंबर लॉग इन कर दीजिये। उसके बाद आपसे जुड़े कुछ सवाल आपसे पूछे जायेंगे जिसके बाद आपका अकाउंट बन जायेगा और उसके बाद आप उसमें सारे निजी दस्तावेज डाउनलोड कर दीजिये, जो हमेशा के लिए उसमें लोड हो जायेगा। आपका लाग इन आईडी और पासवर्ड आपका अपना होगा जिसे आप कहीं भी खोल सकते हैं। सबसे बड़ा फायदा इस लॉकर के जरिये धोखाधड़ी नहीं हो सकती है और ना ही नकली दस्तावेजों का चक्कर होता है, यह पूरी तरह से नीट एंड क्लीन प्रोसेस है।

सरकार ने डिजिटल इंडिया मिशन के तहत सभी देशवासियों को डिजिटल लाकर उपलब्ध कराएगी जहां संबंधित व्यक्ति के सभी प्रमाण पत्र सुरक्षित रखे जाएंगे।

डिजिलॉकर – ऑनलाइन दस्तावेज भंडारण सुविधा

डिजिटल लॉकर डिजिटल भारत कार्यक्रम यह बाहरी वेबसाइट जो एक नई विंडो में खुलती है के तहत प्रमुख पहलों में से एक है। इसका एक बीटा संस्करण इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग (डीईआईटीवाई), भारत सरकार द्वारा जारी किया गया है। डिजिटल लॉकर का उद्देश्य भौतिक दस्तावेजों के उपयोग को कम करना और एजेंसियों के बीच में ई–दस्तावेजों के आदान–प्रदान को सक्षम करना है।

इस पोर्टल की मदद से ई–दस्तावेजों का आदान–प्रदान पंजीकृत कोष के माध्यम से किया जाएगा, जिससे ऑनलाइन दस्तावेजों की प्रामाणिकता सुनिश्चित होगी। आवेदक अपने इलेक्ट्रॉनिक दस्तावेजों को अपलोड कर सकते है और डिजिटल ई–साइन सुविधा का उपयोग कर उन पर हस्ताक्षर कर सकते हैं। इन डिजिटली हस्ताक्षरित दस्तावेजों को सरकारी संगठनों या अन्य संस्थाओं के साथ साझा किया जा सकता है।

डिजिटल लॉकर प्रणाली के उद्देश्य

• क्लाउड पर डिजिटल लॉकर प्रदान करने के द्वारा आवेदक का डिजिटल सशक्तिकरण

• दस्तावेजों को ई–हस्ताक्षर सक्षम बनाकर उन्हें इलेक्ट्रॉनिक एवं ऑनलाइन उपलब्ध बनाना जिससे भौतिक दस्तावेजों का उपयोग कम से कम हो।

• ई दस्तावेजों की प्रामाणिकता सुनिश्चित करके फर्जी दस्तावेजों के उपयोग को खत्म करना।

• वेब पोर्टल एवं मोबाइल अनुप्रयोग के माध्यम से नागरिकों को सरकार द्वारा जारी किए गए दस्तावेजों का सुरक्षित अभिगम प्रदान करना।

• सरकारी विभागों और एजेंसियों के प्रशासकीय उपरिव्यय को कम करना एवं नागरिकों के लिये सेवा प्राप्त करना आसान बनाना।

• नागरिकों हेतु दस्तावेजों के कभी भी– कहीं भी पहुंच प्रदान करना।

• ओपन और इंटरऑपरेबल मानकों पर आधारित संरचना प्रदान करना जिससे अच्छी तरह से संरचित मानक दस्तावेज के माध्यम से विभागों और एजेंसियों के बीच दस्तावेजों को आसानी से साझा किया जा सके।

• आवेदक के आंकड़ों लिए गोपनीयता और अधिकृत पहुँच सुनिश्चित करना।

डिजिटल लॉकर प्रणाली के घटक

• रिपोजिटरी ई दस्तावेजों का संग्रह है जो जारीकर्ता द्वारा एक मानक प्रारूप में अपलोड की गई और मानक एपीआई के द्वारा सुरक्षित तरीके से वास्तविक समय में खोज और उपयोग के लिये उपलब्ध है।

• एक्सेस गेटवे एक सुरक्षित ऑनलाइन तंत्र है जिससे अनुरोधकर्ता वास्तविक समय में यूआरआई (यूनिफॉर्म रिसोर्स संकेतक) का उपयोग करके प्राप्त कर सकते हैं। यूआरआई एक कोष में जारीकर्ता

द्वारा अपलोड की गई ई–दस्तावेज के लिए एक कड़ी है। यूआरआई के आधार पर गेटवे कोष का पता पहचान करेगा और उस कोष से ई–दस्तावेज को प्रस्तुत करेगा।

डिजिटल लॉकर क्या है

• प्रत्येक आवेदक के आधार से जुड़ा हुआ 10डठ का समर्पित व्यक्तिगत भंडारण स्पेस, जहॉ सुरक्षित रूप से ई–दस्तावेजों एवं यूआरआई लिंक को संग्रहित एवं एक्सेस किया जा सके।

• अनुरोधकर्ताओं के साथ सुरक्षित ई–दस्तावेजों की साझेदारी।

• वर्तमान में वेब पोर्टल के माध्यम से सुलभ, भविष्य में मोबाइल एप्लीकेशन के माध्यम से भी सुलभ कराया जाएगा।

• डिजिटल दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने के लिए इंटीग्रेटेड ई–साइन सेवा ।

डिजिटल लॉकर पोर्टल

• आधार संख्या का उपयोग कर डिजिटल लॉकर के लिए साइन अप करने के लिए digitallocker.gov.in – बाहरी वेबसाइट जो एक नई विंडो में खुलती है पर जाएँ।

• आवेदक डिजिटल लॉकर प्रणाली पर पंजीकृत जारीकर्ता और अनुरोधकर्ताओं की सूची देख सकते हैं।

डिजिटल लॉकर का उपयोग कैसे करें

आवेदक के लिए

डिजिटल लॉकर के लिए साइन अप करने के लिए आवेदक के पास आधार संख्या होनी चाहिए। डिजिटल लॉकर के लिए साइन अप करने से पहले यह आवश्यक है कि आपका मोबाइल नंबर यूआईडीएआई सिस्टम में आपकी आधार संख्या से जुड़ा हुआ हो।

लॉगिन क्षेत्र में अपना आधार संख्या दर्ज करें। यूआईडीएआई पर पंजीकृत मोबाइल नंबर पर ओ टी पी भेजा जाएगा। ओ टी पी दर्ज करने पर यूआईडीएआई से ई–केवाईसी की प्रक्रिया पूरी की जायेगी।

ई–केवाईसी सफल हो जाने पर, आवेदक विभिन्न जारीकर्ता द्वारा डिजिटल लॉकर में अपलोड किया गए दस्तावेजों की यूआरआई देख सकते हैं। आवेदक अपने डिजिटल लॉकर में ई–दस्तावेजों को अपलोड और उन्हें ई–साईन भी कर सकते हैं।

आवेदक अनुरोधकर्ता के ईमेल पते पर ई–दस्तावेज के लिए लिंक साझा करके निजी दस्तावेजों को साझा कर सकते हैं।

जारीकर्ताओं के लिए

आवेदक को आईडी प्राप्त करने के लिए डिजिटल लॉकर प्रणाली पर रजिस्टर करना होगा।

आवेदक को आईडी मिलने के बाद, जारीकर्ता रिपोजिटरी सेवा प्रदाता एपीआई का उपयोग कर नामित कोष में एक मानक एक्सएमएल फॉर्मेट में दस्तावेजों को अपलोड कर सकते हैं।

कोष में अपलोड किए गए प्रत्येक दस्तावेज के लिए आवेदक आईडी, दस्तावेज का प्रकार और यूनिक दस्तावेज आई डी होगा। दस्तावेज यूआरआई संबंधित निवासी की आधार संख्या के आधार पर उसके डिजिटल लॉकर में संधारित किया जाएगा।

अनुरोधकर्ताओं के लिए

अनुरोधकर्ता को डिजिटल लॉकर प्रणाली उपयोग करने के लिये पहले एक्सेस गेटवे पर रजिस्टर करना होगा।

अनुरोधकर्ता दस्तावेज यूआरआई का उपयोग कोष से एक्सेस गेटवे के माध्यम से दस्तावेजों को सुरक्षित रूप से प्राप्त करने के लिए कर सकते हैं।

ई–साईन सेवा

ई–साइन सेवा उत्पादन के पूर्व चरण में है और इसलिए इसका इस्तेमाल परीक्षण के उद्देश्य के लिए ही किया जा सकता है। ई–साइन की कानूनी वैधता का आश्वासन परीक्षण चरण के दौरान नहीं दिया गया है।

निष्कर्ष

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि भारत सरकार द्वारा संचालित डिजिटल लॉकर कार्यक्रम ई प्रणाली का एक महत्वपूर्ण भाग होकर प्रत्येक नागरिक को कम्प्यूटर से जोड़कर आधुनिक भारत के स्वप्न को साकार करने की दिशा में सकारात्मक पहल है। सरकार ने डिजिटल इंडिया मिशन के तहत सभी देशवासियों को डिजिटल लाकर उपलब्ध कराएगी जहां संबंधित व्यक्ति के सभी प्रमाण पत्र सुरक्षित रखे जाएंगे।

डिजिटल लॉकर प्रणाली क्या है, इसका उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है, इसके उद्देश्यों, घटकों तथा सरल कार्य प्रणाली के आधार पर जाना जा सकता है। यह सुविधाजनक होने के साथ साथ पूर्णतः वैद्य कार्यक्रम है। । सबसे बड़ा फायदा इस लॉकर के जरिये धोखाधड़ी नहीं हो सकती है और ना ही नकली दस्तावेजों का चक्कर होता है, यह पूरी तरह से नीट एंड क्लीन प्रोसेस है।

संदर्भ सूची

1. डिजिटल लॉकर डिजिटल भारत कार्यक्रम : विकासपीडिया (http://hi.vikaspedia.in/InDG)

2. विकीपीडिया : डिजिटल लॉकर (https://en.wikipedia.org/wiki/DigiLocker#References)

3. ''इण्डियन गवर्नमेंट लांचेस् ई–लॉकर सर्विस फोर डॉक्यूमेंटस्'' मिडियानामा : 13 फरवरी 2015।

4. नेहा अलावधी : '' डिजिटल इण्डिया प्रोग्राम : गवर्नमेंट रोलस् आउट बीटा वर्सन ऑफ डिजिटल लॉकर'' : द इकोनामिक्स टाईम्स, : 30 मई 2015।

5. '' डिजिटल लॉकर– आनलाईन डाक्यूमेन्ट स्टोरेज फेसेलिटी'' : नेशनल पोर्टल ऑफ इण्डिया : 30 मई 2015।

“डिजिटल इंडिया – एक सकारात्मक संकल्पना”

सोहन गुर्जर
पी.एच.डी. शोधार्थी
डॉ.बी.आर.ए.यू.एस.एस. महू

परिचय

जनता को सशक्त बनाने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी को शुरू करने के उद्देश्य से अनेक पहल की गई हैं। कुछ पहल के परिणामस्वरूप स्वास्थ्य, शिक्षा, श्रम और रोजगार तथा वाणिज्य आदि से संबंधित क्षेत्रों में विभिन्न सेवाओं का विस्तार हुआ है।

डिजिटल इंडिया की भारत को डिजिटल रूप से सशक्त समाज और ज्ञानपूर्ण अर्थव्यवस्था में परिवर्तित करने के लिए एक महत्वाकांक्षी कार्यक्रम के रूप में परिकल्पना की गई है। ज्ञानपूर्ण अर्थव्यवस्था बनाने के लिए और समस्त सरकार की समकालिक और समन्वित भागीदारी द्वारा प्रत्येक नागरिक के लिए सुशासन लाने के उद्देश्य से इस अकेले कार्यक्रम के अधीन विभिन्न पहलों को शामिल किया गया है।

कार्यक्रम की परिकल्पना व क्रियान्वयन

यह कार्यक्रम इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा विभिन्न केन्द्रीय मंत्रालयों, विभागों और राज्य सरकारों के सहयोग से तैयार और समन्वित किया गया है। प्रधानमंत्री डिजिटल इंडिया की निगरानी समिति के अध्यक्ष हैं। सभी वर्तमान और आगामी ई–शासन पहलों को डिजिटल इंडिया के सिद्धांतों के अनुसार संशोधित और पुनरू तैयार किया गया। डिजिटल इंडिया कार्यक्रम के विजन का उद्देश्य इलेक्ट्रॉनिक्स सेवाओं, उत्पादों, विनिर्माण और रोजगार के अवसरों आदि के क्षेत्रों का समग्र विकास करने का भी है।

डिजिटल इंडिया का विजन

डिजिटल इंडिया का विजन तीन मुख्य क्षेत्रों पर केन्द्रित है–

1. डिजिटल बुनियादी ढांचा प्रत्येक नागरिक की उपयोगिता के रूप में।
2. मांग पर शासन एवं सेवायें।
3. नागरिकों का डिजिटल सशक्तिकरण।

डिजिटल इंडिया कार्यक्रम का उद्देश्य

उपरोक्त विजन के साथ डिजिटल इंडिया कार्यक्रम का उद्देश्य ब्रॉडबैंड हाईवे, मोबाइल जुड़ाव के लिए वैश्विक पहुंच, सार्वजनिक इंटरनेट पहुंच कार्यक्रम, ई–शासन रू प्रौद्योगिकी के माध्यम से सरकार में सुधार, ई–क्रांति सेवाओं की इलेक्ट्रॉनिक आपूर्ति की जानकारी, इलेक्ट्रॉनिक्स विनिर्माण रू लक्ष्य शून्य आयात, रोजगार के लिए सूचना प्रौद्योगिकी और शीघ्र हार्वेस्ट कार्यक्रम उपलब्ध कराने का है। अनेक परियोजनायें उत्पाद या तो पहले ही लांच किये जा चुके है या लांच किये जाने के लिए तैयार है। जैसाकि नीचे दर्शाया गया है–

• डिजिटल लॉकर प्रणाली का उद्देश्य वस्तुगत दस्तावेजों के उपयोग को न्यूनतम करना और विभिन्न एजेंसियों में ई–दस्तावेज की हिस्सेदारी में समर्थ बनाना है। ई–दस्तावेज की हिस्सेदारी पंजीकृत संग्राहकों के माध्यम से की जाएगी, जिससे ऑनलाइन दस्तावेजों की प्रमाणिकता सुनिश्चित होगी।

• स्वच्छ भारत मिशन (एसबीएम) मोबाइल ऐप का उपयोग स्वच्छ भारत मिशन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए जनता और सरकारी संगठनों द्वारा किया जा सकेगा।

• ई–हस्ताक्षर ढांचे से नागरिक आधार प्रामाणिता उपयोग करते हुए ऑनलाइन दस्तावेजों पर डिजिटल रूप से हस्ताक्षर कर सकेंगे।

• ई–हॉस्पिटल एप्लीकेशन के अधीन ऑनलाइन रजिस्ट्रेशन सिस्टम (ओआरएस) शुरू किया गया है। यह एप्लीकेशन ऑनलाइन पंजीकरण, शुल्क और मिलने के निश्चित समय का भुगतान, ऑनलाइन निदान रिपोर्ट, ऑनलाइन रक्त की उपलब्धता की जानकारी जैसी मुख्य सेवायें उपलब्ध कराएगी।

• नेशनल स्कॉलरशिप पोर्टल से छात्रों के आवेदन पत्र जमा करने, सत्यापन, स्वीकृति और सभी लाभार्थियों को भारत सरकार द्वारा उपलब्ध कराई जा रही छात्रवृत्तियों के वितरण तक की प्रक्रिया का एक मुश्त समाधान हो सकेगा।

• इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग ने देश में व्यापक स्तर पर रिकॉर्ड को डिजिटाइज करने के लिए डिजिटाइज इंडिया प्लेटफॉर्म (डीआईपी) नामक एक पहल शुरू की गई है, जो नागरिकों को कुशल सेवायें प्रदान करेगी।

• भारत सरकार ने भारत नेट नामक एक पहल शुरू की है, जो देश की ढ़ाई लाख ग्राम पंचायतों को जोड़ने के लिए उच्च गति का डिजिटल हाईवे है।

• बीएसएनएल ने 30 साल पुराने एक्सचेंजों को हटाने के लिए नेस्ट जनरेशन नेटवर्क (एनजीएन) शुरू किया है, जो वॉयस, डाटा, मल्टीमीडियाध्वीडियो और अन्य सभी प्रकार की पैकेट स्विच संचार सेवाओं को नियंत्रित करने के लिए आईपी आधारित प्रौद्योगिकी है।

• बीएसएनएल ने पूरे देश में वाई–फाई, हॉटस्पोट्स की तैनाती की है। इससे उपयोगकर्ता अपने मोबाइल उपकरणों द्वारा बीएसएनएल वाई–फाई नेटवर्क का उपयोग कर सकता है।

• नागरिक सेवायें इलेक्ट्रॉनिक रूप से उपलब्ध कराने और नागरिकों तथा प्राधिकारियों की एक दूसरे के साथ बातचीत में सुधार लाने के लिए यह देशव्यापी जुड़ाव बहुत जरूरी है। सरकार ने इस जरूरत को महसूस किया है और यह डिजिटल इंडिया में ब्रॉडबैंड हाईवे को डिजिटल इंडिया का एक मुख्य स्तम्भ के रूप में शामिल करके दर्शाया गया है। देश के नागरिकों को सेवाओं की आपूर्ति में सहायता करने के लिए प्रौद्योगिकीको उपलब्ध कराने और समर्थ बनाने के लिए जुड़ाव एक मानदंड है।

• इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग ने ई–शासन में ई–क्रांति ढांचा, भारत सरकार के लिए ओपन सोर्स सॉफ्टवेयर अपनाने पर नीति, ई–शासन प्रणालियों में ओपन सोर्स सॉफ्टवेयर अपनाने के लिए ढांचा, भारत सरकार के लिए ओपन एप्लीकेशन प्रोग्रामिंग इंटरफेसेज (एपीआई) के लिए नीति, भारत सरकार की ई–मेल नीति, भारत सरकार की सूचना प्रौद्योगिकी संसाधनों के उपयोग पर नीति, सरकारी एप्लीकेशन के साधन कोड को खोलने के लिए सहयोगपूर्ण एप्लीकेशन विकास पर नीति,

कलाउड रेडी एप्लीकेशन के लिए एप्लीकेशन विकास एवं रि–इंजीनियरिंग दिशानिर्देश जैसी नीति पहल शुरू की हैं।

• विभिन्न पूर्वोत्तर राज्यों और अन्य राज्यों के छोटे और मुफस्सिल शहरों में बीपीओ केन्द्र खोलने के लिए बीपीओ नीति को मंजूरी दी गई है।

• इलेक्ट्रॉनिक्स विकास निधि (ईडीएफ) नीति का उद्देश्य नवाचार, अनुसंधान और विकास, उत्पाद और विकास को प्रोत्साहन देने उपक्रम निधियों के आत्मनिर्भर पारिस्थितिकी प्रणाली का सृजन करने के लिए देश में आईपी का संसाधन पूल स्थापित करना है।

• फिलेक्सिबल इलेक्ट्रॉनिक्स के उभरते हुये क्षेत्र में अनुसंधान और नवाचार को प्रोत्साहित करने के लिए फलेक्सिबल इलेक्ट्रॉनिक्स के लिए राष्ट्रीय केन्द्र एक पहल है।

• इंटरनेट ऑन थिंक्स (आईओटी) के लिए उत्कृष्टता केन्द्र इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी विभाग, ईआरएनईटी और नेस्सोकेम की संयुक्त पहल है।

2019 तक डिजिटल इंडिया के अनुमानित प्रभाव से सभी पंचायतों में ब्रॉडबैंड कनेक्टिविटी से लेकर स्कूलों और विश्वविद्यालयों में वाई–फाई और सार्वजनिक रूप से वाई–फाई हॉटस्पोर्ट उपलब्ध हो जाएंगे। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से इस कार्यक्रम से भारी संख्या में सूचना प्रौद्योगिकी, टेलीकॉम और इलेक्ट्रॉनिक्स रोजगार पैदा होंगे। इस कार्यक्रम की सफलता से भारत डिजिटल रूप से सशक्त बनेगा और स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, बैंकिंग जैसे क्षेत्रों से संबंधित सेवाओं की आपूर्ति में सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग में शीर्ष स्थान पर होगा।

इस कार्यक्रम की प्रमुखता

• डिजिटल इंडिया देश भर में इलेक्ट्रॉनिक गवर्नेंस और यूनिवर्सल फोन कनेक्टिविटी प्रदान करने के लिए एक बड़े पैमाने पर तकनीक विस्तार देने का काम करेगा। इसका एक उद्देश्य ऐसी प्रौद्योगिकी का निर्माण करना होगा, जो देश के डिजिटल डिवाइड की खाई को पाट सके।

• इसे भारत के भविष्य के बदलाव के रूप में पेश किया है। प्रधानमंत्री का मानना है कि पहले जिस प्रकार बच्चा पढ़ाई की नकल करने के लिए घर के किसी व्यक्ति का चश्मा लगाकर बैठ जाता था अब उसी तरीके से वह मोबाइल का उपयोग करेगा।

• अब ई गवर्नेंस को एम गवर्नेंस में बदलना है। एम गवर्नेंस का मतलब मोदी सरकार नहीं है बल्कि मोबाइल सरकार है। उन्होंने इस बात को समझाने की पूरी कोशिश की कि किस प्रकार यह हमारे लिए जरूरी है।

• इसका उद्देश्य 2020 तक भारत को टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने का है। इसके साथ ही वह 100 मिलियन रोजगार भी उत्पन्न किए जाएंगे।

• बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था और मोबाइल की गिरती हुईं कीमतों ने भारत को स्मार्टफोन का विश्व में एक बहुत बड़ा बाजार बना दिया है। अब तकनीक के माध्यम से इस बाजार का उपयोग शिक्षा और स्वास्थ्य क्षेत्र के लिए भी किया जाना है ।

ब्रॉडबैंड हाईवेरू डिजिटल इंडिया का प्रमुख स्तम्भ

ब्रॉडबैंड हाईवे एक काल्पनिक डिजिटल सड़क है, जिस पर हर प्रकार की सुविधाएं ई–गवरनेंस के माध्यम से मिलेंगी। नागरिक सेवायें इलेक्ट्रॉनिक रूप से उपलब्ध करायी जायेंगी और नागरिकों तथा प्राधिकारियों की एक दूसरे के साथ बातचीत कराने के लिये माध्यम बनाये जायेंगे। डिजिटल इंडिया में ब्रॉडबैंड हाईवे को डिजिटल इंडिया का एक मुख्य स्तम्भ के रूप में माना जा रहा है। देश के नागरिकों को सेवाओं की आपूर्ति में सहायता करने के लिए प्रौद्योगिकी को उपलब्ध कराने और समर्थ बनाने के लिए जुड़ाव एक मानदंड है यह।

देश को जोड़ेगा ब्रॉडबैंड हाईवे विभिन्न पूर्वोत्तर राज्यों और अन्य राज्यों के छोटे और मुफस्सिल शहरों में बीपीओ केन्द्र खोलने के लिए बीपीओ स्थापित किये जायेंगे। इलेक्ट्रॉनिक्स विकास निधि (ईडीएफ) नीति का उद्देश्य नवाचार, अनुसंधान और विकास, उत्पाद और विकास को प्रोत्साहन देने उपक्रम निधियों के आत्मनिर्भर पारिस्थितिकी प्रणाली का सृजन करने के लिए देश में आईपी का संसाधन पूल स्थापित किया जायेगा। फलेक्सिबल इलेक्ट्रॉनिक्स के उभरते हुये क्षेत्र में अनुसंधान और नवाचार को प्रोत्साहित करने के लिए फलेक्सिबल इलेक्ट्रॉनिक्स के लिए राष्ट्रीय केन्द्र बनाया जायेगा। इसके अंतर्गत् इंटरनेट ऑन थिंक्स (आईओटी) के लिए उत्कृष्टता केन्द्र इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी विभाग, ईआरएनईटी और नेस्सोकेम की संयुक्त पहल है।

2019 तक डिजिटल इंडिया के अनुमानित प्रभाव से सभी पंचायतों में ब्रॉडबैंड कनेक्टिविटी से जोड़ा जायेगा। कन्या कुमारी से लेकर श्रीनगर तक सभी स्कूलों और विश्वविद्यालयों में वाई–फाई और सार्वजनिक रूप से वाई–फाई हॉटस्पोर्ट उपलब्ध हो जाएंगे। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से इस कार्यक्रम से भारी संख्या में सूचना प्रौद्योगिकी, टेलीकॉम और इलेक्ट्रॉनिक्स रोजगार पैदा होंगे। इस ब्रॉडबैंड हाईवे के माध्यम से पूरा भारत डिजिटल रूप से सशक्त बनेगा। यह वो हाईवे है जो स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, बैंकिंग जैसे क्षेत्रों से संबंधित सेवाओं की आपूर्ति में सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग में शीर्ष स्थान पर ले जायेगा।

निष्कर्ष

अतः निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि भारत सरकार द्वारा संचालित डिजिटल इण्डिया कार्यक्रम ई प्रणाली का एक महत्वपूर्ण भाग होकर प्रत्येक नागरिक को कम्प्यूटर से जोड़कर आधुनिक भारत के स्वप्न को साकार करने की दिशा में सकारात्मक पहल है। इस कार्यक्रम की सफलता से भारत डिजिटल रूप से सशक्त बनेगा और स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, बैंकिंग जैसे क्षेत्रों से संबंधित सेवाओं की आपूर्ति में सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग में शीर्ष स्थान पर होगा।

संदर्भ :–

1. विकासपीडिया : डिजिटल इण्डिया (http://hi.vikaspedia.in/InDG)

2. विकिपीडिया : (https://en.wikipedia.org/wiki/Digital_India)

3. डी.एन.ए. वेबडेस्क (28 सितंबर 2015), ''हियर्स व्हॉट यू नीड टू नो अबाउट द डिजिटल इण्डिया इनिशिएटिव, मुंबई : डेली न्यूज एण्ड एनाल्यसिस।

4. ''जी.एस.टी. टू टेक केयर ऑफ मेनी ऑफ ई– कॉमर्स फर्म्स टेक्स इश्यूस् : आई. टी. मिनिस्टर'' 21 नवंबर 2014।

5. निदा नज़र (5 जुलाई 2015), ''इण्डिया लिडर्स मेप्स आउट अ मोर रोबस्ट डिजिटल फ्यूचर'', इ न्यूयार्क टाईम्स (06 जुलाई 2015)।

6. ''डिजिटल इण्डिया : ब्राडबेंड फायबर लेड इन 68,000 विलेज पंचायत'' सत्यमेव जयते 18 सितंबर 2015।

7. प्रोग्राम पिल्लर्स : गर्वनमेंट ऑफ इण्डिया।

8. ई. साईट्स – डिजिटल इण्डिया प्रोजेक्ट।

9. ई. साईट्स – डिजिटल इण्डिया।

''स्वच्छ भारत अभियान''

राजेश दांगी
पी,एच.डी शोधार्थी
इन्दौर स्कूल ऑफ सोशल वर्क
इन्दौर (म.प्र.)

परिचय :–

स्वच्छ भारत अभियान की शुरुआत सरकार द्वारा देश को स्वच्छता के प्रतीक के रुप में पेश करना है। स्वच्छ भारत का सपना महात्मा गाँधी के द्वारा देखा गया था जिसके संदर्भ में गाँधीजी ने कहा कि, "स्वच्छता स्वतंत्रता से ज्यादा जरुरी है" उनके अपने समय में वो देश की गरीबी और गंदगी से अच्छे से अवगत थे इसी वजह से उन्होंने अपने सपनों को पाने के लिये कई सारे प्रयास किये, लेकिन सफल नहीं हो सके। जैसा कि उन्होंने स्वच्छ भारत का सपना देखा था, उन्होंने कहा कि निर्मलता और स्वच्छता दोनों ही स्वस्थ और शांतिपूर्ण जीवन का अनिवार्य भाग है। लेकिन दुर्भाग्य से भारत आजादी के 67 साल बाद भी इन दोनों लक्ष्यों से काफी पीछे है। अगर आँकड़ो की बात करें तो केवल कुछ प्रतिशत लोगों के घरों में शौचालय है, इसीलिये भारत सरकार पूरी गंभीरता से बापू की इस सोच को हकीकत का रुप देने के लिये देश के सभी लोगों को इस मिशन से जोड़ने का प्रयास कर रही है जिससे विश्व भर में ये सफल हो सके।

इस मिशन को अपने प्रारंभ की तिथि से बापू की 150वीं पूण्यतिथि (2 अक्दूबर 2019) तक पूरा करने का लक्ष्य है। इस अभियान को सफल बनाने के लिये सरकार ने सभी लोगों से निवेदन किया कि वो अपने आसपास और दूसरी जगहों पर साल में सिर्फ 100 घंटे सफाई के लिये दें। इसको लागू करने के लिये बहुत सारी नीतियाँ और प्रक्रिया है जिसमें तीन चरण है, योजना चरण, कार्यान्वयन चरण, और निरंतरता चरण।

स्वच्छ भारत अभियान क्या है ?

स्वच्छ भारत अभियान एक राष्ट्रीय स्वच्छता मुहिम है जो भारत सरकार द्वारा स्थापित किया गया है, इसके तहत 4041 सांविधिक नगरों के सड़क, पैदल मार्ग और अन्य कई स्थल आते है। ये एक बड़ा आंदोलन है जिसके तहत भारत को 2019 तक पूर्णतरू स्वच्छ बनाना है। इसमें स्वस्थ और सुखी जीवन के लिये महात्मा गाँधी के स्वच्छ भारत के सपने को आगे बढ़ाया गया है। इस मिशन को 2 अक्टूबर 2014(145वीं जन्म दिवस) को बापू के जन्म दिवस के शुभ अवसर पर आरंभ किया गया है और 2 अक्टूबर 2019 (बापू के 150वीं जन्म दिवस) तक पूरा करने का लक्ष्य रखा गया है । भारत के शहरी विकास तथा पेयजल और स्वच्छता मंत्रालय के तहत इस अभियान को ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में लागू किया गया है।

इस मिशन का पहला स्वच्छता अभियान(25 सितंबर 2014) भारतीय प्रधानमंत्री द्वारा इसके पहले शुरु किया जा चुका था। इसका उद्देश्य सफाई व्यवस्था की समस्या का समाधान निकालना साथ ही सभी को स्वच्छता की सुविधा के निर्माण द्वारा पूरे भारत में बेहतर मल प्रबंधन करना है।

स्वच्छ भारत अभियान की जरुरत

अपने उद्देश्य की प्राप्ति तक भारत में इस मिशन की कार्यवाही निरंतर चलती रहनी चाहिये। भौतिक, मानसिक, सामाजिक और बौद्धिक कल्याण के लिये भारत के लोगों में इसका एहसास होना बेहद आवश्यक है। ये सही मायनों में भारत की सामाजिक स्थिति को बढ़ावा देने के लिये है जो हर तरफ स्वच्छता लाने से शुरु किया जा सकता है। यहाँ नीचे कुछ बिंदु उल्लिखित किये जा रहे है जो स्वच्छ भारत अभियान की आवश्यकता को दिखाते है।

• ये बेहद जरुरी है कि भारत के हर घर में शौचालय हो साथ ही खुले में शौच की प्रवृति को भी खत्म करने की आवश्यकता है।

• अस्वास्थ्यकर शौचालय को पानी से बहाने वाले शौचालयों से बदलने की आवश्यकता है।

• हाथ के द्वारा की जाने वाली साफ–सफाई की व्यवस्था का जड़ से खात्मा जरुरी है।

• नगर निगम के कचरे का पुनर्चक्रण और दुबारा इस्तेमाल, सुरक्षित समापन, वैज्ञानिक तरीके से मल प्रबंधन को लागू करना।

• खुद के स्वास्थ्य के प्रति भारत के लोगों की सोच और स्वाभाव में परिवर्तन लाना और स्वास्थ्यकर साफ–सफाई की प्रक्रियों का पालन करना।

• ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों में वैश्विक जागरुकता का निर्माण करने के लिये और सामान्य लोगों को स्वास्थ्य से जोड़ने के लिये।

• इसमें काम करने वाले लोगों को स्थानीय स्तर पर कचरे के निष्पादन का नियंत्रण करना, खाका तैयार करने के लिये मदद करना।

• पूरे भारत में साफ–सफाई की सुविधा को विकसित करने के लिये निजी क्षेत्रों की हिस्सेदारी बढ़ाना।

• भारत को स्वच्छ और हरियाली युक्त बनाना।

• ग्रामीण क्षेत्रों में जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाना।

• स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से समुदायों और पंचायती राज संस्थानों को निरंतर साफ–सफाई के प्रति जागरुक करना।

• वास्तव में बापू के सपनों को सच करने के लिये ये सब करना है।

शहरी क्षेत्रों में स्वच्छ भारत अभियान

शहरी क्षेत्रों में स्वच्छ भारत मिशन का लक्ष्य हर नगर में ठोस कचरा प्रबंधन सहित लगभग सभी 1.04 करोड़ घरों को 2.6 लाख सार्वजनिक शौचालय, 2.5 लाख सामुदायिक शौचालय उपलब्ध कराना है। सामुदायिक शौचालय के निर्माण की योजना रिहायशी इलाकों में की गई है जहाँ पर व्यक्तिगत घरेलू

शौचालय की उपलब्धता मुश्किल है इसी तरह सार्वजनिक शौचालय की प्राधिकृत स्थानों पर जैसे बस अड्डों, रेलवे स्टेशन, बाजार आदि जगहों पर। शहरी क्षेत्रों में स्वच्छता कार्यक्रम को पाँच वर्षों के अंदर 2019 तक पूरा करने की योजना है। इसमें ठोस कचरा प्रबंधन की लागत लगभग 7,366 करोड़ रुपये है, 1,828 करोड़ जन सामान्य को जागरुक करने के लिये है, 655 करोड़ रुपये सामुदायिक शौचालयों के लिये, 4,165 करोड़ निजी घरेलू शौचालयों के लिये आदि। वो कार्यक्रम जिन्हें पूरा करने का लक्ष्य रखा गया है–खुले में शौच की प्रवृति को जड़ से हटाना, अस्वाथ्यकर शौचालय को पानी से बहाने वाले शौचालयों में परिवर्तन, खुले हाथों से साफ–सफाई की प्रवृति को हटाना, लोगों की सोच में परिवर्तन लाना और ठोस कचरा प्रबंधन करना।

ग्रामीण स्वच्छ भारत मिशन

ग्रामीण स्वच्छ भारत मिशन एक ऐसा अभियान है जिसमें ग्रामीण भारत में स्वच्छता कार्यक्रम को अमल में लाना है। ग्रामीण क्षेत्रों को स्वच्छ बनाने के लिये 1999 में भारतीय सरकार द्वारा इससे पहले निर्मल भारत अभियान (जिसको पूर्ण स्वच्छता अभियान भी कहा जाता है) की स्थापना की गई थी लेकिन अब इसका पुर्नगठन स्वच्छ भारत अभियान(ग्रामीण) के रुप में किया गया है। इसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीणों को खुले में शौच करने की मजबूरी से रोकना है, इसके लिये सरकार ने 11 करोड़ 11 लाख शौचालयों के निर्माण के लिये एक लाख चौतिस हजार करोड़ की राशि खर्च करने की योजना बनाई है। ध्यान देने योग्य है कि सरकार ने कचरे को जैविक खाद् और इस्तेमाल करने लायक ऊर्जा में परिवर्तित करने की भी है। इसमें ग्राम पंचायत, जिला परिषद, और पंचायत समिती की अच्छी भागीदारी है। निम्नलिखित स्वच्छ भारत मिशन(ग्रामीण) का लक्ष्य हैरू

• ग्रामीण क्षेत्रों मे रह रहे लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाना।

• 2019 तक स्वच्छ भारत के लक्ष्य को पूरा करने के लिये ग्रामीण क्षेत्रों में साफ–सफाई के लिये लोगों को प्रेरित करना।

• जरुरी साफ–सफाई की सुविधाओं को निरंतर उपलब्ध कराने के लिये पंचायती राज संस्थान, समुदाय आदि को प्रेरित करते रहना चाहिये।

• ग्रामीण क्षेत्रों में ठोस और द्रव कचरा प्रबंधन पर खासतौर से ध्यान देना तथा उन्नत पर्यावरणीय साफ–सफाई व्यवस्था का विकास करना जो समुदायों द्वारा प्रबंधनीय हो।

• ग्रामीण क्षेत्रों में निरंतर साफ–सफाई और पारिस्थितिक सुरक्षा को प्रोत्साहित करना।

स्वच्छ भारत–स्वच्छ विद्यालय अभियान

ये अभियान केन्द्रिय मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा चलाया गया और इसका उद्देश्य भी स्कूलों में स्वच्छता लाना है। इस कार्यक्रम के तहत 25 सितंबर 2014 से 31 अक्टूबर 2014 तक केंद्रिय विद्यालय और नवोदय विद्यालय संगठन जहाँ कई सारे स्वच्छता क्रिया–कलाप आयोजित किये गए जैसे विद्यार्थियों द्वारा स्वच्छता के विभिन्न पहलूओं पर चर्चा, इससे संबंधित महात्मा गाँधी की शिक्षा, स्वच्छता और स्वाथ्य विज्ञान के विषय पर चर्चा, स्वच्छता क्रिया–कलाप(कक्षा में, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, मैदान,

बागीचा, किचन शेड दुकान, खानपान की जगह इत्यादि)। स्कूल क्षेत्र में सफाई, महान व्यक्तियों के योगदान पर भाषण, निबंध लेखन प्रतियोगिता, कला, फिल्म, चर्चा, चित्रकारी, तथा स्वाथ्य और स्वच्छता पर नाटक मंचन आदि। इसके अलावा सप्ताह में दो बार साफ–सफाई अभियान चलाया जाना जिसमें शिक्षक, विद्यार्थी, और माता–पिता सभी हिस्सा लेंगे।

निष्कर्ष

इस तरह हम कह सकते है कि 2019 तक भारत को स्वच्छ और हरा–भरा बनाने के लिये स्वच्छ भारत अभियान एक स्वागत योग्य कदम है। जैसा कि हम सभी ने कहावत में सुना है श्स्वच्छता भगवान की ओर अगला कदम हैश। हम विश्वास के साथ कह सकते है कि अगर भारत की जनता द्वारा प्रभावी रुप से इसका अनुसरण किया गया तो आने वाले चंद वर्षों में स्वच्छ भारत अभियान से पूरा देश भगवान का निवास स्थल सा बन जाएगा। चूँकि स्वच्छता से ईश्वर का गर्मजोशी से स्वागत शुरु हो चुका है तो हमें भी अपने जीवन में स्वच्छता को जारी रख उनको बनाये रखने की आवश्यकता है, एक स्वस्थ्य देश और स्वस्थ्य समाज को जरुरत है कि उसके नागरिक स्वस्थ्य रहें तथा हर व्यवसाय में स्वच्छ हो।

संदर्भ सूची :–

1. विकासपीडिया (http://hi.vikaspedia.in/InDG)

2. विकीपीडिया : (https://en.wikipedia.org/wiki/Swachh_Bharat_Abhiyan)

3. ''स्वच्छ भारत केम्पेन शुड बिकम मास मुवमेंट : नरेन्द्र मोदी'' : द इकोनॉमिक टाईम्स, 02 अक्टुबर 2014।

4. ''स्वच्छ भारत अभियान : पी.एम. नरेन्द्र मोदी टू विल्ड ब्रूम टू गिव इण्डिया ए न्यू इमेज''द टाईम्स ऑफ इण्डिया, 02 अक्टुबर 2014।

5. http://indiatoday.intoday.in/story/open-defecation-persists-despite-80-lakh-new-toilets/1/458483.html

6. ''स्वच्छ भारत गोज़ हाईटेक गर्वनमेंट टू ट्रेक टायलेट यूज़ विथ आई पेड्स'' द हिन्दू : 31 दिसंबर 2014।